CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ओशो रजनीश

रजनीश ध्यान योग

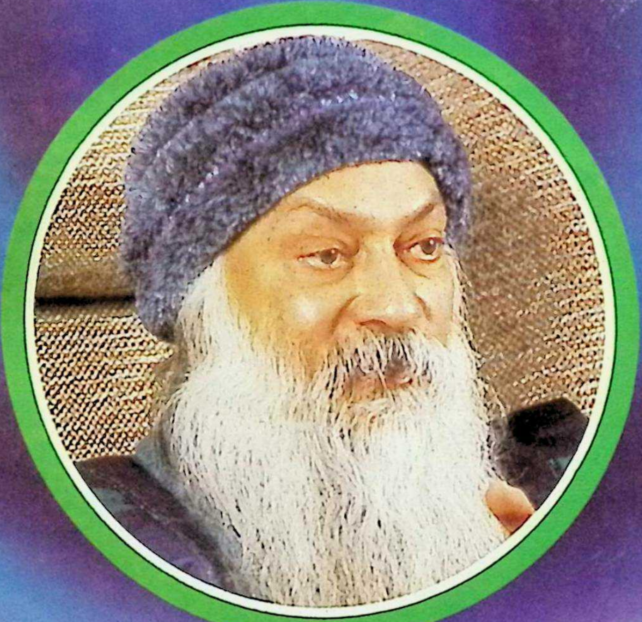

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

OSHO BOOKS
PUBLISHED BY
DIAMOND POCKET BOOKS

Bauls : The Dancing Mystics
Bauls : The Seekers of the Path
Bauls : The Mystics of Celebraation
Bauls : The Singing Mystics
Eternal Celebration
The Greatest Gamble
Here & Now
Towards the Unknown
A Song Without Words
Inner Harmony
Sing, Dance, Rejoice
Secret of Disciplehood
Freedom from the Mind
Life A Song, A Dance
Laughter is my Message
Meeting the Ultimate
A Taste of the Divine
One Earth One Humanity
The Master is a Mirror
Rising in Love
The Forgotten Language of the Heart
The Alchemy of Enlightenment
From Ignorance to Innocence
The Mystery Beyond Mind
The Centre of the Cyclone
Be Oceanic
Ecstasy : The Language of Existence
Fly Without Wings
Vedanta : An Art of Dying
Vedanta : The First Star in The Evening
Vedanta : The Supreme Knowledge
Vedanta : The Ultimate Truth
On War & Peace
Meditation The Ultimate Adventure
Love and Meditation
Be Silent & Know
Turning in
The way of the white clouds
The cessation of Mind
The Birth of Being
Tantra Vision : The Secret of The Inner Experience
Tantra Vision : An invitation to Silence
Tantra Vision : Beyond The Barriers of Wisdom
Tantra Vision : The Door to Nirvana

DIAMOND POCKET BOOKS (P) LTD.
2715, Darya Ganj, New Delhi-110002

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ओशो रजनीश

ओशो रजनीश परम दुर्लभ घटना हैं अस्तित्व की।

बुद्धत्व की उपलब्धि में सदियों-सदियों, जन्मों-जन्मों का एक तूफान शांत होता है—परम समाधान को प्राप्त है और अस्तित्व उसमें नये रंग लेता है। अस्तित्व का परम सौन्दर्य उसमें खिलता है, श्रेष्ठतम पुष्प विकसित होते हैं और अस्तित्वगत ऊंचाई का एक परम शिखर-एक नया गौरीशंकर-वहाँ उस व्यक्ति की परम शून्यता में निर्मित हो उठता है। ऐसा व्यक्ति अपने स्वभाव के अंतिम बिन्दु में स्थित हो जाता है, जहाँ से बुद्ध के भीतर का बुद्ध बोल उठता है, कृष्ण के भीतर का कृष्ण बोल उठता है, क्राइस्ट के भीतर का क्राइस्ट बोल उठता है, पतंजलि के भीतर का पतंजलि बोल उठता है; लाओत्से के भीतर का लाओत्से बोल उठता है और लाखों-लाखों और तूफान परम समाधान की दिशा में मार्गदर्शन पाते हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ओशो का अलौकिक साहित्य

भारत के जलते प्रश्न
धर्म और राजनीति
स्वर्णिम भारत
प्रेम है द्वार सत्य का
दिया बलै अगम का
शून्यता है महामुक्ति
मुक्त गगन के पंछी
जीवन संगीत
सतगुर मिलै त उबरै
सबद भया उजियाला
हंसै खेलै न करे मन भंग
सहजै रहिबा
अनहद बाजे बांसुरी
भीतर का दीया
सतगुरु एक दर्पण
उपनिषद-शून्य संवाद
एकमात्र उपाय : जागो
क्रान्ति सूत्र : साक्षीं भाव
इक साधे सब सधै
भारत एक अनूठी संपदा
गीता : मनोविज्ञान का परम शास्त्र
गीता : कृष्ण का योग विज्ञान
गीता : विज्ञान, कला, अध्यात्म
गीता : समस्त योगों का सार
संभोग से समाधि की ओर-I
संभोग से समाधि की ओर-II
संभोग से समाधि की ओर-III
संभोग से समाधि की ओर-IV
परम प्रेम रूपा भक्ति
भक्ति : विराट का अनुभव
भक्ति : शून्य की झील में प्रेम का कमल
भक्ति : निराकार से एकाकार
भक्ति : जीवन रूपांतरण की कला
दिया अमृत पाया जहर
रजनीश ध्यान योग
कुंडलिनी और तंत्र
कुंडलिनी और सात शरीर
कुंडलिनी जागरण और शक्तिपात
कुंडलिनी यात्रा
साक्षी कृष्ण और रासलीला
कृष्ण : साधना रहित सिद्धि
कृष्ण और हंसता हुआ धर्म
ऐसी भक्ति करै रैदासा
दरिया झूठ सो झूठ है
जात हमारी ब्रह्म है
सुखिया सब संसार
दुखिया दास कबीर
जित देखूं तित तूं
जोतहिं जोति समानी
बोलै शेख फरीद
सत भाषै रैदास
क्या मेरा क्या तेरा
मन लगा यार फकीरी में
कृष्ण गुरू भी सखा भी
कृष्ण : जिज्ञासा खोज उपलब्धि
शिव साधना
शिव दर्शन
निरगुन का बिसराम
लिखा लिखी की है नहीं
गुरू गोविन्द दोउ खड़े
हीरा पायो गांठ गठियायो
मेरे तो गिरधर गोपाल
राम नाम रस पीजै
राम नाम निज औषधि
दादू सहजै देखिए
नहीं जोग नहीं जाप
तेरा साईं तुज्झ में
एक ओंकार सतनाम
आपुई गई हिराय

डायमंड पाकेट बुक्स

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ओशो रजनीश

रजनीश ध्यान योग

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

संकलन : मा अमृत साधना, मा कृष्ण प्रिया
संपादन : स्वामी नरेन्द्र बोधिसत्व
प्रकाशक : डायमण्ड पाकेट बुक्स, प्रा० लि०
X-30, ओखला इण्डस्ट्रियल एरिया, फेज-2,
नयी दिल्ली-110 020
सस्करण : 1995
मूल्य पच्चीस रुपए
कापीराइट : सर्वाधिकार सुरक्षित, साधना फाउंडेशन, पूना

इस पुस्तक अथवा इस पुस्तक के किसी अंश को इलेक्ट्रानिक, मैकेनिकल फोटोकापी, रिकार्डिंग या अन्य सूचना - संग्रह साधनों एवं माध्यमों द्वारा मुद्रित अथवा प्रकाशित करने के पूर्व साधना फाउंडेशन, पूना की लिखित अनुमति अनिवार्य है।

Rajneesh Dhyaan Yog. Osho Rajneesh Rs. 25.00

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आमुख

ध्यान क्या है? इस प्रसंग में भगवान श्री रजनीश का एक प्रसिद्ध वचन है—'क्या तुम ध्यान करना चाहते हो? तो ध्यान रखना! ध्यान में न तो तुम्हारे सामने कुछ हो और न तुम्हारे पीछे ही कुछ हो। अतीत को मिट जाने दो और भविष्य को भी। स्मृति और कल्पना दोनों को शून्य हो जाने दो। फिर न तो समय होगा और न आकाश ही होगा। और जिस क्षण कुछ भी नहीं होता है, तभी जानना कि तुम ध्यान में हो। महामृत्यु का यह क्षण ही नित्य-जीवन का क्षण भी है।'

लेकिन, अपने को अतीत और भविष्य से, स्मृति और कल्पना से शून्य कैसे करना? समय और आकाश का लीन होना तो ध्यान की चरम अवस्था है। वही तो निर्विचार और मौन है, समाधि और मोक्ष और निर्वाण है। ध्यान का आरम्भ तो वह हो सकता है जो भगवान श्री द्वारा बतायी गयी अनेक ध्यान-विधियों का पहला या दूसरा चरण कहाता है। मिसाल के लिए 'सक्रिय-ध्यान' में तीव्रतम सांस लेना, हाथ-पांव उछालकर, चीख-चिल्लाकर शरीर और मन को रेचन करना आरम्भ हो सकता है। जहां हम हैं, वहीं से तो हमें आरम्भ करना है!

ध्यान चेतना की अंतर्यात्रा है, जिसमें चेतना बोधपूर्वक, बाहर से भीतर की ओर, परिधि से केन्द्र की ओर, पर से स्वयं की ओर, अथवा दृश्य से द्रष्टा की ओर प्रतिक्रमण करती है। दूसरे शब्दों में, अस्तित्व का जो एक ही जीवन्त क्षण है, जो अभी और यहीं है, और जिसमें समस्त जीवन समाया है, उससे सम्बद्ध और सम्पृक्त होना,उसमें ही होना ध्यान है।

इस ध्यान को साधने से चेतना निर्बन्ध और निर्ग्रन्थि, अखण्ड और अडोल, असंग और असीम अवस्था को उपलब्ध होती है। थोड़े शब्दों में—ध्यान, समाधि और अन्ततः आत्मबोध का, परमात्मा का द्वार बनता है।

भगवान श्री का यह भी कहना है कि यद्यपि मनुष्य और उसकी आध्यात्मिक समस्या बुनियादी रूप से समान है तो भी समय और स्थान बहुत भेद पैदा करते हैं। फिर प्रत्येक आदमी इतना अनूठा है, इतना अद्वितीय है कि उसे अपना ही अनूठा मार्ग भी चुनना होता है। इसलिए प्रत्येक युग में गुरु शिष्य को नींद से जागरण में, मृत्यु से अमृत में ले जाने के लिए नयी नयी विधियां और उपाय आविष्कृत करते हैं। क्योंकि पुरानी विधियां, पुराने उपाय काम नहीं देते, और एक ही विधि भी सबके काम नहीं आ सकती। यही कारण है कि भगवान श्री ने बहुत-सी नवीन विधियां और उपाय खोजे हैं और वे चाहते हैं कि साधक प्रयोग और भूल की प्रक्रिया से गुजरकर अपनी अपनी विधि का चुनाव करे। इस सन्दर्भ में भगवान श्री के ये वचन ध्यान में धर लेने योग्य हैं—

'बुद्ध और महावीर जिनको समझा रहे थे, वे बड़े सरल लोग थे। उनका कुछ दबा हुआ नहीं था, इसलिए उन्हें ध्यान में सीधे ले जाया जा सकता था। आप सीधे ध्यान में नहीं ले जाये जा सकते; आप बहुत जटिल हैं। आप उलझन हैं एक। पहले तो आपकी उलझन को सुलझाना पड़ेगा और आपकी जटिलता कम करनी पड़ेगी और आपके रोगों से

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

थोड़ा छुटकारा करना पड़ेगा। टेम्परेरी ही सही। चाहे अस्थायी ही हो, लेकिन थोड़ी देर के लिए आपकी भाप को अलग कर देना जरूरी है—जो आपको उलझाये हुए है—तो आप ध्यान की तरफ मुड़ सकते हैं; अन्यथा आप नहीं मुड़ सकते।

'इसलिए दुनिया की सारी पुरानी पद्धतियां ध्यान की, आपके कारण व्यर्थ हो गयी हैं। आज उनसे कोई काम नहीं हो रहा। आप में सौ में से कभी एकाध आदमी मुश्किल से होता है, जिसको पुरानी पद्धति पुराने ही ढंग से काम कर पाये। निन्यानबे आदमियों के लिए कोई पुरानी पद्धति काम नहीं कर पाती। उसका कारण यही नहीं कि पुरानी पद्धतियां गलत हैं; उसका कुल कारण इतना है कि आदमी नया है और पद्धतियां जिन आदमियों के लिए विकसित की गयी थीं, वे पृथ्वी से खो गये। आदमी दूसरा है। यह जो इलाज है, वह आपके लिए विकसित नहीं हुआ था। आपने इस बीच नयी बीमारियां इकट्ठी कर ली हैं।

'तीन हजार, चार हजार, पांच हजार साल पहले ध्यान के जो प्रयोग विकसित हुए थे, वे उस आदमी के लिए थे, जो मौजूद था। वह आदमी अब नहीं है। उस आदमी का जमीन पर कहीं कोई निशान नहीं रह गया है। अगर कहीं दूर जंगलों में थोड़े-से लोग मिल जाते हैं, तो हम उनको जल्दी से शिक्षित करके सभ्य बनाने की पूरी कोशिश में लगे हैं और हम सोचते हैं,हम बड़ी कृपा कर रहे हैं, उनकी सेवा करके।

'आदमी जैसा आज है, ऐसा आदमी जमीन पर कभी भी नहीं था। यह बड़ी नयी घटना है। और इस नयी घटना को सोचकर ध्यान की सारी पद्धतियों में रेचन, कैथार्सिस का प्रयोग जोड़ना अनिवार्य हो गया है। इसके पहले कि आप ध्यान में उतरें, आपका रेचन हो जाना जरूरी है,आपकी धूल हट जानी जरूरी है।'

प्रस्तुत पुस्तक 'रजनीश ध्यान योग' में भगवान श्री के पूरे साहित्य से ध्यान-विधियों तथा ध्यान-साधना सामग्री का संचयन किया गया है। इस पुस्तक से एक बड़ी जरूरत की पूर्ति हो रही है।

—स्वामी आनंद मैत्रेय

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अनुक्रम

खंड 1

1. ध्यानः एक वैज्ञानिक दृष्टि ---------- 1
2. ध्यान सोपान ---------- 9
3. साधना सोपान ---------- 35

खंड 2

1. साधना सूत्र ---------- 111
2. ध्यानोपलब्धि ---------- 120
3. जिज्ञासा समाधान ---------- 127
4. ध्यान मंदिर ---------- 144
5. आत्म-साधना ---------- 160
6. ध्यानः रहस्य ---------- 206
7. ध्यानः अविधि ---------- 215

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

डायमंड पाकेट बुक्स में ओशो का अलौकिक साहित्य

एक ओंकार सतनाम
मैं मृत्यु सिखाता हूँ
संभोग से समाधि की ओर-I
संभोग से समाधि की ओर-II
संभोग से समाधि की ओर-III
संभोग से समाधि की ओर-IV
रजनीश ध्यान योग
चेति सकै तो चेति
एक महान चुनौती मनुष्य का सवर्णिम भविष्य
सहज जीवन के स्वर
सहज जीवन के सूत्र
जीवित मन्दिर
जीवन क्रांति
हरि ओंउम् तत्सत्
ओंउम् मणि पद्मे हुम्
ओंउम् शांतिः शांतिः शांतिः
शून्य समाधि
सम्बोधि के क्षण
शून्य का दर्शन
अमृत की दिशा
सम्भावनाओं की आहट
बहुतेरे हैं घाट
मैं धार्मिकता सिखाता हूं धर्म नहीं
नये समाज की खोज
एक एक कदम
प्रार्थना के बीज
आकाश भर आनन्द
साधना के आयाम
सहज योग : अभी और यहीं
सहज योग : ध्यान और प्रेम
सहज योग : साक्षी और प्रेम
सहज योग : प्रार्थना और आनन्द
सहजयोग : महाक्रान्ति
योग-सूत्र : अहंकार और समर्पण
योग-सूत्र : बुद्धों का मनोविज्ञान
योग-सूत्र : नींद, स्वप्न और बोध
योग-सूत्र : समाधि के दो रूप
योग-सूत्र : एक वैज्ञानिक दृष्टि
योग-सूत्र : आंतरिक अनुष्ठान
योग-सूत्र : प्रज्ञा और समाधि
योग-सूत्र : सद्गुरु को समर्पण
ध्यान सूत्र : अन्तिम यात्रा
ध्यान सूत्र : एक अपूर्व अभियान
साधना पथ
प्रभु की पगडंडियाँ
शिक्षा : नये प्रयोग
शिक्षा और विद्रोह
शिक्षा और जागरण
शिक्षा में क्रान्ति
भारत के जलते प्रश्न
धर्म और राजनीति
स्वर्णिम भारत
प्रेम है द्वार सत्य का
दिया बलै अगम का
शून्यता है महामुक्ति
मुक्त गगन के पंछी
जीवन संगीत
सतगुर मिलै ते उबरै
सबद भया उजियाला
हंसै खेलै न करे मन भंग
सहजै रहिबा
उपनिषद-शून्य संवाद
एकमात्र उपाय : जागो
क्रान्ति सूत्र : साक्षी भाव
इक साधे सब सधै
भारत एक अनूठी संपदा
गीता : कृष्णा का योग विज्ञान
गीता : मनोविज्ञान का परम शास्त्र
गीता : विज्ञान,कला, अध्यात्म
गीता : समस्त योगों का सार
भक्ति : परम प्रेम रूपा
भक्ति : विराट का अनुभव
भक्ति : शून्य की झील में प्रेम का कमल
भक्ति : निराकारं से एकाकार
भक्ति : जीवन रूपांतरण की कला
अस्वीकृति में उठा हाथ
नयी क्रान्ति की रूपरेखा
विचार क्रान्ति
गांधी पर पुनर्विचार
दिया अमृत पाया जहर
कुंडलिनी और तंत्र
कुंडलिनी और सात शरीर
कुंडलिनी जागरण और शक्तिपात
कुंडलिनी यात्रा
साक्षी कृष्ण और रासलीला
कृष्ण : साधना रहित सि[illegible]
कृष्ण और हंसता हुआ ध[illegible]
ऐसी भक्ति करै रैदासा
दरिया झूठ सो झूठ है
जात हमारी हम है
सुखिया सब संसार
दुखिया दास कबीर
जित देखूं तित तूं
जोतहिं जोति समानी
बोलै शेख फरीद
सत भाषै रैदास
क्या मेरा क्या तेरा
मन लागा यार फकीरी में
कृष्ण गुरु भी सखा भी
कृष्ण जिज्ञासा खोज
उपलब्धि
शिव साधना
शिव दर्शन
निरगुन का बिसराम
लिखा लिखी की है नहीं
गुरु गोविन्द दोउ खड़े
हीरा पायो गांठ गठियायो
मेरे तो गिरधर गोपाल
राम नाम रस पीजै
राम नाम निज औषधि
दादू सहजै देखिए
नहीं जोग नहीं जाप
तेरा साईं तुज्झ में
आपुई गई हिराय

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१

ध्यान : एक वैज्ञानिक दृष्टि

मेरे प्रिय आत्मन् !

सुना है मैंने, कोई नाव उलट गई थी। एक व्यक्ति उस नाव में बच गया और एक निर्जन द्वीप पर जा लगा। दिन, दो दिन, चार दिन, सप्ताह, दो सप्ताह उसने प्रतीक्षा की, कि जिस बड़ी दुनिया का वह निवासी था, वहां से कोई उसे बचाने आ जायेगा। फिर महीने भी बीत गये और वर्ष भी बीतने लगा। फिर किसी को आते न देखकर वह धीरे-धीरे प्रतीक्षा करना भी भूल गया। पांच वर्षों के बाद कोई जहाज वहां से गुजरा, उस एकान्त निर्जन द्वीप पर उस आदमी को निकालने के लिए जहाज़ ने लोगों को उतारा, और जब उन लोगों ने उस खो गये आदमी को वापिस चलने को कहा, तो वह विचार में पड़ गया।

उन लोगों ने कहा, 'क्या विचार कर रहे हैं; चलना है या नहीं?' तो उस आदमी ने कहा, 'अगर तुम्हारे साथ जहाज पर कुछ अखबार हों जो तुम्हारी दुनिया की खबर लाये हों, तो मैं पिछले दिनों के कुछ अखबार देख लेना चाहता हूं।' अखबार देखकर उसने कहा, 'तुम अपनी दुनिया सम्हालो और अखबार भी, और मैं जाने से इन्कार करता हूं।'

बहुत हैरान हुए वे लोग। उनकी हैरानी स्वाभाविक थी। पर वह आदमी कहने लगा, 'इन पांच वर्षों में मैंने जिस शान्ति, जिस मौन और जिस आनन्द को अनुभव किया है, वह मैंने पूरे जीवन के पचास वर्षों में भी तुम्हारी उस बड़ी दुनिया में कभी अनुभव नहीं किया था। और सौभाग्य, और परमात्मा की अनुकम्पा, कि उस दिन तूफान में नाव उलट गयी और मैं इस द्वीप पर आ लगा। यदि मैं अभी इस द्वीप पर न लगा होता, तो शायद मुझे पता भी न चलता कि 'मैं किस बड़े पागलखाने में पचास वर्षों से जी रहा था!'

हम उस बड़े पागलखाने के हिस्से हैं; उसमें ही पैदा होते हैं, उसमें ही बड़े होते हैं, उसमें

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ही जीते हैं — और इसलिए कभी पता भी नहीं चल पाता कि जीवन में जो भी पाने योग्य है, वह सभी हमारे हाथ से चूक गया है। और जिसे हम सुख कहते हैं और जिसे हम शांति कहते हैं, उसका न तो सुख से कोई सम्बन्ध है और न शान्ति से कोई सम्बन्ध है। और जिसे हम जीवन कहते हैं, शायद वह मौत से किसी भी हालत में बेहतर नहीं है।

लेकिन परिचय कठिन है। चारों ओर एक शोरगुल की दुनिया है। चारों ओर शब्दों का, शोरगुल का उपद्रवग्रस्त वातावरण है। उस सारे वातावरण में हम वे रास्ते ही भूल जाते हैं जो भीतर मौन और शान्ति में ले जा सकते हैं।

इस देश में—और इस देश के बाहर भी—कुछ लोगों ने अपने भीतर भी एकान्त द्वीप की खोज कर ली है। न तो यह सम्भव है कि सभी की नावें डूब जायें; न यह सम्भव है कि इतने तूफान उठें; और न यह सम्भव है कि इतने निर्जन द्वीप मिल जायें, जहां सारे लोग शान्ति और मौन को अनुभव कर सकें। लेकिन, फिर भी यह सम्भव है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने भीतर ही उस निर्जन द्वीप को खोज ले।

ध्यान अपने ही भीतर उस निर्जन द्वीप की खोज का मार्ग है। यह भी समझ लेने जैसा है कि दुनिया के सारे धर्मों में बहुत विवाद हैं— सिर्फ एक बात के सम्बन्ध में विवाद नहीं है— और वह बात ध्यान है। मुसलमान कुछ और सोचते; हिन्दू कुछ और, ईसाई कुछ और, पारसी कुछ और; जैन, बौद्ध कुछ और। उनके सिद्धान्त सबके बहुत भिन्न-भिन्न हैं। लेकिन एक बात के सम्बन्ध में इस पृथ्वी पर कोई भी भेद नहीं है, और वह यह कि जीवन के आनन्द का मार्ग ध्यान से होकर जाता है। और परमात्मा तक अगर कोई भी कभी पहुंचा है, तो ध्यान की सीढ़ी के अतिरिक्त और किसी सीढ़ी से नहीं। वह चाहे, जीसस, और फिर चाहे बुद्ध, और चाहे मुहम्मद, और चाहे महावीर— कोई भी; जिसने जीवन की परम धन्यता को अनुभव किया है, उसने अपने ही भीतर गहरे में डूब के उस निर्जन द्वीप की खोज कर ली।

इस ध्यान के विज्ञान के सम्बन्ध में दो-तीन बातें आपसे कहना चाहूंगा। पहली बात तो यह कि साधारणतः जब हम बोलते हैं, तभी हमें पता चलता है कि हमारे भीतर कौन-से विचार चलते थे। ध्यान का विज्ञान इस स्थिति को अत्यन्त ऊपरी अवस्था मानता है। अगर एक आदमी न बोले, तो हम पहचान भी न पायें कि वह कौन है, क्या है।

शब्द हमारे बाहर प्रकट होता है, तभी हमें पता चलता है -- 'हमारे भीतर क्या था'! ध्यान का विज्ञान कहता है, यह अवस्था, सबसे ऊपरी अवस्था है चित्त की; सरफेस है, ऊपर की पर्त है। हम नहीं बोले होते हैं तब भी पहले उसके विचार भीतर चलता है; अन्यथा हम बोलेंगे कैसे? अगर मैं कहता हूं 'ओम्', तो इसके पहले कि मैं कहूं — मेरे भीतर, ओठों के पार, मेरे हृदय के किसी कोने में 'ओम्' का निर्माण हो जाता है। ध्यान कहता है, यह दूसरी पर्त है, [illegible] की गहराई की।

साधारणतः आदमी ऊपर की पर्त पर ही जीता है; उसे दूसरी पर्त का भी पता नहीं होता।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उसके बोलने की दुनिया के नीचे भी एक सोचने का जगत् है, उसका भी उसे कुछ पता नहीं होता। काश, हमें हमारे सोचने के जगत् का पता चल जाये, तो हम बहुत हैरान हो जायें। जितना हम सोचते हैं, उसका बहुत थोड़ा-सा हिस्सा वाणी में प्रकट होता है। ठीक ऐसे ही, जैसे एक बर्फ के टुकड़े को हम पानी में डाल दें, तो एक हिस्सा ऊपर हो और नौ हिस्सा नीचे डूब जाये। हमारा भी नौ हिस्सा जीवन का, विचार का तल नीचे डूबा रहता है; एक हिस्सा ऊपर दिखाई पड़ता है।

इसलिए अक्सर ऐसा हो जाता है कि आप क्रोध कर चुकते हैं, तब आप कहते हैं कि यह कैसे सम्भव हुआ कि मैंने क्रोध किया। एक आदमी हत्या कर देता है, फि गाता है कि यह कैसे सम्भव हुआ कि मैंने हत्या की! 'इनस्पाइट ऑफ मी'...वह कहत , 'मेरे बावजूद यह हो गया, मैंने तो कभी ऐसा करना ही नहीं चाहा था।' उसे पता नहीं कि हत्या आकस्मिक नहीं है, पहले भीतर निर्मित होती है। लेकिन वह तल गहरा है, और उस तल से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं रह गया।

ध्यान कहता है, पहले तल का नाम 'बैखरी' है, दूसरे तल का नाम 'मध्यमा' है। और उसके नीचे भी एक तल है, जिसे ध्यान का विज्ञान 'पश्यन्ति' कहता है। इसके पहले कि भीतर, ओठों के पार, हृदय के कोने में शब्द निर्मित हो, उससे भी पहले, शब्द का निर्माण होता है। लेकिन उस तीसरे तल का तो हमें साधारणतः कोई भी पता नहीं होता; उससे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं होता। दूसरे तक हम कभी-कभी झांक पाते हैं, तीसरे तक हम कभी नहीं झांक पाते।

ध्यान का विज्ञान कहता है कि पहला तल 'बोलने' का है, दूसरा तल 'सोचने' का है, तीसरा तल 'दर्शन' का है। पश्यन्ति का अर्थ है 'देखना'; जहां शब्द देखे जाते हैं। मुहम्मद कहते हैं— मैंने कुरान देखी— सुनी नहीं। वेद के ऋषि कहते हैं — हमने ज्ञान देखा — सुना नहीं। मूसा कहते हैं— मेरे सामने टेन कमान्डमेन्ट्स प्रकट हुए, दिखाई पड़े— मैंने सुने नहीं। यह तीसरे तल की बात है; जहां विचार दिखाई पड़ते हैं— सुनाई नहीं पड़ते हैं।

तीसरा तल भी ध्यान के हिसाब से मन का आखिरी तल नहीं है। चौथा एक तल है, जिसे ध्यान का विज्ञान 'परा' कहता है। वहां विचार दिखाई भी नहीं पड़ते, सुनाई भी नहीं पड़ते। और जब कोई व्यक्ति देखने और सुनने से नीचे उतर जाता है, तब उसे चौथे तल का पता चलता है। और उस चौथे तल के पार जो जगत् है, वह ध्यान का जगत् है।

ये चार हमारी पर्तें हैं। इन चार दीवारों के भीतर हमारी आत्मा है। हम बाहर के परकोटे की दीवार के बाहर ही जीते हैं। पूरे जीवन शब्दों की पर्त के साथ जीते हैं— और स्मरण नहीं आता कि खजाने बाहर नहीं हैं, बाहर सिर्फ रास्तों की धूल है। आनन्द बाहर नहीं है, बाहर आनन्द की धुन भी सुनाई पड़ जाये तो बहुत। जीवन का सब-कुछ भीतर है— जड़ों में— गहरे, अन्धेरे में दबा हुआ। ध्यान वहां तक पहुंचने का मार्ग है।

पृथ्वी पर बहुत-से रास्तों से उस पांचवीं स्थिति में पहुंचने की कोशिश की जाती रही है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

और जो व्यक्ति इन चार स्थितियों को पार करके पांचवीं गहराई में नहीं डूब पाता, उस व्यक्ति को जीवन तो मिला, लेकिन जीवन को जानने की उसने कोई कोशिश नहीं की; उस व्यक्ति को खजाने तो मिले, लेकिन खजानों से वह अपरिचित रहा और रास्तों पर भीख मांगने में उसने समय बिताया। उस व्यक्ति के पास वीणा तो थी— जिससे संगीत पैदा हो सकता था, लेकिन उसने उसे कभी छुआ नहीं; उसकी अंगुलियों का कभी कोई स्पर्श उसकी वीणा तक नहीं पहुंचा।

हम जिसे सुख कहते हैं, धर्म उसे सुख नहीं कहता। है भी नहीं, हम भली-भांति जानते हैं। हमारा सुख करीब-करीब ऐसा है...मुझे एक छोटी-सी कहानी याद आती है—

एक आदमी अपने मित्रों के पास बैठा है— बहुत बेचैन, बहुत परेशान। और ऐसा मालूम पड़ता है उसके भीतर कोई बहुत कष्ट है; किसी पीड़ा को वह दबाये हुए है। अन्ततः एक मित्र उससे पूछता है— 'इतने परेशान हैं, बात क्या है ? सिर में दर्द है ? पेट में दर्द है?'

उस आदमी ने कहा— 'नहीं, न सिर में दर्द है, न पेट में दर्द है; मेरे जूते बहुत काट रहे हैं, बहुत तंग हैं जूते।' उसके मित्र ने कहा— 'तो जूतों को निकाल दें। और अगर इतने तंग जूते हैं कि इतना परेशान कर रहे हैं, तो थोड़े ठीक जूते खरीद लें।'

उस आदमी ने कहा— 'नहीं, यह न हो सकेगा, मैं वैसे ही बहुत मुसीबत में हूं!' पत्नी मेरी बीमार है, लड़की ने, नहीं चाहता था जिस व्यक्ति को, उससे शादी कर ली; लड़का शराबी है, जुआरी है; और मेरी हालत दीवाले के करीब है। .... नहीं, मैं वैसे ही बहुत दुःख में हूं।' उन मित्रों ने कहा— 'आप पागल हैं? वैसे ही बहुत दुःख में हैं तो इस जूते को तो बदल ही लें।' उस आदमी ने कहा : 'इस जूते के साथ ही मेरा एकमात्र सुख रह गया है।' तब तो वे बहुत चकित हुए, उन्होंने कहा— 'यह सुख किस प्रकार का है?' उस आदमी ने कहा— 'मैं इतनी मुसीबतों में हूं, दिनभर यह जूता मुझे काटता है; शाम जब मैं जूते को उतारता हूं, तो मुझे बड़ी राहत मिलती है। एक ही सुख मेरे पास बचा है, वह यह कि सांझ जब मैं इस जूते को घर जा के उतारता हूं, तो बड़ी रिलीफ, बड़ी राहत मिलती है। बस एक ही सुख मेरे पास है और तो दुःख-ही-दुःख है। इस जूते को मैं नहीं बदल सकता हूं।'

जिसे हम सुख कहते हैं, वह तंग जूते से ज्यादा सुख नहीं है; रिलीफ से ज्यादा सुख नहीं है। जिसे हम सुख कहते हैं, वह थोड़ी-सी देर के लिए किसी तनाव से मुक्ति है। .... नकारात्मक है, निगेटिव है।

एक आदमी थोड़ी देर के लिए शराब पी लेता है और सोचता है सुख में है! एक आदमी थोड़ी देर के लिए सेक्स में उतर जाता है और सोचता है सुख में है! एक आदमी थोड़ी देर के लिए संगीत सुन लेता है और सोचता है कि सुख में है! एक आदमी बैठ के गपशप कर लेता है, हंसी-मजाक कर लेता है, हंस लेता है, और सोचता है कि सुख में है!

ये सारे सुख तंग जूते को सांझ उतारने से भिन्न नहीं हैं; उनका सुख से कोई सम्बन्ध नहीं

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। सुख एक पॉजिटिव, एक विधायक स्थिति है— नकारात्मक नहीं। सुख छींक जैसी चीज नहीं है— कि आपको छींक आ जाती है और पीछे थोड़ी राहत मिलती है! क्योंकि छींक परेशान कर रही थी। वह एक नकारात्मक चीज नहीं है कि एक बोझ मन से उतर जाता है और पीछे अच्छा लगता है।

सुख एक विधायक अनुभव है। लेकिन बिना ध्यान के वैसा विधायक सुख किसी को अनुभव नहीं होता। और जैसे-जैसे आदमी सभ्य और शिक्षित हुआ है, वैसे-वैसे ध्यान से दूर हुआ है। सारी शिक्षा, सारी सभ्यता— आदमी को दूसरों से कैसे सम्बन्धित हों, यह तो सिखा देती है, लेकिन अपने से कैसे सम्बन्धित हों, यह नहीं सिखाती। समाज को कोई प्रयोजन भी नहीं है कि आप अपने से सम्बन्धित हों; समाज चाहता है आप दूसरों से सम्बन्धित हों— ठीक से, कुशलता से—बात पूरी हो जाती; आप कुशलता से काम करें, बात पूरी हो जाती।

समाज आपको एक फंक्शन से ज्यादा नहीं मानता। अच्छे दुकानदार हों, अच्छे नौकर हों, अच्छे पति हों, अच्छी मां हों, अच्छी पत्नी हों—बात समाप्त हो गयी; आपसे समाज को कोई लेना-देना नहीं है। इसलिए समाज की सारी शिक्षा उपयोगिता है, यूटिलिटि है। समाज सारी शिक्षा ऐसी देता है, जिससे कुछ पैदा होता हो। आनन्द से कुछ भी पैदा होता नहीं दिखाई पड़ता। आनन्द कोई कमोडिटी नहीं है जो बाजार में बिक सके। आनन्द कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे रुपये में भंजाया जा सके। आनन्द कोई ऐसी चीज नहीं है, जिसे बैंक-बैलेन्स में जमा किया जा सके। आनन्द कोई ऐसी चीज नहीं है, जिसकी बाजार में कोई कीमत हो सके। इसलिए समाज को आनंद से कोई प्रयोजन नहीं है। और कठिनाई यही है कि आनन्द भर एक ऐसी चीज है, जो व्यक्ति के लिए मूल्यवान है; बाकी कुछ भी मूल्यवान नहीं है। लेकिन जैसे-जैसे आदमी सभ्य होता जाता है — यूटिलिटेरियन होता है — 'सब चीजों की उपयोगिता होनी चाहिए।'

मेरे पास लोग आते हैं; वे कहते हैं 'ध्यान से क्या मिलेगा?' शायद वे सोचते होंगे— 'रुपये मिलें, मकान मिले, कोई पद मिले।'....ध्यान से न पद मिलेगा, न रुपये मिलेंगे, न मकान मिलेगा; ध्यान की कोई उपयोगिता नहीं है।

लेकिन जो आदमी सिर्फ उपयोगी चीजों की तलाश में घूम रहा है, वह आदमी सिर्फ मौत की तलाश में घूम रहा है। जीवन की भी कोई उपयोगिता नहीं है। जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है, वह परपज़लेस है। जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है, उसकी बाजार में कोई कीमत नहीं है। प्रेम की कोई कीमत है बाजार में? कोई कीमत नहीं है। आनन्द की कोई कीमत है? कोई कीमत नहीं है। प्रार्थना की कोई कीमत है? कोई कीमत नहीं है। ध्यान की, परमात्मा की? इनकी कोई भी कीमत नहीं है। लेकिन जिस जिंदगी में अनुपयोगी, नॉन-यूटिलिटेरियन मार्ग नहीं होता, उस जिंदगी में सितारों की चमक भी खो जाती है, उस जिन्दगी में फूलों की सुगन्ध भी खो जाती है, उस जिन्दगी में पक्षियों के गीत भी खो जाते

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हैं; उस जिन्दगी में नदियों की दौड़ती हुई गति भी खो जाती है; उस जिन्दगी में कुछ भी नहीं बचता, सिर्फ बाजार बचता है। उस जिन्दगी में काम के सिवाय कुछ भी नहीं बचता। उस जिन्दगी में तनाव और परेशानी और चिन्ताओं के सिवाय कुछ भी नहीं बचता। और जिन्दगी चिन्ताओं का एक जोड़ नहीं है। लेकिन हमारी जिन्दगी चिन्ताओं का एक जोड़ है!

ध्यान हमारी जिन्दगी में उस डायमेन्शन, उस आयाम की खोज है, जहां हम बिना प्रयोजन के— सिर्फ होने-मात्र में, जस्ट टू बी—होने-मात्र से आनन्दित होते हैं। और जब भी हमारे जीवन में कहीं से भी सुख की कोई किरण उतरती है, तो वे वे ही क्षण होते हैं, जब हम खाली, बिना काम के— समुद्र के तट पर, या किसी पर्वत की ओट में, या रात आकाश के तारों के नीचे, या सुबह उगते सूरज के साथ, या आकाश में उड़ते हुए पक्षियों के पीछे, या खिले हुए फूलों के पास— कभी जब हम बिना काम— बिल्कुल बेकाम, बिल्कुल व्यर्थ, बाजार में जिसकी कोई कीमत न होगी— ऐसे किसी क्षण में होते हैं, तभी हमारे जीवन में सुख की थोड़ी-सी ध्वनि उतरती है। लेकिन यह आकस्मिक, एक्सिडेन्टल होती है। ध्यान, व्यवस्थित रूप से इस किरण की खोज है।

कभी होती है यह ट्यूनिंग। कभी विश्व के और हमारे बीच संगीत का सुर बंध जाता है; कभी, ठीक वैसे ही, जैसे कोई बच्चा सितार को छेड़ दे और कोई राग पैदा हो जाये— आकस्मिक। ध्यान, व्यवस्थित रूप से, जीवन में उस द्वार को बड़ा करने का नाम है, जहां से आनन्द की किरण उतरनी शुरू होती है। जहां से हम पदार्थ से छूटते हैं और परमात्मा से जुड़ते हैं।

मेरे देखे ध्यान से ज्यादा बिना कीमत की कोई चीज नहीं है। और ध्यान से ज्यादा बहुमूल्य भी कोई चीज नहीं है। और आश्चर्य की बात यह है कि यह जो ध्यान, प्रार्थना— या हम और कोई नाम दें। यह इतनी कठिन बात नहीं है, जितना लोग सोचते हैं। कठिनाई अपरिचय की है। कठिनाई न-जानने के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। जैसे हमारे घर के किनारे पर ही कोई फूल खिला हो, और हमने खिड़की न खोली हो; जैसे बाहर सूरज खड़ा हो और हमारे द्वार बन्द हों; जैसे खजाना सामने पड़ा हो और हम आंख बन्द किये बैठे हों — ऐसी कठिनाई है। अपने ही हाथ से अपरिचय के कारण कुछ हम खोये हुए बैठे हैं जो हमारा किसी भी क्षण हो सकता है।

ध्यान प्रत्येक व्यक्ति की क्षमता है। क्षमता ही नहीं, प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार भी। परमात्मा जिस दिन व्यक्ति को पैदा करता है, ध्यान के साथ ही पैदा करता है। ध्यान हमारा स्वभाव है। उसे हम जन्म के साथ लेकर पैदा होते हैं।

इसलिए ध्यान से परिचित होना कठिन नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति ध्यान में प्रविष्ट हो सकता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ध्यान है भीतर झांकना

बीज को स्वयं की सम्भावनाओं का कोई भी पता नहीं होता है। ऐसा ही मनुष्य भी है। उसे भी पता नहीं है कि वह क्या है—क्या हो सकता है। लेकिन, बीज शायद स्वयं के भीतर झांक भी नहीं सकता है। पर मनुष्य तो झांक सकता है। यह झांकना ही ध्यान है। स्वयं के पूर्ण सत्य को अभी और यहीं (हियर एण्ड नाउ) जानना ही ध्यान है। ध्यान में उतरें—गहरे और गहरे। गहराई के दर्पण में सम्भावनाओं का पूर्ण प्रतिफलन उपलब्ध हो जाता है। और जो हो सकता है, वह होना शुरू हो जाता है। जो सम्भव है, उसकी प्रतीति ही उसे वास्तविक बनाने लगती है। बीज जैसे ही संभावनाओं के स्वप्नों से आन्दोलित होता है, वैसे ही अंकुरित होने लगता है। शक्ति, समय और संकल्प सभी ध्यान को समर्पित कर दें। क्योंकि ध्यान ही वह द्वारहीन द्वार है जो कि स्वयं को ही स्वयं से परिचित कराता है।

ध्यान है अमृत - ध्यान है जीवन

विवेक ही अंततः श्रद्धा के द्वार खोलता है। विवेकहीन श्रद्धा श्रद्धा नहीं, मात्र आत्म-प्रवंचना है। ध्यान से विवेक जगेगा। वैसे ही जैसे सूर्य के आगमन से भोर में जगत् जाग उठता है। ध्यान पर श्रम करें। क्योंकि अन्ततः शेष सब श्रम समय के मरुस्थल में कहां खो जाता है, पता ही नहीं पड़ता है। हाथ में बचती है केवल ध्यान की सम्पदा। और मृत्यु भी उसे नहीं छीन पाती है। क्योंकि मृत्यु का वश काल (टाइम) के बाहर नहीं है। इसलिए तो मृत्यु को काल कहते हैं। ध्यान ले जाता है कालातीत में। समय और स्थान (स्पेस) के बाहर। अर्थात् अमृत में। काल (टाइम) है विष। क्योंकि काल है जन्म; काल है मृत्यु। ध्यान है अमृत। क्योंकि ध्यान है जीवन। ध्यान पर श्रम जीवन पर ही श्रम है। ध्यान की खोज जीवन की ही खोज है।

ध्यान की अनुपस्थिति है मन

ध्यान के लिए श्रम करो। मन की सब समस्याएं तिरोहित हो जायेंगी। असल में तो मन ही समस्या है (माइंड इज दी प्रॉबलम)। शेष सारी समस्याएं तो मन की प्रतिध्वनियां मात्र हैं। एक-एक समस्या से अलग-अलग लड़ने से कुछ भी न होगा। प्रतिध्वनियों से संघर्ष व्यर्थ है। पराजय के अतिरिक्त उसका और कोई परिणाम नहीं है। शाखाओं को मत काटो। क्योंकि एक शाखा के स्थान पर चार शाखाएं पैदा हो जायेंगी। शाखाओं के काटने से वृक्ष और भी बढ़ता है। और समस्याएं शाखाएं हैं। काटना ही है तो जड़ को काटो। क्योंकि जड़ के कटने से शाखाएं अपने-आप ही विदा हो जाती हैं। और मन है जड़। इस जड़ को काटो ध्यान से। मन है समस्या। ध्यान है समाधान। मन में समाधान नहीं है। ध्यान में समस्या नहीं है। क्योंकि मन में ध्यान नहीं है। क्योंकि ध्यान में मन नहीं है। ध्यान की अनुपस्थिति है मन। मन का अभाव है ध्यान। इसलिए कहता हूं— ध्यान के लिए श्रम करो।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन का विसर्जन—साक्षी-भाव से

मन के रहते शांति कहां? क्योंकि, वस्तुतः मन ही अशांति है। इसलिए शांति की दिशा में मात्र विचार से, अध्ययन से, मनन से कुछ भी न होगा। विपरीत मन और सबल भी हो सकता है; क्योंकि वे सब मन की ही क्रियाएं हैं। हां— थोड़ी देर को विराम जरूर मिल सकता है; जो कि शांति नहीं, बस अशांति का विस्मरण मात्र है। इस विस्मरण की मादकता से सावधान रहना। शांति चाहिए तो मन को खोना पड़ेगा। मन की अनुपस्थिति ही शांति है। साक्षी-भाव (विटनेसिंग) से यही होगा। विचार, कर्म—सभी क्रियाओं के साक्षी बनो। कर्ता न रहो। साक्षी बनो। पल-पल साक्षी होकर जियो। जो भी करो—साक्षी रहो। जैसे कि कोई और कर रहा है और मात्र गवाह रहा हो। फिर धीरे-धीरे मन भोजन न पाने से निर्बल होता जाता है। कर्ता भाव मन का भोजन है। अहंकार मन का ईंधन (फ्यूल) है। और जिस दिन ईंधन बिल्कुल नहीं मिलता है, उसी दिन मन ऐसे तिरोहित हो जाता है कि जैसे कभी रहा ही न हो।

सत्योपलब्धि के मार्ग अनन्त हैं

सत्योपलब्धि के मार्ग अनन्त हैं। और व्यक्ति-व्यक्ति पर निर्भर करता है कि उसके लिए क्या उपयुक्त है। और इसलिए जो एक के लिए सही है, वही दूसरे के लिए बिल्कुल ही गलत हो सकता है। इसीलिए दूसरे के साथ धैर्य की आवश्यकता है। और स्वयं को सबके लिए मापदंड मानना खतरनाक है। मैं अनेकान्त या स्यादवाद में इसी सत्य की अभिव्यक्ति देखता हूं। विचार-प्रधान व्यक्ति के लिए जो मार्ग है, वह भाव-प्रधान व्यक्ति के लिए नहीं है। और बहिर्मुखी (एक्सट्रोवर्ट) के लिए जो द्वार है, वह अन्तर्मुखी (इनट्रोवर्ट) के लिए दीवार है। ज्ञान का यात्री अन्ततः ध्यान की नाव बनाता है। प्रेम का यात्री प्रार्थना को। ध्यान और प्रार्थना पहुंचते हैं एक ही मंजिल पर। लेकिन उनके यात्रा-पथ नितान्त भिन्न हैं। और उचित यही है कि अपना यात्रा-पथ चुनें और दूसरे की चिन्ता न करें। क्योंकि, स्वयं को ही समझना जब इतना कठिन है, तो दूसरे को समझना तो करीब करीब असम्भव है।

सब मार्ग ध्यान के ही विविध रूप हैं

ध्यान के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है। या जो भी मार्ग हैं, वे सब ध्यान (मेडीटेशन) के रूप हैं। प्रार्थना भी ध्यान है, पूजा भी, उपासना भी। योग भी ध्यान है, सांख्य भी। ज्ञान भी ध्यान है, भक्ति भी। कर्म भी ध्यान है, संन्यास भी। ध्यान का अर्थ है चित्त की मौन, निर्विचार, शुद्धावस्था। कैसे पाते हो इस अवस्था को, यह महत्त्वपूर्ण नहीं है। बस पा लो, यही महत्त्वपूर्ण है। किस चिकित्सा-पद्धति से स्वस्थ होते हो, यह गौण है। बस स्वस्थ हो जाओ, यही महत्त्वपूर्ण है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

२. ध्यान सोपान

भगवान श्री रजनीश रचित ध्यान की २१ सक्रिय विधियां

१. सक्रिय
२. कुण्डलिनी
३. नटराज
४. नादब्रह्म
५. विपश्यना
६. गौरीशंकर
७. मण्डल
८. देववाणी
९. प्रार्थना
१०. सामूहिक प्रार्थना
११. रात्रि ध्यान—ओऽऽऽऽ
१२. जिबरिश
१३. शिवनेत्र
१४. अग्निशिखा
१५. त्राटक—१
१६. त्राटक—२
१७. त्राटक—३
१८. कीर्तन
१९. सूफी दरवेश नृत्य
२०. ओंकार साधना
२१. मन्त्र साधना

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. सक्रिय ध्यान

हमारे शरीर और मन में इकट्ठे हो गये दमित आवेगों, तनावों एवं रुग्णताओं का रेचन करने, अर्थात् उन्हें बाहर निकाल फेंकने के लिए भगवान श्री रजनीश ने इस नई ध्यान विधि का सृजन किया है। शरीर और मन के इस रेचन—अर्थात् शुद्धिकरण से, साधक पुनः अपनी देह-ऊर्जा, प्राण-ऊर्जा, एवं आत्म-ऊर्जा के सम्पर्क में— उनकी पूर्ण सम्भावनाओं के सम्पर्क में आ जाता है — और इस तरह साधक आध्यात्मिक जागरण की ओर सरलता से विकसित हो पाता है।

सक्रिय ध्यान अकेले भी किया जा सकता है और समूह में भी। लेकिन समूह में करना ही अधिक परिणामकारी है।

स्नान कर के, खाली पेट, कम-से-कम वस्त्रों में, आंखों पर पट्टी बांधकर इसे करना चाहिए।

यह विधि पूरी तरह प्रभावकारी हो सके, इसके लिए साधक को अपनी पूरी शक्ति से, समग्रता में इसका अभ्यास करना होगा। इसमें पांच चरण हैं। पहले तीन चरण दस-दस मिनट के हैं तथा बाकी दो पन्द्रह-पन्द्रह मिनट के।

सुबह का समय इसके लिए सर्वाधिक उपयोगी है, यों इसे सांझ के समय भी किया जा सकता है।

पहला चरण

अपनी पूरी शक्ति से तेज और गहरी श्वास लेना शुरू करें। श्वास बिना किसी नियम के—अराजकतापूर्वक भीतर लें, बाहर छोड़ें। श्वास नाक से लें। श्वास बाहर फेंकने पर अधिक जोर लगायें, इससे श्वास का भीतर आना सहज हो जायेगा। श्वास का लेना और छोड़ना खूब तीव्रता से और जल्दी-जल्दी करें— और अपनी पूरी ताकत इसमें लगा दें। इसे बढ़ाते ही चले चायें—आपका पूरा व्यक्तित्व एक तेज श्वास-प्रश्वास ही बन जाये। भीतर ध्यानपूर्वक देखते रहें— श्वास आयी, श्वास गयी।

दूसरा चरण

अब पूरी तरह शरीर को गति करने दें तथा आन्तरिक भावावेगों को प्रकट होने दें। भीतर से जो कुछ बाहर निकलता हो, उसे बाहर निकलनें में सहयोग करें। पूरी तरह से पागल हो जायें—रोयें, चीखें, चिल्लायें, नाचें, उछलें, कूदें, हंसें— जो भी होता हो—उसे सहयोग करें, उसे तीव्रता दें। चाहें तो तेज और गहरी सांस लेना जारी रख सकते हैं। यदि शरीर की गति और भावों का रेचन और प्रकटीकरण न होता हो, तो चीखना, चिल्लाना, रोना, हंसना इत्यादि में से किसी एक को चुन लें और उसे करना शुरू करें। शीघ्र ही आपके स्वयं के भीतर के संगृहीत और दमित आवेगों का झरना फूट पड़ेगा।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ख्याल रखें कि आपका मन और आपकी बुद्धि इस प्रक्रिया में बाधक न बने। यदि फिर भी कुछ न होता हो, तो श्वास की चोट जारी रखें और किसी आन्तरिक अभिव्यक्ति को प्रकट होने में सहयोग करें।

तीसरा चरण

अब दोनों बाजू ऊपर उठा लें, पंजों पर खड़े हो जायें, और एक ही जगह पर उछलते हुए, समग्रता से, पूरी ताकत से महामंत्र 'हू-हू-हू' का उच्चार करें, और उसकी चोट को काम केन्द्र पर पड़ने दें। ऊर्जा के बढ़ते हुए प्रवाह को अनुभव करें। 'हू' की चोट को और अधिक तीव्र करते चले जायें— तथा आनन्दपूर्वक इस चरण को शिखर-तीव्रता की ओर ले चलें।

चौथा चरण

अचानक सारी गतियां, क्रियायें और 'हू-हू' की आवाज़ आदि सब बन्द कर दें और शरीर जिस स्थिति में हो, उसे वहीं थिर कर लें। शरीर को किसी भी प्रकार से व्यवस्थित न करें। पूरी तरह से निष्क्रिय और सजग बने रहें। एक गहरी शान्ति, मौन और शून्यता भीतर घटित होगी।

पांचवां चरण

अब भीतर छा गये आनन्द, मौन और शान्ति को अभिव्यक्त करें। आनन्द और अहोभाव से भरकर नाचें, गायें और उत्सव मनायें। शरीर के रोगें-रोयें से भीतर की जीवन-ऊर्जा और चैतन्य को प्रकट होने दें।

ध्यान रहे, यदि आप ऐसी जगह ध्यान कर रहे हों, जहां पहले तथा दूसरे चरण में भावावेगों के प्रकटीकरण तथा तीसरे चरण में 'हू-हू' की आवाज करने की सुविधा न हो, तो दूसरे चरण में रेचन-क्रिया शारीरिक मुद्राओं द्वारा ही होने दें— तथा तीसरे चरण में 'हू' की आवाज बाहर न करके भीतर-ही-भीतर करें। लेकिन, आवाज करना अधिक श्रेयस्कर है; क्योंकि तब ध्यान अधिक गहरा हो जाता है।

२. कुण्डलिनी ध्यान

यह एक अद्‌भुत ध्यान-पद्धति है और इसके जरिये मस्तिष्क से हृदय में उतर आना आसान हो जाता है।

एक घण्टे के इस ध्यान में पन्द्रह-पन्द्रह मिनट के चार चरण हैं। पहले और दूसरे चरण में आंखें खुली रखी जा सकती हैं। लेकिन तीसरे और चौथे चरण में आंखें बन्द रखनी हैं। सांझ इसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त समय है।

पहले चरण की संगति सपेरे के बीन-स्वर के साथ बिठायी गयी है। जैसे बीन-स्वर पर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सर्प अपनी कुन्डलिनी तोड़कर उठता है, और फन काढ़कर नाचने लगता है, वैसे ही इस ध्यान के सम्यक् प्रयोग पर साधक को सोयी हुई कुण्डलिनी शक्ति जाग उठती है।

पहला चरण

शरीर को बिल्कुल ढीला छोड़ दें और पूरे शरीर को कंपाएं, शेक करें। अनुभव करें कि ऊर्जा पांव से उठकर ऊपर की ओर बढ़ रही है।

दूसरा चरण

संगीत की लय पर नाचें—जैसा आपको भाये—और शरीर को, जैसा वह चाहे, गति करने दें।

तीसरा चरण

बैठ जायें या खड़े रहें, लेकिन सीधे और निश्चल।

चौथा चरण

निष्क्रिय होकर लेट जायें और शांत और साक्षी बने रहें।

३. नटराज ध्यान

नटराज ध्यान के सम्बन्ध में बोलते हुए भगवान श्री ने कहा है—परमात्मा को हमने नटराज की भांति सोचा है। हमने शिव की एक प्रतिमा भी बनाई है नटराज के रूप में। परमात्मा नर्तक की भांति है, एक कवि या चित्रकार की भांति नहीं। एक कविता या पेन्टिंग बनकर कवि से, पेन्टर से अलग हो जाती है; लेकिन नृत्य को नर्तक से अलग नहीं किया जा सकता। उनका अस्तित्व एक-साथ है; कहना चाहिए एक है।

नृत्य और नर्तक एक हैं। नृत्य के रुकते ही नर्तक भी विदा हो जाता है। सम्पूर्ण अस्तित्व ही परमात्मा का नृत्य है; अणु-परमाणु नृत्य में लीन है। परमात्म-ऊर्जा अनन्त-अनन्त रूपों में, अनन्त-अनन्त भाव-भंगिमाओं में नृत्य कर रही है।

नटराज-नृत्य एक सम्पूर्ण ध्यान है। नृत्य में डूबकर व्यक्ति विसर्जित हो जाता है और अस्तित्व का नृत्य ही शेष रह जाता है।

हृदयपूर्वक पागल होकर नाचने में जीवन रूपान्तरण की कुंजी है।

नटराज ध्यान पैंसठ मिनट का है और इसके तीन चरण हैं। पहला चरण चालीस, दूसरा चरण बीस और तीसरा चरण पांच मिनट का है।

जिस समय आप चाहें, इसे कर सकते हैं।

रजनीश-ध्यान-योग के सम्बन्ध में अधिक विस्तार से जानने के लिए— कि कैसे कैसे यह साधक के भीतर एक विस्फोट की तरह काम करता है— जिन खोजा तिन पाइयां तथा मेडिटेशन ए न्यू डाइमेन्शन पढ़नी चाहिए।

कुण्डलिनी ध्यान का विशेष रूप से तैयार किया गया वाद्य-संगीत का कैसेट रजनीशधाम, 17 कोरेगांव पार्क, पूना-411 001 से प्राप्त किया जा सकता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पहला चरण

संगीत की लय के साथ-साथ नाचें...और नाचें...बस नाचें, पूरे अचेतन को उभरकर नृत्य में प्रवेश करने दें। ऐसे नाचें कि नृत्य के वशीभूत हो जायें। कोई योजना न करें, और न ही नृत्य को नियन्त्रित करें। नृत्य में साक्षी को, द्रष्टा को, बोध को — सबको भूल जाएं। नृत्य में पूरी तरह डूब जायें, खो जायें, समा जायें—बस, नृत्य ही हो जायें।

काम केन्द्र से शुरू होकर ऊर्जा ऊपर की ओर गति करेगी।

दूसरा चरण

वाद्य-संगीत के बन्द होते ही नाचना रोक दें और लेट जायें। अब नृत्य एवं संगीत से पैदा हुई सिहरन को अपने सूक्ष्म तलों तक प्रवेश करने दें।

तीसरा चरण

खड़े हो जायें। पुनः पांच मिनट नाचकर उत्सव मनाएं—प्रमुदित हों।

४. नादब्रह्म ध्यान

तिब्वत देश की यह बहुत पुरानी विधि है। बड़े भोर में, दो और चार बजे के बीच उठकर, साधक इस विधि का अभ्यास करते थे और फिर सो जाते थे। भगवान श्री का कहना है कि हम लोग नादब्रह्म ध्यान सोने के पूर्व मध्य-रात्रि में करें या फिर प्रातःकाल के समय करें।

ध्यान रहे कि रात के अतिरिक्त जब भी इसे किया जाये, तब अन्त में पन्द्रह मिनट का विश्राम अनिवार्य है।

नादब्रह्म ध्यान, सामूहिक और व्यक्तिगत दोनों ढंग से किया जा सकता है। पेट भरे रहने पर यह ध्यान नहीं करना चाहिए,क्योंकि तब आन्तरिक नाद गहरा नहीं जायेगा। यदि इसे अकेले करें तो कान में रुई या डाट लगाना उपयोगी होगा।

यह ध्यान तीन चरणों का है। पहला चरण तीस मिनट का है; और दूसरा तथा तीसरा पन्द्रह-पन्द्रह मिनट का। आंखें पूरे समय बन्द रहेंगी।

पहला चरण

आंखें बन्द कर सुखपूर्वक बैठ जायें। अब मुंह को बन्द रखते हुए, भीतर-ही-भीतर, भंवरे की गुंजार की भांति हूं ऊं ऊं ऊं ऊं का नाद शुरू करें। यह नाद इतने जोर से शुरू करें कि इसका कम्पन आपको पूरे शरीर में अनुभव हो। नाद इतना ऊंचा हो कि आसपास के लोग इसे सुन सकें। नाद के स्वर-मान में आप फिर बदलाहट भी कर सकते हैं। अपने ढंग से गुजार करें। और श्वास भीतर ले जायें।

अगर शरीर हिलना चाहे तो उसे हिलने दें, लेकिन गति अत्यन्त धीमी और प्रसादपूर्ण हो। नाद करते हुए भाव करें कि आपका शरीर बांस की खाली पोंगरी है—जो सिर्फ गुंजार के कम्पनों से भरी है। कुछ समय के बाद वह बिन्दु आयेगा,जब आप श्रोता भर रहेंगे और नाद आप-ही-आप गूंजता रहेगा।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यह नाद मस्तिष्क के एक-एक तन्तु को शुद्ध कर उन्हें सक्रिय करता है तथा प्रभु-चिकित्सा में विशेष लाभकारी है।

इसे तीस मिनट से अधिक तो कर सकते हैं, लेकिन कम नहीं।

दूसरा चरण

अब दोनों हाथों को अपने सामने नाभि के पास रखें और हथेलियों को आकाशोन्मुख ऊपर की ओर। अब दोनों हाथों को आगे की तरफ ले जाते हुए चक्राकार घुमायें। दायां हाथ दायीं तरफ को जायेगा और बायां हाथ बायीं तरफ को। और तब वर्तुल पूरे करते हुए दोनों हाथों को अपने सामने उसी स्थान पर वापिस ले आयें।

ध्यान रहे कि जितना हो सके हाथों के घूमने की गति धीमी-से-धीमी रखनी है। वह इतनी धीमी रहे कि लगे कि जैसे गति ही नहीं हो रही है।

शरीर हिलना चाहे तो उसे हिलने दें, लेकिन उसकी गति भी बहुत धीमी, मृदु और प्रसादपूर्ण हो। और भाव करें कि ऊर्जा आप से बाहर जा रही है। यह क्रम साढ़े सात मिनट तक चलेगा।

इसके बाद हथेलियों को नीचे की ओर, जमीन की ओर उलट दें और हाथों को विपरीत दिशा में घुमाना शुरू करें।

पहले तो सामने रखे हुए हाथों को अपने शरीर की तरफ आने दें और फिर उसी प्रकार दायें हाथ को दायीं तरफ तथा बायें हाथ को बायीं तरफ वर्तुलाकार गति करने दें—जब तक कि वे वापिस उसी स्थान पर सामने न आ जायें।

घूमने के लिए हाथों को अपने-आप न छोड़ें, बल्कि इसी वर्तुलाकार ढांचे में धीरे-धीरे उन्हें घुमाते रहें। और भाव करें कि आप ऊर्जा ग्रहण कर रहे हैं, ऊर्जा आपकी ओर आ रही है। यह क्रम भी साढ़े सात मिनट तक चलेगा।

तीसरा चरण

बिल्कुल शांत और स्थिर बैठे रहें—साक्षी होकर।

भगवान श्री ने दम्पतियों के लिए नादब्रह्म ध्यान की एक अन्य विधि भी बतायी है, जो इस प्रकार है—

पहले कमरे को ठीक-से अंधेरा कर मोमबत्ती जला लें। विशेष सुगन्ध वाली अगरबत्ती ही जलायें, जिसे सिर्फ इस ध्यान के समय ही हमेशा उपयोग में लायें। फिर दोनों अपना शरीर एक चादर से ढक लें। बेहतर यही होगा कि दोनों के शरीर पर कोई और वस्त्र न हो। अब एक-दूसरे का तिरछे ढंग से हाथ पकड़ आमने-सामने बैठ जायें। अब आंखें बन्द कर लें और कम-से-कम तीस मिनट तक लगातार भंवरे की भांति हूं ऊं ऊं ऊं ऊं....का गुंजार करते रहें। ....गुंजार दोनों एक-साथ करें। एक या दो मिनट के बाद दोनों की श्वसन क्रिया और गुंजार एक-दूसरे में घुलमिल जायेंगी और दो ऊर्जाओं के मिलन की दोनों को प्रतीति होगी।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रात्रि, सोने के पूर्व इसे करें।

५. विपश्यना ध्यान

यह ध्यान विधि भगवान बुद्ध की अमूल्य देन है। ढाई हजार वर्षों के बाद भी उसकी महिमा में, उसकी गरिमा में जरा भी कमी नहीं हुई। और भगवान श्री रजनीश का मानना है कि आधुनिक मनुष्य की अंतर्यात्रा की साधना में विपश्यना सर्वाधिक कारगर सिद्ध हो सकती है।

विपश्यना का अर्थ है अंतरदर्शन—भीतर देखना।

यह ध्यान पचास मिनट का है और बैठ कर करना है। बैठें, शरीर और मन को तनाव न दें और आंखें बन्द रखें। फिर अपने ध्यान को आती-जाती श्वास पर केंद्रित करें। श्वास को किसी तरह की व्यवस्था नहीं देनी है; उसे उसके सहज ढंग में चलने दें। सिर्फ ध्यान को उसकी यात्रा के साथ कर दें।

श्वास की यात्रा में नाभि-केंद्र के पास कोई जगह है, जहां श्वास अधिक महसूस होता है। वहां विशेष ध्यान दें। अगर बीच में ध्यान कहीं चला जाये तो उससे घबरायें न। अगर मन में कोई विचार या भाव उठे तो उसे भी सुन लें, लेकिन फिर-फिर प्रेमपूर्वक ध्यान को श्वास पर लायें। और नींद से बचें।

६. गौरीशंकर ध्यान

घन्टे भर के इस ध्यान में चार चरण हैं और प्रत्येक चरण पन्द्रह मिनट का है।

पहले चरण को ठीक से करने पर आपके रक्त प्रवाह में कार्बन-डाय-आक्साइड का तल इतना ऊंचा हो जायेगा कि आप अपने को गौरीशंकर—एवरेस्ट शिखर पर महसूस करेंगे। वह आपको इतना ऊपर उठा देगा।

इस ध्यान प्रयोग के दूसरे चरण में साधकों के सामने प्रकाश का एक बल्ब तेजी से सतत् जलता-बुझता रहता है।

पहला चरण

आंखें बन्द कर बैठ जायें। अब नाक से उतनी गहरी श्वास भीतर लें, जितनी ले सकते हैं। और इस श्वास को भीतर तब तक रोके रहें, जब तक ऐसा न लगने लगे कि अब अधिक नहीं रोका जा सकता। फिर धीरे-धीरे श्वास को मुंह से बाहर निकाल दें। और फिर तब तक भीतर जाने वाली श्वास न लें, जब तक लेना मजबूरी न हो जाये। यह क्रम पन्द्रह मिनट तक जारी रखें।

दूसरा चरण

श्वसन-क्रिया को सामान्य हो जाने दें। आंखें खोल लें और सतत् जलते-बुझते हुए तेज प्रकाश को धीमे-धीमे देखते रहें। दृष्टि को तनाव नहीं देना है। और शरीर को पूरी तरह

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्थिर रखें।

तीसरा चरण

खड़े हो जायें, आंखें बन्द कर लें और शरीर को लातिहान* के ढंग से धीरे-धीरे हिलने दें। लातिहान के द्वारा आप अपने अन्तस् को शरीर के माध्यम से प्रकट होने दें और उस अभिव्यक्ति में पूरा सहयोग दें।

चौथा चरण

लेट जायें और सर्वथा निष्क्रिय हो रहें, साक्षी हो रहें।

७. मण्डल ध्यान

घन्टे भर के इस शक्तिशाली ध्यान में पन्द्रह-पन्द्रह मिनट के चार चरण हैं। पहला चरण खड़े होकर करना है; दूसरा बैठकर; तीसरा और चौथा सर्वथा निष्क्रिय होकर। सूर्योदय के बाद या सूर्यास्त के पहले, इसे कभी भी किया जा सकता है।

पहला चरण

आंखें खुली रख के एक ही स्थान पर खड़े-खड़े दौड़ें। जहां तक बन पड़े घुटनों को ऊपर उठायें। श्वास को गहरा और सम रखें। इससे ऊर्जा सारे शरीर में घूमने लगेगी।

दूसरा चरण

आंखें बन्द कर बैठ जायें। मुंह को शिथिल और खुला रखें—और, धीमे-धीमे चक्राकार झूमें—जैसे हवा में पेड़-पौधे झूमते हैं। इससे भीतर जागी ऊर्जा नाभि-केन्द्र पर आ जायेगी।

तीसरा चरण

अब आंखें खोल के पीठ के बल सीधे लेट जायें—और दोनों आंखों की पुतलियों को क्लॉक वाइज—बायें से दायें वृत्ताकार घुमायें। पहले धीरे-धीरे घुमाना शुरू करें, क्रमशः गति को तेज और वृत्त को बड़ा करते जायें।

मुंह को शिथिल व खुला रखें तथा सिर को बिल्कुल स्थिर। श्वास मन्द एवं कोमल बनी रहे। इससे नाभि-केन्द्रित ऊर्जा तीसरी-आंख पर आ जायेगी।

चौथा चरण

आंखें बन्द कर निष्क्रिय हो रहें। विश्राम में चले जायें—ताकि तीसरी-आंख पर एकत्रित हो गयी ऊर्जा अपना काम कर सके।

८. देववाणी ध्यान

देववाणी का अर्थ है, परमात्मा की वाणी। ध्यान के इस प्रयोग के समय निरन्तर भाव करना है कि परमात्मा ही हमारे माध्यम से बोल रहा है, चल रहा है, हिल रहा है और हम

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मात्र वाहन हैं—खाली घड़े, जिसके भीतर सेपरमात्मा ही बोलता और गति करता है।

इस विधि के दूसरे चरण का प्रयोग कहीं भी और कभी भी—नहाते हुए, गाड़ी चलाते हुए, काम करते हुए—किया जा सकता है। यह किसी भी प्रार्थना से अधिक शक्तिशाली है। ओल्ड टेस्टामेन्ट में इस तरह की बोली को "ग्लोसोलेलिया"—यानी देववाणी कहा गया है।

इस ध्यान के चार चरण हैं और प्रत्येक चरण पन्द्रह-पन्द्रह मिनट का है। पूरे ध्यान के क्रम में आंखें बन्द रहेंगी।

पहला चरण

...शान्त बैठ जाओ और संगीत को सुनो। बस, और कुछ नहीं करना है।

दूसरा चरण

जब संगीत बन्द हो जाये तब तुम्हें देववाणी के लिए वाहन बन जाना है।

अब धीरे-धीरे और हौले-हौले बोलना शुरू करो—ला...ला...ला...और ऐसा तब तक करते रहो जब तक तुम्हारे होठों से अपरिचित-से शब्द न निकलने लगें। इसे जीभ का लातिहान* बन जाने दो।

इस ध्यान के कुछ दिनों के ही प्रयोग के बाद ये शब्द अनभ्यस्त (अजनबी) भाषा का रूप ले लेंगे और तुम पाओगे कि तुम उसके पूरे-पूरे वाक्य बोल रहे हो।

यदि शब्द का आना रुक जाये तो फिर से ला...ला...ला...कहना शुरू करो। शब्द तब फिर से आने लगेंगे।

ध्यान रहे कि इसमें न तो चीखना-चिल्लाना है, न हंसना-रोना ही है। वैसा करने से लगेगा कि बोलना अर्थपूर्ण हो गया है। और यह कि वह मस्तिष्क के अनजाने भाग से नहीं आ रहा है। इन शब्दों को मस्तिष्क के उस भाग से आना है, जिसका इस्तेमाल तुम अपने बचपन में करते थे; जब तुमने बोलना शुरू नहीं किया था। इन्हें उस भाग से नहीं आना है जिससे तुम अब सारा दिन सोचते और बकते रहते हो।

तीसरा चरण

खड़े जाओ और देववाणी में बोलते रहो। साथ-ही-साथ लातिहान* के ढंग से शरीर को भी परमात्मा के इशारे पर हिलने को छोड़ दो। शरीर को मुलायम और ढीला रहने दो और शीघ्र ही तुम्हें तुम्हारे भीतर सूक्ष्म ऊर्जा का अनुभव होगा। और यही ऊर्जा तुम्हारे शरीर को हिलाये। तुम मत हिलो, ऊर्जा ही हिले-हिलाये।

चौथा चरण

लेट जाओ और पूरी तरह निष्क्रिय और निश्चल हो रहो।

* *बस, तुम नहीं हो जाओ और 'उसे' तुमसे होकर बहने दो, गति करने दो।*

* *इन्डोनेशिया के सन्त सुबुद्ध की ध्यान-विधि जिसमें शान्त-शिथिल खड़े होकर भीतर से जैसे भी 'वह' गति करना चाहे—बस, उसे बाहर अभिव्यक्त करने में सहयोग करते हैं।*

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

करना है कि परमात्मा ही हमारे माध्यम से बोल रहा है, चल रहा है, हिल रहा है और हम

संकेत—अगर आपके पास देववाणी ध्यान के पहले चरण के लिए विशेष रूप से तैयार किया गया संगीत का टेप-कैसेट न हो तो पहले चरण में शान्त बैठकर चारों ओर जो ध्वनियां हो रही है, उन्हें चुपचाप पन्द्रह मिनट तक सुनते रहें, फिर दूसरे चरण में प्रवेश करें।

९. प्रार्थना ध्यान

प्रार्थना एक भाव-दशा है—निसर्ग के साथ बहने की, एक होने की प्रक्रिया है। यदि प्रार्थना में तुम बोलना चाहो तो बोल सकते हो—लेकिन याद रहे कि तुम्हारी बातचीत अस्तित्व को प्रभावित नहीं करने जा रही है, वह तुम्हें प्रभावित करेगी। तुम्हारी प्रार्थना परमात्मा के मन को बदलने वाली नहीं है, वह तुम्हें बेशक बदल सकती है। और अगर वह तुम्हें नहीं बदलती है तो समझो कि वह मन की एक चालाकी भर है। यह विराट आकाश तुम्हारे साथ होगा, यदि तुम उसके साथ हो सको। इसके अतिरिक्त प्रार्थना का कोई दूसरा ढंग नहीं है। मैं प्रार्थना करने को कहता हूं—लेकिन यह ऊर्जा आधारित घटना हो, न कि कोई भक्ति की बात।

पहला चरण

तुम चुप हो जाओ; तुम अपने को खोल भर लो। दोनों हाथ सामने की ओर उठा लो। हथेलियां आकाशोन्मुख हों और सिर सीधा उठा हुआ रहे। और तब अनुभव करो कि अस्तित्व तुममें प्रवाहित हो रहा है।

जैसे ही ऊर्जा या प्राण तुम्हारी बांहों से होकर नीचे की ओर बहेगा, वैसे ही तुम्हें हल्के-हल्के कम्पन का अनुभव होगा।

तब तुम हवा में कंपते हुए पत्ते की भांति हो जाओ। शरीर को ऊर्जा से झनझना जाने दो—और जो भी होता हो, उसे होने दो। उसे पूरा सहयोग करो।

दूसरा चरण

दो या तीन मिनट के बाद—या जब भी तुम पूरी तरह भरे हुए अनुभव करो, तब तुम आगे झुक जाओ और माथे को पृथ्वी से लगा लो।

दोनों हाथ सिर के आगे पूरे फैले रहेंगे और हथेलियां भी पृथ्वी को स्पर्श करेंगी।

पृथ्वी की ऊर्जा के साथ दिव्य-उर्जा के मिलन के लिए तुम वाहन बन जाओ। अ पृथ्वी के साथ प्रवाहित होने का, बहने का अनुभव करो। अनुभव करो कि पृथ्वी औ स्वर्ग, ऊपर और नीचे, यिन और यांग, पुरुष और नारी—सब एक महा आलिंगन आबद्ध हैं। तुम बहो, तुम घुलो। अपने को पूरी तरह छोड़ दो और सर्व में निमज्जित जाओ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दोनो चरणों को छह बार और दुहराओ, ताकि सभी सात चक्रों तक ऊर्जा गति कर सके।

इन्हें अधिक बार भी दुहराया जा सकता है, लेकिन सात से कम पर छोड़ा तो बेचैनी अनुभव होगी—रात में न सो सकोगे।

अच्छा हो कि यह प्रार्थना रात में करो। प्रार्थना के समय कमरे को अन्धेरा कर लो और उसके बाद तुरन्त सो जाओ।

सुबह में भी इसे किया जा सकता है, लेकिन तब अन्त में पन्द्रह मिनट का विश्राम आवश्यक हो जायेगा। अन्यथा तुम्हें लगेगा कि तुम तन्द्रा में हो—नशे में हो। यह ऊर्जा में निमज्जन प्रार्थना है। यह प्रार्थना तुम्हें बदलेगी। और तुम्हारे बदलने के साथ ही अस्तित्व भी बदल जायेगा।

१०. सामूहिक प्रार्थना ध्यान

सामूहिक प्रार्थना ध्यान के लिए कम-से-कम तीन व्यक्ति होने चाहिए। बड़ी संख्या के साथ करना अधिक श्रेयस्कर है। और संध्या का समय सर्वाधिक योग्य है इसके लिए।

पहला चरण

एक घेरे में खड़े हो जाओ, आंखें बन्द कर लो और अगल बगल के मित्रों के हाथ अपने हाथ में ले लो। फिर धीरे-धीरे, लेकिन आनन्दपूर्वक और तेज स्वर में 'ओम्'—ऐसा उच्चार शुरू करो। बीच-बीच में, उच्चार के अन्तराल के बीच एक मौन की घाटी को प्रविष्ट होने दो। अपनी और अपने परिवेश की दिव्यता और पूर्णता का अनुभव करो और अपने अहंकार को घुलकर उच्चार में निमज्जित हो जाने दो।

जिनके पास आंखें हैं, वे देखेंगे कि समूह के बीच से ऊर्जा का एक स्तम्भ ऊपर उठ रहा है। कोई अकेला आदमी बहुत-कुछ नहीं कर सकता है—लेकिन, यदि पांच सौ व्यक्ति सम्मिलित होकर इस प्रार्थना में योग दें, तो इसकी बात ही कुछ और है।

दूसरा चरण

दस मिनट के बाद, समूह के नेता के इशारे पर जब हाथ से हाथ छूटकर नीचे आ जायें, तब सब कोई जमीन पर झुक जाओ पृथ्वी माता को प्रणाम करो, और ऊर्जा को पृथ्वी में प्रविष्ट हो जाने दो।

११. रात्रि-ध्यान

रात्रि, सोने के पूर्व, बिस्तर पर लेट जायें, कमरे में अन्धेरा कर लें, और आंख बन्द कर के जोर से श्वास मुंह से बाहर निकालें।

निकालने से शुरू करें—एग्जेहलेशन, लेने से नहीं, निकालने से। जोर से श्वास मुंह से बाहर निकालें, और निकालते समय 'ओऽऽऽऽऽऽ' की ध्वनि करें। जैसे-जैसे ध्वनि

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

साफ होने लगेगी, 'ओम्' अपने-आप निर्मित हो जायेगा; आप सिर्फ ओऽऽऽऽऽऽऽ.... का उच्चार करें। ओम् का आखिरी हिस्सा, अपने-आप, जैसे ध्वनि व्यवस्थित होगी—आने लगेगा।

आपको 'ओम्' नहीं कहना है, आपको सिर्फ 'ओ' कहना है—'म्' को आने देना है। पूरी श्वास को बाहर फेंक दें, फिर होंठ बन्द कर लें और शरीर को श्वास लेने दें। आप मत लें।

निकालना आप को है, लेना शरीर को है, लेने का काम शरीर कर लेगा। श्वास रोकनी नहीं है। लेते समय आप को कुछ भी नहीं करना है—न लेना है, न रोकना है—बस, छोड़ना है।

तो दस मिनट तक ओऽऽऽऽऽऽऽ की आवाज़ के साथ श्वास को छोड़ें—मुंह से; फिर नाक से श्वास लें, फिर मुंह से छोड़े फिर नाक से लें...और ऐसे ओऽऽऽ की आवाज करते-करते सो जायें।

इससे निद्रा गहरी और स्वप्नहीन हो जायेगी तथा सुबह उठने पर एक अपूर्व ताजगी का अनुभव होगा।

१२. जिबरिश

अंग्रेजी का 'जिबरिश' शब्द 'जब्बार' नाम के एक सूफी सन्त से बना है। जब्बार अक्सर अनर्गल, अनाप-शनाप भाषा में बोला करते थे। वे इस भांति बोलते थे कि कोई समझ नहीं पाता था कि वे क्या बोल रहे हैं। इसलिए लोगों ने उनकी भाषा को 'जिबरिश' नाम ही दे दिया—जब्बार से जिबरिश।

ईसाइयों के एक मत में इस तरह के ध्यान को ग्लासोलेलिया कहते हैं; टाकिंग इन टंग्ज।

अतः इस ध्यान-प्रयोग में आपको भी जब्बार बन जाना है।

यह एक घन्टे का ध्यान है; बीस-बीस मिनट के तीन चरण हैं।

सायं तीन से छह बजे के बीच इसे करें।

पहला चरण

खुले आकाश के नीचे विश्रामपूर्ण मुद्रा में लेट जायें और खुली आंख से आकाश में देखें।

किसी बिन्दु-विशेष पर नहीं, बल्कि सम्पूर्ण आकाश में।

दूसरा चरण

अब बैठ जायें, आंखें खुली रखें और आकाश के सामने जिबरिश में—यानी अर्थहीन, अनाप-शनाप बोलना शुरू करें। बीस मिनट के लिए 'जब्बार-जैसे' बन जायें—जो भी मन में आये, बोलें। चीखें, चिंघाड़ें किलकारियां मारें, ठहाके लगायें—कुछ भी।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लेकिन इसे सार्थक बनाने की कोशिश न करें। क्योंकि तब इसका कोई अर्थ नहीं रह जायेगा; तब सब व्यर्थ हो जायेगा। ध्यान रहे, आप किसी व्यक्ति से नहीं, वृहत् आकाश से बोल रहे हैं! और आकाश कुछ भी नहीं समझता। भाषा इसमें सहयोगी नहीं है। भाषा से मन का कभी अतिक्रमण नहीं होता। आकाश के सामने, आकाश के समक्ष ऊल-जलूल बात करने से मन तत्काल गिर जाता है; उसकी जरूरत ही नहीं रह जाती है। लेकिन मन कहेगा—यह क्या कर रहे हो? पागल हो गये हो? पर मन की न सुनें। उसे कह दें—जरा प्रतीक्षा करो, जो मैं करता हूं, मुझे करने दो।

बस, बीस मिनट इसका खूब मजा लें।

तीसरा चरण

शांत हो जायें, आंखें बन्द कर लें और विश्राम में चले जायें। अब भीतर के आकाश में—अन्तर्आकाश में झांकें।

बीस मिनट अनाप-शनाप बक चुकने पर आप अपने को इतने शांत और आकाशवत् महसूस करेंगे कि आप कल्पना भी नहीं कर सकते कि आपके भीतर इतना बड़ा आकाश है!

लेकिन, इसे अकेले करें।

१३. शिवनेत्र ध्यान

यह एक घन्टे का ध्यान है और इसमें दस-दस मिनट के छह चरण हैं। साधकों के सामने जरा हटकर, थोड़ी ऊंचाई पर, एक नीले रंग का प्रकाश—यानी बिजली का बल्ब जलता है, जो प्रकाश को घटाने-बढ़ाने वाले एक यन्त्र[१] के द्वारा, दस मिनट में तीन बार, बारी-बारी धीमा और तेज किया जाता है। उसके सहारे ही यह ध्यान संचालित होता है।

पहला चरण

बिल्कुल स्थिर बैठें। हल्के-हल्के, बिना आंखों में कोई तनाव लाये सामने जल रहे प्रकाश को देखें।

दूसरा चरण

आंखें बन्द कर लें और कमर से ऊपर के भाग को हौले-हौले दायें से बायें और बायें से दायें हिलायें। और साथ-ही-साथ यह भी अनुभव करते रहें कि आपकी आंखों ने पहले चरण के समय जो प्रकाश पीया है, वह अब 'शिवनेत्र'—यानी 'तीसरी आंख' में प्रवेश कर रहा है।

यह सचमुच घटित होता है।

दोनों चरणों को बारी-बारी तीन बार दोहराएं।

---

१. प्रकाश को घटाने-बढ़ाने वाले।यंत्र (डिमिंग स्विच) के साथ ३०० वॉट का नीले रंग का प्रकाश इसके लिए आदर्श है, लेकिन साधारण नीले प्रकाश या मोमबत्ती से भी काम चलाया जा सकता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१४. अग्निशिखा ध्यान

अच्छा हो कि शाम के समय अग्निशिखा ध्यान किया जाये। और यदि मौसम गर्म हो तो कपड़े उतार कर। इस ध्यान-विधि में पांच-पांच मिनट के तीन चरण हैं।

पहला चरण

कल्पना करें कि आपके हाथ में एक ऊर्जा का गोला है—गेंद है। थोड़ी देर में यह गोला कल्पना से यथार्थ-सा हो जायेगा। वह आपके हाथ पर भारी हो जायेगा।

दूसरा चरण

उर्जा की इस गेंद के साथ खेलना शुरू करें। इसके वजन को, इसके द्रव्यमान को अनुभव करें। जैसे-जैसे यह ठोस होता जाये, इसे एक हाथ से दूसरे हाथ में फेंकना शुरू करें। यदि आप दक्षिणहस्तिक हैं तो दायें हाथ से शुरू करें और बायें हाथ से अन्त; और यदि वामहस्तिक हैं तो यह प्रक्रिया उलटी होगी।

गेंद को हवा में उछालें, अपने चारों ओर उछालें, अपने पैरों के बीच से उछालें—लेकिन ध्यान रखें कि गेंद जमीन पर न गिरे। अन्यथा खेल फिर से शुरू करना पड़ेगा। इस चरण के अन्त में गेंद को बायें हाथ में लिए हुए दोनों हाथ सिर के ऊपर उठा लें और फिर गेंद को दोनों हथेलियों के बीच में रख लें। अब गेंद को नीचे लायें और अपने सिर पर आकर उसे टूट-फूट जानें दें; ताकि उसकी ऊर्जा से आपका शरीर आपूरित हो जाये। कल्पना करें कि आप पर ऊर्जा की वर्षा हो रही है—और आपके शरीर के चारों ओर ऊर्जा का आवरण बन गया है।

अब आपके चारों तरफ से ऊर्जा आपकी तरफ आकर्षित होने लगेगी; उसकी पर्त-दर-पर्त आप पर बरसेगी। यहां तक कि दूसरे चरण के अन्त में आप ऊर्जा की सात पर्तों में समा जायेंगे।

भाव के साथ नाचें, इसका मजा लें, इसमें स्नान करें— और अपने शरीर को भी इस उत्सव में भाग लेने दें।

तीसरा चरण

जमीन पर झुक जायें और दोनों हाथों को प्रार्थना की मुद्रा में सामने फैला दें—और फिर कल्पना करें कि आप ऊर्जा की अग्निशिखा हैं—आपसे होकर ऊर्जा भूमि से ऊपर उठ रही है। धीरे-धीरे आपके हाथ, आपकी भुजायें आपके सिर के भी ऊपर उठ जायेंगी और आप का शरीर अग्निशिखा का आकार ले लेगा।

१५. त्राटक ध्यान—१

यह ध्यान चालीस मिनट का है और इसमें बीस-बीस मिनट के दो चरण हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पहला चरण

पांच या छह फुट की ऊंचाई पर भगवान रजनीश का एक बड़ा-सा फोटो दीवार पर इस प्रकार टांगें, कि फोटो पर पर्याप्त प्रकाश पड़े। शरीर पर कम-से-कम और ढीले वस्त्र रखें। फोटो से चार-पांच फुट की दूरी पर खड़े हो जायें। दोनों हाथ ऊपर उठायें, एकटक भगवान श्री के फोटो को देखें—और 'हू-हू-हू' की तीव्र आवाज लगातार करते हुए उलछना शुरू करें। भगवान श्री की उपस्थिति अनुभव करें और 'हू-हू' की आवाज तेज करें। न आंखें बन्द करें, न पलकें झपकायें। आंसू आते हों तो आने दें। आंखें फोटो पर एकाग्र रखें और शरीर में जो भी कम्पने और क्रियायें होती हों, उसे सहयोग करके तीव्र करें।

महामन्त्र—'हू' की चोट से भीतर की काम-ऊर्जा ऊपर की ओर उठेगी तथा भगवान श्री के फोटो से दिव्य-ऊर्जा का शक्तिपात आप पर होता रहेगा।

दूसरा चरण

अब सारी क्रियायें—'हू-हू' की आवाज, उछलना और भगवान श्री के चित्र को एकटक देखना—सब बन्द कर दें। शरीर को बिल्कुल स्थिर कर लें, आंखें मूंद लें और भीतर की ऊर्जा को अनुभव करें। गहरे ध्यान में डूब जायें। बीस मिनट के बाद गहरे ध्यान से वापिस लौट आयें।

इस प्रकार यह त्राटक ध्यान पूरा होगा।

१६. त्राटक ध्यान—२

यह प्रयोग एक घण्टे का है। पहला चरण चालीस मिनट का और दूसरा बीस मिनट का।

पहला चरण

कमरे को चारों और से बन्द कर लें और एक बड़े आकार का दर्पण अपने सामने रखें। कमरा बिल्कुल अन्धेरा होना चाहिए। अब एक दीपक या मोमबत्ती जलाकर दर्पण के बगल में इस प्रकार रखें कि उसकी रोशनी सीधी दर्पण पर न पड़े। सिर्फ आपका चेहरा ही दर्पण में प्रतिबिम्बित हो, न कि दीपक की लौ। अब दर्पण में अपनी दोनों आंखों मे बिना पलक झपकाये देखते रहें—लगातार चालीस मिनट तक। अगर आंसू निकलते हों तो उन्हें निकलने दें, लेकिन पूरी कोशिश करें कि पलक गिरने न पाये। आंखों की पुतलियों को भी इधर-उधर न घूमने दें—ठीक दोनों आंखों में झांकते रहें।

दो-तीन दिन के भीतर ही विचित्र घटना घटेंगी—आपके चेहरे दर्पण में बदलने प्रारम्भ हो जायेंगे। आप घबरा भी सकते हैं। कभी-कभी बिल्कुल दूसरा चेहरा आपको दिखाई देगा जिसे आपने कभी नहीं जाना है कि वह आपका है। पर ये सारे चेहरे आपके ही हैं। अब आपके अचेतन मन का विस्फोट प्रारम्भ हो गया है। कभी-कभी आपके विगत जन्म

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri
के चेहरे भी उसमें आयेंगे। करीब एक सप्ताह के बाद यह शक्ल बदलने का क्रम बहुत तीव्र हो जायेगा; बहुत सारे चेहरे आने-जाने लगेंगे, जैसा कि फिल्मों में होता है। तीन सप्ताह के बाद आप पहचान न पायेंगे कि कौन-सा चेहरा आपका है। आप पहचानने में समर्थ न हो पायेंगे, क्योंकि इतने चेहरों को आपने आते-जाते देखा है। अगर आपने इसे जारी रखा, तो तीन सप्ताह के बाद, किसी भी दिन, सबसे विचित्र घटना घटेगी—अचानक आप पायेंगे कि दर्पण में कोई चेहरा नहीं है—दर्पण बिल्कुल खाली है और आप शून्य में झांक रहे हैं ! यही महत्त्वपूर्ण क्षण है।

तभी आंखें बन्द कर लें और अपने अचेतन का साक्षात् करें। जब दर्पण में कोई प्रतिबिम्ब न हो, तो सिर्फ आंखें बन्द कर लें, भीतर देखें—और आप अचेतन का साक्षात् करेंगे।

वहां आप बिल्कुल नग्न हैं—निपट जैसे आप हैं। सारे धोखे वहां तिरोहित हो जायेंगे। यह एक सत्य है, पर समाज ने बहुत-सी पर्तें निर्मित कर दी हैं ताकि मनुष्य उससे अवगत न हो पाये। एक बार आप अपने को पूरी नग्नता में देख लेते हैं, तो आप बिल्कुल दूसरे आदमी होने शुरू हो जाते हैं। तब आप अपने को धोखा नहीं दे सकते हैं। अब आप जानते हैं कि आप क्या हैं। और जब तक आप यह नहीं जानते कि आप क्या हैं, आप कभी रूपान्तरित नहीं हो सकते। कारण, कोई भी रूपान्तरण इस नग्न-सत्य के दर्शन में ही सम्भव है; यह नग्न-सत्य किसी भी रूपान्तरण के लिए बीजरूप है। अब आपका असली चेहरा सामने है, जिसे आप रूपान्तरित कर सकते हैं। और वास्तव में, ऐसे क्षण में रूपान्तरण की इच्छा मात्र से रूपान्तरण घटित हो जायेगा; और कुछ भी करने की जरूरत नहीं है।

दूसरा चरण

अब आंखें बन्द कर विश्राम में चले जायें।

१७. त्राटक ध्यान—३

यह प्रयोग बहुत शक्तिशाली है और बेजोड़ असरदार भी। खासकर, जब इसे ऐसे विषय पर किया जाये जो मन को बेहद पसन्द हो।

त्राटक की यह विधि यों तो मन की किसी भी प्रिय वस्तु पर की जा सकती है, लेकिन ज्यादा अच्छा है भगवान श्री के चित्र पर त्राटक करना। इसके लिए आप भगवान श्री का ऐसा चित्र उपयोग में लायें, जिसमें उनकी आंखें—आप कहीं से भी देखें—आपकी ओर देखती हों।

त्राटक करते समय चित्र को अपने सिर से थोड़ा ऊपर रखें : सूरज डूबने के पूर्व या सोने के पहले इसे किया जा सकता है। यह एक घण्टे का ध्यान है और सिर्फ दो चरणों का। पहला चरण है चालीस मिनट का और दूसरा है बीस मिनट का।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पहला चरण

सबसे पहली बात, इस प्रयोग में चालीस मिनट तक लगातार अपलक ताकते रहना है। सारी चेतना आंखों में इकट्ठी हो जाये—इसलिए आपको बिल्कुल आंख ही हो जाना है। हर चीज को, पूरे शरीर को बिल्कुल ही भूल जायें और सिर्फ आंख बन जायें। बिना पलक झपकाये सिर्फ देखते रहें। आंखों में इस तरह केन्द्रित होकर चेतना आपको तनाव की चरम सीमा तक ले जायेगी। आंख शरीर में सबसे ज्यादा कोमल और सुकुमार हिस्सा है। यही कारण है शरीर के किसी दूसरे अंग की बजाय आंखें बहुत जल्दी तनावपूर्ण हो सकती हैं। और आंखों के तनावपूर्ण होने से पूरा मनस् ही तनावपूर्ण हो जाता है। आंखें मन के द्वार भर हैं।

जब आप मात्र आंख ही रह जाते हैं तो मन का तनाव बढ़ते-बढ़ते अपनी आखिरी सीमा तक पहुंच जाता है। और तनाव के उस चरम शिखर से गिरने पर विश्राम की परम घाटी को आप उपलब्ध होते है। विचारों का चलना स्वतः रुक जाता हैं। और धीरे-धीरे, जैसे-जैसे आप इसमें आगे बढ़ते हैं, चेतना आंखों में और भी ज्यादा केन्द्रित होती जाती है।

तो आप, बस, सिर्फ होश से भर रहेंगे; भीतर कोई चिन्तन नहीं चल सकेगा। क्योंकि आंखें विचार नहीं कर सकती हैं।

आंखों के द्वारा कोई भी चिन्तन सम्भव नहीं है। जब सम्पूर्ण चेतना आंखों में केन्द्रित हो जाती है, तो मन को सोचने के लिए कोई ऊर्जा ही नहीं मिल पाती है। और फलस्वरूप मन में विचारों का उठना तत्क्षण रुक जाता।

तो जब आंखें झपकना चाहती हों, तो उसी क्षण सचेत होने और इस स्थिति को दूर हटाने की जरूरत है; क्योंकि सोचने के लिए उर्जा प्राप्त करने की यह मन ही कोशिश कर रहा है।

यही कारण है कि प्रयोग के समय निरन्तर स्थिर दृष्टि से अपलक देखते रहने की आवश्यकता है। आंखों के थोड़ा-सा हिलने से भी मन को सक्रिय होने के लिए ऊर्जा मिल जाती है। इसलिए, आंखों को हिलायें नहीं, सिर्फ स्थिर-दृष्टि से अपलक देखते रहें जब आंखों को बिना हिलाए अपलक देखते हैं तो मन भी स्थिर हो जाता है।

मन आंखों के साथ ही गति करता है। आंखें मन का बाह्य अंग हैं, उसी का दूसरा छोर है। आंखें द्वार हैं, वैसा द्वार जो अन्दर की ओर मन में खुलता है और बाहर की ओर संसार में भी। आंखें अगर पूर्णतया स्थिर हो जायें तो मन वस्तुतः रुक जाता है—चाहने पर भी चल नहीं सकता। अगर मन रुक जाता है, तो आपकी आंखों का हलन-चलन भी रुक जाता है।

अतः इस प्रयोग में आंखों से शुरू करना है, क्योंकि मन से शुरू करना अति कठिन है। आंख बाह्य चीज है और आप इसके साथ कुछ कर सकते हैं।

तो, सामने रखे चित्र की दोनों आंखों में सिर्फ अपलक देखते रहें। चित्र की दोनों आंखों से आपकी दोनों आंखें बिल्कुल बंध जायें। कोई गति न हो—और शरीर भी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बिल्कुल स्थिर हो। आंसू बहने लगें तो बहने दें।

सिर्फ दोनों आंखों में अपलक देखते रहने से ही भीतर कुछ घटित होना शुरू हो जाता है।

दूसरा चरण

आंखें बन्द कर पूर्ण विश्राम में चले जायें—लेट जायें।

इस प्रयोग का राज यह है कि स्थिर-दृष्टि मन को भी स्थिर करती है। और मन की बजाय आंखों को स्थिर करना ज्यादा सुगम है।

संकेत—भगवान श्री ने अन्यत्र एक जगह इस सन्दर्भ में कहा है—

'यह प्रयोग करते-करते, ध्यान में थोड़ी गहराई बढ़ने के बाद, चित्र पर एकाग्र दृष्टि जमाने पर एक समय ऐसा आयेगा कि चित्र अदृश्य हो जायेगा; वहां बिल्कुल शून्य प्रतीत होगा।'

'तब, जैसे ही चित्र शून्य हो जाये, आंखें बन्द कर लें। ऐसे क्षण में मुझसे सम्पर्क स्थापित हो सकता है। उसमें समय और दूरी कोई व्यवधान नहीं डाल सकते।'

आगे उन्होंने कहा है—'मैं जब तक इस शरीर में हूं, यह सम्पर्क बना लेना बिल्कुल ही आसान है। मेरे शरीर के छूटने के बाद, फिर बहुत कठिनाई होगी। और अगर अभी सम्पर्क सध जाये, तो मेरे शरीर के छूटने के बाद भी सम्पर्क मुझसे बना रहेगा।'

१८. कीर्तन ध्यान

कीर्तन अवसर है—परमात्मा के प्रति अपने आनन्द और अहोभाव को निवेदित करने का। उसकी कृपा से जो जीवन मिला, जो आनन्द और चैतन्य मिला, उसके लिए परमात्मा के प्रति हमारे हृदय में जो प्रेम और धन्यवाद का भाव है, उसे हमे कीर्तन में नाचकर, गाकर, उसके नाम-स्मरण की धुन में मस्ती में थिरककर अभिव्यक्त करते हैं। कीर्तन उत्सव है—भक्ति-भाव से भरे हुए हृदय का। व्यक्ति की भाव-ऊर्जा का समूह की भाव ऊर्जा में विसर्जित होने का अवसर है कीर्तन।

इस प्रयोग में शरीर पर कम और ढीले वस्त्रों का होना तथा पेट का खाली होना बहुत सहयोगी है।

कीर्तन ध्यान एक घन्टे का उत्सव है, जिसके पन्द्रह-पन्द्रह मिनट के चार चरण हैं। सन्ध्या का समय इसके लिए सर्वोत्तम है।

पहला चरण

पहले चरण में कीर्तन-मण्डली संगीत के साथ एक धुन गाती है—जैसे 'गोविन्द बोलो, हरि गोपाल बोलो, राधा रमण हरि गोपाल बोलो।'

इस धुन को पुनः गाते हुए आप नृत्यमग्न हो जायें। धुन और संगीत में पूरे भाव से डूबें और अपने शरीर और भावों को बिना किसी सचेतन व्यवस्था के थिरकने तथा नाचने दें।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नृत्य और धुन की लयबद्धता में अपनी भाव-ऊर्जा को सघनता और गहराई की ओर विकसित करें।

दूसरा चरण

दूसरे चरण में धुन का गायन बन्द हो जाता है, लेकिन संगीत और नृत्य जारी रहता है।

अब संगीत की तरंगों से एकरस होकर नृत्य जारी रखें। भावावेगों एवं आन्तरिक प्रेरणाओं को बच्चों की तरह निस्संकोच होकर पूरी तरह से अभिव्यक्त होने दें।

तीसरा चरण

तीसरा चरण पूर्ण मौन और निष्क्रियता का है।

संगीत के बन्द होते ही आप अचानक रुक जायें। समस्त क्रियायें बन्द कर दें और विश्राम में डूब जायें। जाग्रत हुई भाव-ऊर्जा को भीतर-ही-भीतर काम करने दें।

चौथा चरण

चौथा चरण पूरे उत्सव की पूर्णाहुति का है।

पुनः शुरू हो गये मधुर संगीत के साथ आप अपने आनन्द, अहोभाव और धन्यवाद के भाव को नाचकर पूरी तरह से अभिव्यक्त करें।

१९. सूफी दरवेश नृत्य

यह एक प्राचीन सूफी विधि है, जो हमें चैतन्य साक्षी में केन्द्रित करती है। इस विधि की शान्त, मद्धम, संगीतपूर्ण लयबद्ध स्वप्निलता हमें अपने आत्म-स्रोत को अनुभव करने में विशेष सहयोगी है।

लम्बे समय तक शरीर के गोल घूमने से चेतना का तादात्मय शरीर से टूट जाता है—शरीर तो घूमता रहता है, परन्तु भीतर एक अकम्प, अचल चैतन्य का बोध स्पष्ट होता चला जाता है।

इस प्रयोग को शुरू करने से तीन घन्टे पूर्व तक किसी भी प्रकार का आहार या पेय नहीं लेना चाहिए, ताकि पेट हल्का और खाली हो।

शरीर पर ढीले वस्त्र रहें तथा पैर में जूते या चप्पल न हो तो ज्यादा अच्छा है।

इसके लिए समय का कोई बन्धन नहीं है, आप घन्टों इसे कर सकते हैं।

सूर्यास्त के पहले का समय इस प्रयोग के लिए सर्वोत्तम है। यह केवल दो चरणों का ध्यान है।

पहला चरण :

अपनी जगह बना लें जहां आपको घूमना है। आंखें खुली रहेंगी। अब दाहिने हाथ को ऊपर उठा लें—कन्धों के बराबर ऊंचाई तक, और उसकी खुली हथेली को आकाशोन्मुख रखें।

फिर बायें हाथ को उठाकर नीचे इस तरह से झुका लें कि हथेली जमीन की ओर उन्मुख

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रहे। दायीं हथेली से ऊर्जा आकाश से ली जाएगी और बायीं हथेली से पृथ्वी को लौटा दी जाएगी।

अब इसी मुद्रा में एन्टि-क्लॉकवाइज — याने दायें से बायें — लट्टू की ती तरह गोल घूमना शुरू करें। यदि एन्टि-क्लॉकवाइज घूमने में कठिनाई महसूस हो, तो क्लॉकवाइज — याने बायें से दायें — घूमें। घूमते समय शरीर और हाथ ढीले हों — तने हुए न हों। धीमे-धीमे शुरू कर गति को लगातार बढ़ाते जायें — जब तक कि गति आपको पूरा ही न पकड़ ले।

गति के बढ़ाने से चारों ओर की वस्तुयें और पूरा दृश्य अस्पष्ट होने लगेगा, तब आंखों से उन्हें पहचानना छोड़ दें और उन्हें और अधिक अस्पष्ट होने में सहयोग दें। वस्तुओं, वृक्षों और व्यक्तियों की जगह एक प्रारम्भहीन और अन्तहीन गोला-प्रवाह-मात्र रह जाये।

घूमते समय ऐसा अनुभव करें कि पूरी घटना का केन्द्र नाभि है और सब-कुछ नाभि के चारो ओर हो रहा है। इसमें किसी प्रकार की आवाज या भावावेंगों का रेचन, कैथार्सिस न करें। जब आपको लगे कि अब आप और नहीं घूम सकते, तो इतनी तेजी से घूमें कि आपका शरीर और आगे घूमने में असमर्थ होकर आप-ही-आप जमीन पर गिर पड़े। याद रहे, भूलकर भी व्यवस्था से न गिरें। यदि आपका शरीर ढीला होगा, तो जमीन पर गिरना भी हल्के-से हो जायेगा और किसी प्रकार की चोट नहीं लगेगी। मन का कहना मानकर शरीर को समय से पहले न गिरने दें।

दूसरा चरण

गिरते ही पेट के बल लेट जायें, ताकि आपकी खुली हुई नाभि का स्पर्श पृथ्वी से हो सके। यदि पेट के बल लेटने में अड़चन होती हो, तो ही पीठ के बल लेटें। पूरे शरीर का — नाभि सहित — पृथ्वी से स्पर्श होने दें। पृथ्वी से एक छोटे बच्चे की भांति चिपक जायें और उन दिनों की अनुभूतियों की पुनरुज्जीवित कर लें, जब आप छोटी उम्र में अपनी मां की छाती से चिपके रहा करते थे। अब आंखें बन्द कर लें और शान्त और शून्य होकर इस स्थिति में कम-से-कम पन्द्रह मिनट तक पड़े रहें। अनुभव करें कि नाभि के माध्यम से आप पृथ्वी से एक हो गये हैं — व्यक्ति विसर्जित हो गया है विराट् में; व्यक्ति मिट गया है और परमात्मा ही रह गया है।

२०. ओंकार-साधना

खाली बैठ जाओ, होंठ बन्द कर लो, जीभ को तालू से लग जाने दो, रीढ़ सीधी हो और तुम भीतर ओंकार का नांद करने लगो। ओंकार के नाद को भीतर करने का मतलब है कि तुम ओंठ से आवाज बाहर मत निकालो, अन्दर ही गुंजाओ। लेकिन गुंजाओ इतने जोर से कि बाहर लोगों को सुनाई पड़े। ओंठ से न निकले, सुनाई जरूर पड़े। तुम्हारे रोएं-रोएं से निकले, तुम एक गूंज बन जाओ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बड़ा मीठा अनुभव होता है; भीतर जैसे अमृत झरने लगता है थोड़े ही दिनों में। और यह अभी असली ओंकार नहीं है! नकली ओंकार इतना कर देता है तो असली की तो बात ही मत करो; उसकी तो कोई तुलना ही नहीं हो सकती। तुम सिर्फ आंख बन्द करके, रीढ़ सीधी करके—रीढ़ सीधी इसलिए ताकि तुम्हारे भीतर सारा शून्य सीधा खड़ा हो जाये और तुम ओंकार को गुंजाने लगो। जब श्वास बाहर जाए तो तुम ओंकार की ध्वनि करो—ओम्...ओम्...जब श्वास भीतर जायेगी तब तो ध्वनि न कर पाओगे। तो एक रिदम, एक लय पैदा हो जायेगी। श्वास बाहर जायेगी, तुम श्वास को ओंकार की ध्वनि से भर दो! फिर श्वास भीतर जाएगी, शून्य रहेगा फिर श्वास बाहर जाएगी फिर ओंकार की ध्वनि।

करो इतने जोर से कि बाहर कोई गुजरता हो तो उसे सुनाई पड़े। जैसे एक मधुमक्खियों का जत्था जा रहा हो तो एक गूंज मालूम पड़ती है, ऐसी ही गूंज बाहर मालूम पड़ेगी। और वह गूंज तुम्हारे शरीर को भी स्वस्थ करेगी तुम्हारे बिखरे मन को बांधेगी और तुम्हारे भीतर एक अपूर्व शान्ति का जन्म होगा—और एक मस्ती छा जायेगी।

ध्वनि की अपनी सुरा है। इसीलिए तो संगीत सुनते-सुनते तुम्हारा सिर हिलने लगता है; जैसे शराबी का हिल रहा हो। संगीत की अपनी सुरा है; वैसी सूक्ष्म कोई भी सुरा नहीं; और सब शराबें स्थूल हैं।

अगर तुमने अपने भीतर ओंकार के नाम को गुंजाया—और ध्यान रखना कि यह तुम्हारा नाद है, अभी तुम्हें असली नाद का पता ही नही है; तो भी तुम्हारे भीतर एक मस्ती पैदा होगी; तुम एक मदमस्ती में जीने लगोगे। तुम चलोगे और ढंग से, स्फूर्ति और होगी; उठोगे और ढंग से, आंखों में एक नशा छाया रहेगा। जैसे जिन्दगी में पहली दफा एक उत्सव की घड़ी आयी है।

अगर तुम इस तरह ओंकार की ध्वनि करते रहो—करते रहो, करते रहो, करते रहो—तो किसी दिन अचानक तुम पाओगे कि तुम्हारी धुन तो जारी ही है, एक और धुन तुम्हारे भीतर पैदा हो रही है। वह उसी दिन पैदा होती है, जिस दिन तुम्हारी वीणा पूरी कस जाती है और तैयार होती है; साज राजी होता है। उस दिन तुम पाओगे—एक धुन तो तुम कर रहे हो, जो अब कुछ भी नहीं है; एक फीका स्वर है; कार्बन कॉपी है—असली धुन अब पैदा हो रही है।

तब तुम अपनी धुन को बन्द कर देना, तब तुम सुनने वाले बन जाना। अब तक तुम कर्त्ता थे, अब तुम सुनने वाले बन जाना। अब तुम आंखें गड़ा लेना भीतर। अब तुम प्राणों को थाम लेना; क्योंकि भीतर जो घट रहा है, वह अपूर्व है; वह अतुलनीय है; उसकी कोई उपमा नहीं है। भीतर अमृत की धार बहने लगेगी; रोआं-रोआं किसी अपूर्व प्रकाश से भर जायेगा अन्धकार गया, दुर्दिन गये—महासुख बरसेगा। मिलन का क्षण करीब आ गया!

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ओंकार तुम शुरू करो मगर तुम खींचे मत जाना, और प्रतीक्षा करना उस दिन की, जिस दिन भीतर का ओंकार फूटने लगे। उस दिन तुम जिद मत करना अपने ओंकार को थोपने की। उस दिन तुम बिल्कुल चुप हो जाना। तुम्हारा ओंकार तो सिर्फ आयोजन था; ताकि रास्ता बन जाये उस ओंकार के बहने के लिए; ताकि तुम्हारे यन्त्र से मार्ग बन जाये उस ओंकार को झेलने के लिए। तुम्हारा ओंकार तो सिर्फ पूर्व तैयारी थी, रिहर्सल था। असली नाटक तो तब शुरू होता है, जब तुम्हारा ओंकार तो गया और उसका ओंकार शुरू हुआ.

एक ओंकार सतनाम।

२१. मन्त्र-साधना

मन को जो मार दे, वह मन्त्र है। मन की जिससे मृत्यु घटित हो जाये, वह मन्त्र है। और मन जब नहीं रह जाता, तो तुम्हारे और शरीर के बीच जो सेतु है वह टूट जाता है। मन ही जोड़े हुए है तुम्हें शरीर से। अगर बीच का सेतु बीच का सम्बन्ध टूट जाये, तो शरीर अलग, तुम अलग हो जाते हो। और जिसने जान लिया अपने को शरीर से अलग और मन से शून्य, वह शिवत्व को उपलब्ध हो जाता है। वह परम केवली है।

इसलिए मन्त्र को समझ लो, उसका प्रयोग जीवन में क्रांति ला सकता है। पर एक-एक कदम बढ़ना जरूरी है; और धैर्य रखना होगा। मन्त्र बहुत धीरज का प्रयोग है। अधैर्य जिनके मन में बहुत ज्यादा है, उन्हें मन्त्र से लाभ न होगा; नुकसान हो सकता है। क्योंकि वैसे ही तुम काफी परेशान हो; मन्त्र एक और नयी परेशानी बन जायेगी, अगर अधैर्य हुआ।

तो मन्त्र के साथ अत्यन्त धैर्य चाहिए; अन्यथा उस झंझट में मत पड़ना। फल की बहुत जल्दी आकांक्षा मत करना। वह जल्दी आयेगा भी नहीं; क्योंकि वह परम फल है। यह कोई मौसमी फूल नहीं है कि बोया और पन्द्रह दिन के भीतर आ गया! जन्म-जन्म लग जाते है। और एक कठिन बात जो समझ लेने की है वह यह है कि जितना धैर्य हो, उतना जल्दी फल आ जायेगा; और जितना अधैर्य हो, उतनी ज्यादा देर लग जायेगी। एक आदमी जा रहा था रास्ते से; उसका जूता काट रहा था। जूता छोटा था; वह जूते को गालियां दे रहा था और परेशान था। नसरुद्दीन ने पूछा—'मेरे भाई, इतना तंग जूता कहां से खरीदा?' वह आदमी वैसे ही जला-भुना था, वैसे ही क्रोध में था, उसने कहा—'जूता कहां से खरीदा?...झाड़ से तोड़ा है!' नसरुद्दीन ने कहा—'मेरे भाई, थोड़ी देर रुक जाते तो पैर के नाप का तो हो जाता!...कच्चा तोड़ लिया?'

मन्त्र कभी कच्चा मत तोड़ना, नहीं तो बुरे फंस जाओगे। जूते को तो कोई फेंक दे, मन्त्र को फेंकना बहुत मुश्किल है; क्योंकि जूता तो बाहर है, मन्त्र भीतर होता है। और अगर गलती से मन्त्र में फंस गये, तो निकलना बहुत मुश्किल हो जाता है बहुत-से धार्मिक

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लोग पागल हो जाते हैं—उसका कारण है कि मन्त्र में फंस गये, कुछ जल्दी कर ली तोड़ने की; फल, पक नहीं पाया था, कच्चा तोड़ लिया।

पके तो फल बहुत मीठा हो जाता है; कच्चा बहुत तिक्त होगा, बहुत कड़वा होगा, जहरीला होगा। पहली पर्त है शरीर । तो मन्त्र का पहला प्रयोग शरीर से शुरू करना जरूरी है क्योंकि वहीं तुम हो; वहीं से इलाज शुरू होगा। अगर तुमने वह पर्त छोड़कर मन का इलाज शुरू किया, तो बीमारी तुम्हारी रह जायेगी—मिटेगी नहीं; कल नहीं परसों, कच्चा फल हाथ आयेगा।

ध्यान रखना, यात्रा वहीं से शुरू जा सकती है, जहां तुम खड़े हो; कहीं और से यात्रा की तो वह सपना है। तुम अभी शरीर हो, तो अभी मन्त्र को शरीर से शुरू करना होगा। उचित होगा कि प्रयोग खुले में मत करना, बन्द में करना। छोटा कमरा हो, बन्द हो—और बिल्कुल खाली हो; वहां कोई भी चीज न हो।

इसलिए मंदिर, मस्जिद या चर्च बहुत अच्छा है—जहां कुछ भी नहीं है; कोई सामान नहीं। या घर में एक कोना साफ कर लेना जहां कुछ भी नहीं है। वहां देवी-देवताओं को भी मत रखना, वे भी उपद्रव है; बिल्कुल खाली कर देना। बस, खालीपन ही एक परमात्मा है, बाकी सब चीजें मन का ही खेल हैं।

तो कमरे को बिल्कुल खाली रखना है। जितना शून्य हो, उतना अच्छा है; क्योंकि इसी शून्य के भीतर तलाश है। यह कमरा तुम्हारे भीतर के शून्य का प्रतीक हो। और छोटा हो, क्योंकि मन्त्र में उसका उपयोग है। और खाली हो, उसका भी उपयोग है।

पूर्व-तैयारी

विधि को समझ लो। पहले दस मिनट शांत बैठ जाना। शांत बैठने के पहले—क्योंकि शांत बैठना आसान नहीं है—भीतर, पांच मिनट नाचना, उछलना, कूदना। और दिल खोलकर उछलना कूदना, नाचना—ताकि शरीर के रग-रग, रेशे-रेशे में जो रेस्टलेसनेस, जो बेचैनी है, वह निकल जाये। तभी तुम दस मिनट शांति से बैठ पाओगे।

शांति से बैठने के लिए यह जरूरी है रेचन। दस-पांच मिनट—जितना तुम्हें ठीक लगे; जितनी तुम्हारी बेचैनी हो; उस हिसाब से तुम नाचना, कूदना, डोलना। शरीर को सब तरफ से हिलाना, ताकि फिर दस मिनट शरीर हिलने की आकांक्षा न करे। उसकी हिलने की तृप्ति कर देना। दस मिनट शरीर को हिलाना, डुलाना, नाचना, कूदना, दौड़ना—फिर बैठ जाना। और फिर बैठ जाना बिल्कुल थिर, दस मिनट अब शरीर न हिले।

आंख आधी खुली रखना; क्योंकि आंख जब पूरी खुली होती है, तो तुम दरवाजे पर खड़े हो अपने मकान के। पीठ मकान की तरफ, मुंह संसार की तरफ। एकदम-से पीठ न मुड़ेगी, एकदम-से परिवर्तन आसान नहीं—तुम सिर्फ आधी आंख खोलना; आधी संसार की तरफ बन्द और आधी अपनी तरफ खुली। आधी आंख खुली होने का यही

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अर्थ है कि आधा संसार देख रहे हैं, आधा अपने को। यहीं से शुरू करना; जल्दी की कोई आवश्यकता नहीं है।

आधी आंख जब खुली होती है, तो तुम एक तन्द्रा-जैसी स्थिति अनुभव करोगे। तो अपनी नाक के शीर्ष भाग को देखते रहना। बस, उतनी ही आंख खोलनी है। एकाग्रता नहीं करनी है। शांत भाव से नाक का अगला हिस्सा दिखाई पड़ रहा है — नासाग्र दिखाई पड़ रहा है।

पहला चरण

अब 'ओम्' का पाठ जोर से शुरू करना—शरीर से; क्योंकि शरीर में तुम हो। तो जोर से ओम् की ध्वनि करना कि कमरे की दीवारों से टकराकर तुम पर गिरने लगे। इसलिए खाली कमरा जरूरी है; खाली होगा तो प्रतिध्वनि होगी। जितनी प्रतिध्वनि हो, उतनी लाभ की है। अगर तुमने ईसाइयों के केथेडरल देखे हों तो वह मन्त्र के लिए बनाया गया था। वहां कुछ भी बोलो तो ध्वनि हजारों-गुनी होकर तुम पर लौट आती है। हिन्दुओं ने मन्दिर बनाया था अर्द्धवृत्त में—सिर्फ इसलिए कि उसके गुम्बज में ध्वनि टकराकर वापस लौट आयेगी। वृत्ताकार वस्तु में कोई भी ध्वनि बाहर नहीं जा सकती है, भीतर लौट आती है।

वे मन्त्र के लिए थे।

तो तुम बैठ जाना, जोर से ओंकार—ओम्...ओम्...जितने जोर से कर सको—क्योंकि शरीर का उपयोग करना है। तुम्हारा पूरा शरीर निमज्जित हो जाए ओम् में। ऐसा लगने लगे कि तुमने अपनी पूरी जीवन-ऊर्जा ओम् में लगा दी, कुछ बचाया नहीं। जैसे इसी पर जीवन-मरण टिका है।

इससे कम में मन्त्र पूरा नहीं होता। ऐसे धीरे-धीरे मुर्दे की तरह कहते रहो, आधे-आधे, उससे हल न होगा। समग्र भाव से कहो, जैसे कि इसी पर निर्भर है कि अगर तुमने पूरी तरह ओम् कहा, तो ही तुम बचोगे, अन्यथा मर जाओगे। दांव पर लगा देना—जैसे सिंहनाद होने लगे। आधी आंख खुली, आधी बन्द, जोर से ओम् का पाठ—और तुम इतनी जल्दी-जल्दी ओम् कहना कि ओवरलैपिंग हो जाये; एक मन्त्र-उच्चार के ऊपर दूसरा मन्त्र-उच्चार हो जाये—ओम्...ओम्।

दो ओम् के बीच जगह मत छोड़ना। पसीना-पसीना हो जाना; सारी ताकत लगा देना। थोड़े ही दिनों में तुम पाओगे कि पूरा कक्ष ओम् से भर गया। तुम पाओगे कि पूरा कक्ष तुम्हे साथ दे रहा है, ध्वनि लौट रही है। अगर तुम कोई गोल कक्ष खोज पाओ तो ज्यादा आसान होगा। अगर गुम्बदवाला कक्ष खोज पाओ तो और भी आसान होगा। भीतर बिल्कुल कुछ भी न हो, ताकि ध्वनि पूरी तरह तुम पर बरसने लगे। तुम्हारा शरीर स्नान से गुजर जायेगा और तुम पाओगे कि ऐसी शीतलता जल के स्नान से भी कभी नहीं मिलती। जब चारों तरफ से ओंकार तुम पर बरसने लगेगा, लौटने लगेगा, तुम्हारी ध्वनि वर्तुलाकार हो जायेगी। तुम पाओगे कि शरीर का रोआं-रोआं प्रसन्न हो रहा है। रोएं रोएं

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

से रोग झड़ रहा है। शांति, स्वास्थ्य प्रगाढ़ हो रहा है। तुम हैरान होकर पाओगे कि तुम्हारे शरीर की बहुत सी तकलीफें अपने-आप खो गयीं; क्योंकि यह बड़ा गहरा स्नान है। और बड़ी गहराई तक इसकी पकड़ और पहुंच है। शरीर ध्वनि का ही जोड़ है, और ओंकार से अद्‌भुत कोई ध्वनि नहीं।

तो पहले दस मिनट ओंकार का उच्चार जोर से, शरीर के माध्यम से।

दूसरा चरण

अब आंखें बन्द कर लेना। जीभ तालू से लग जाये। इस तरह मुंह बन्द कर लेना कि कोई जगह न बचे; क्योंकि अब जीभ का उपयोग नहीं करना है।

दूसरा कदम है, दस मिनट तक अब ओम् का उच्चार करना भीतर; मन में। अभी तक कक्ष था चारों तरफ, अब शरीर है चारों तरफ। अभी तक मकान के भीतर थे तुम, अब शरीर है चारों तरफ। अभी तक मकान के भीतर थे तुम अब शरीर मकान है। इस दस मिनट में अब तुम अपने भीतर मन में ही ओम् को गुंजाना—ओंठ का, जीभ का, कंठ का कोई उपयोग न करना—सिर्फ मन में ओम्...ओम्...ओम् लेकिन गति वही रखना, तीव्रता वही रखना।

जैसे तुमने कमरे को भर दिया था ओंकार से, ऐसे ही अब शरीर को भीतर से भर देना ओंकार से...कि शरीर से भीतर ही कम्पन होने लगे—ओम्-ओम् दोहराने लगे पैर से लेकर सिर तक। और इतनी तेजी से यह ओम् करना है जितनी तेजी से तुम कर सको। और दो ओम् के बीच जरा भी जगह मत छोड़ना क्योंकि मन का एक नियम है कि वह एक साथ दो विचार नहीं कर सकता। एक साथ दो विचार असम्भव हैं। अगर तुमने इतने जोर से गुंजाया कि दो ओम् के बीच में जरा-सी भी सन्धि न बची, तो कोई विचार न आ सकेगा; अगर जरा-सी भी सन्धि बची तो विचार आ जायेगा; सन्धि-शून्य उच्चार।

और ध्यान रखना शरीर का उपयोग नहीं करना है इसमें। आंखें इसीलिए अब बन्द कर लीं; शरीर थिर है; मन में ही गूंज करनी है। शरीर से ही टकराकर गूंज मन पर वापिस गिरेगी, जैसे कमरे से टकराकर गिर रही थी। उससे शरीर शुद्ध हुआ, इससे मन शुद्ध होगा। और जैसे-जैसे गूंज गहन होने लगेगी, तुम पाओगे कि मन विसर्जित होने लगा, एक गहन शान्ति—जैसी तुमने कभी नहीं जानी, उसका स्वाद मिलना शुरू हो जायेगा।

तीसरा चरण

दस मिनट तक तुम भीतर गुंजार करना—और दस मिनट के बाद गर्दन झुका लेना कि तुम्हारी दाढ़ी तुम्हारी छाती को छूने लगे। दो-चार दिन तकलीफ भी मालूम होगी गर्दन में; उसकी फिक्र मत करना, वह चली जायेगी।

तीसरे चरण में दाढ़ी छाती को छूने लगे। जैसे गर्दन कट गयी, उसमें कोई जान न रही। और अब तुम मन में भी ओम् का गुंजार मत करना; अब तुम सुनने की कोशिश करना। जैसे ओंकार हो ही रहा है और तुम सिर्फ सुनने वाले हो—करने वाले नहीं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

क्योंकि मन के बाहर तभी जा सकोगे, जब कर्त्ता छूट जायेगा। अब तुम साक्षी हो जाना। अब तुम गर्दन झुकाकर यह कोशिश करना कि भीतर ओंकार चल रहा है, मैं उसे सुनूं। गालिब का बहुत प्रसिद्ध वचन है—'दिल के आइने में है तस्वीरे यार, जब जरा गर्दन झुकाई देख ली।

वह गर्दन झुकाना जरूरी है। जैसे ही गर्दन झुकती है, दिल का आइना सामने आ जाता है। ओर उस परमप्रिय की तस्वीर वहां है, प्रतिबिम्ब वहां है, लेकिन गर्दन झुकाना तुम्हें नहीं आता। तुम तो गर्दन अकड़ाकर चलते हो! जहां गर्दन झुकाने की बात आयी, वहीं तुम और तन जाते हो। तुम अगर परमात्मा को खो रहे हो, तो सिर्फ एक अकड़ से...कि तुम गर्दन झुकाने को राजी नहीं—समर्पण की तुम्हारी तैयारी नहीं। यह तो प्रतीक है। गर्दन को लटका देना है, जैसे कट गयी; ताकि तुम झुक सको। और जैसे ही गर्दन झुकती है, भीतर देखना आसान हो जाता है; जैसे ही गर्दन झुकती है, विचार मुश्किल हो जाते हैं।

तो तुम झुककर सुनने की कोशिश करना। अभी तक तुम मन्त्र का उच्चार कर रहे थे, अब तुम मन्त्र के साक्षी बनने की कोशिश करना। और तुम चकित होओगे कि भीतर सूक्ष्म उच्चार चल रहा है। वह ओम् जैसा है, वह ओम् नहीं है, क्योंकि भाषा में उसे लेना कठिन है—ठीक ओम् जैसा है। तुम अगर शान्ति से सुनोगे तो अब वही सुनाई पड़ेगा।

शरीर से तुम हट गये; पहले मन्त्र के प्रयोग ने तुम्हें शरीर से काट दिया, दूसरे मन्त्र के प्रयोग ने तुम्हें मन से काट दिया। अब तीसरे मंत्र का प्रयोग साक्षी का है। तो दो चरण तो तुम मन्त्र करोगे, तीसरे चरण में तुम मन्त्र को सुनोगे—श्रावक बनोगे, साक्षी बनोगे। दो तक कर्त्ता रहोगे—क्योंकि शरीर और मन कर्त्तृत्व का हिस्सा है; और तीसरा चरण, साक्षी-भाव का है। शरीर कटा, मन कटा, तब तुम बच गये। प्याज के छिलके अलग हुए, अब सिर्फ शुद्ध अस्तित्व बचा। वही शिवत्व है। और एक बार इसका स्वाद आ जाये, तो फिर तुम जल्दी-जल्दी जाने लगोगे। फिर स्वाद ही खींचने लगेगा। फिर स्वाद एक मैगनेट बन जाता है।

मन्त्र की यह प्रक्रिया—तीसरा चरण—जितनी देर तुम रह सको, सम्भालना। तुम इस भांति इस प्रयोग को करना। और तीन महीने चिन्ता मत करना कि क्या परिणाम आ रहे हैं। तुम परिणाम का विचार ही मत करना, तुम सिर्फ किये जाना। तुम एक तारीख तय कर लेना...कि तीन महीने के बाद फलां तारीख को लौटकर सोचेंगे कि कुछ हुआ कि नहीं। और तीन महीने अगर धैर्य से किया, तो बड़े मीठे रस से भर जाओगे; जिसको कबीर ने 'गूंगे का गुड़' कहा है। और एक बार वह गुड़ का स्वाद आ जाये, फिर कोई कठिनाई नहीं है। फिर संसार स्वप्नवत् हो जाता है। जीवन एक अभिनय से ज्यादा नहीं रह जाता। तुम साक्षी हो जाते हो। तुम्हारा साक्षित्व ही शिवत्व है।

संकेत—प्रत्येक चरण दस मिनट करना है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

३. साधना सोपान

भगवान श्री रजनीश द्वारा पुनर्उद्‌घाटित ध्यान की २१ निष्क्रिय विधियां

प्रवेश के पूर्व—

१. निष्क्रिय ध्यान—१
२. निष्क्रिय ध्यान—२
३. बहना, मिटना, तथाता
४. कल्पना-भोग
५. सन्तुलन ध्यान—१
६. सन्तुलन ध्यान—२
७. मूलबंध—ब्रह्मचर्य-उपलब्धि की सरलतम विधि
८. यौन-मुद्रा—काम-ऊर्जा के ऊर्ध्वगमन की एक सरल विधि
९. निश्चल-ध्यान-योग
१०. अनापानसती-योग
११. इक्कीस दिवसीय मौन
१२. स्वप्न में सचेतन प्रवेश की दो विधियां
१३. आत्मोपलब्धि की पांच तान्त्रिक विधियां
१४. सजग मृत्यु और शरीर से अलग होने की विधि
१५. जाति-स्मरण के प्रयोग
१६. प्राण साधना
१७. अन्तर्प्रकाश साधना
१८. अन्तर्वाणी साधना
१९. संयम साधना-१
२०. संयम साधना-२
२१. शांति-सूत्र—नियति की स्वीकृति

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रवेश के पूर्व

आगे के इन पृष्ठों में ध्यान की निष्क्रिय विधियां संगृहीत की गयी हैं। ये ध्यान विधिय. भगवान श्री के विविध प्रवचन-संकलनों—यथा

१. मैं मृत्यु सिखाता हूं;
२. साधना पथ;
३. युक्रान्द—पाक्षिक पत्रिका;
४. जिन-सूत्र : भाग तीसरा;
५. ध्यान एक वैज्ञानिक दृष्टि;
६. ताओ उपनिषद्: भाग-दूसरा;
७. कहे कबीर दिवाना;
८. सूली ऊपर सेज पिया की;
९. गीता-दर्शन : अध्याय दसवां;
१०. महावीर मेरी दृष्टि में;
११. संन्यास : अंग्रेजी (द्विमासिक)
१२. द्रा बुक ऑफ सिक्रेट भाग पहला;
१३. रजनीश दर्शन (द्विमासिक)
१४. ताओ उपनिषद्: भाग पहला;
१५. दा अल्टीमेट अल्केमी : भाग पहला;
१६-१७-१८. गीता दर्शन : अध्याय चौथा;
१८. गीता दर्शन : अध्याय ग्यारहवां....*से क्रमशः संगृहीत की गयी हैं।*

इन विधियों में संलग्न होने से पहले इनका ठीक-से अध्ययन कर लेना उचित होगा—पश्चात आप अपनी रुझान, समस्या व जरूरत के अनुकूल विधि चुनकर उसका अभ्यास कर सकेंगे।

इनमें कुछ विधियां तो ऐसी हैं, जिनके लिए अलग से समय निकालने की आवश्यकता ही नहीं है; अपने काम-काज में लगे हुए आप इनका अभ्यास कर सकते हैं।

जैसे 'मूलवंध' है या 'यौन-मुद्रा'—इनके अभ्यास के लिए अलग से समय निकालने की आवश्यकता नहीं है। जहां भी, जब की मन को कामवासना पकड़े, तभी और वहीं इन विधियों का अभ्यास करना है।
या फिर 'आत्मोपलब्धि की पांच तांत्रिक विधियां' की 'छटवीं विधि' है। काम-काज में लगे हुए ही उसे साधना है; उसे उ निरन्तर करना है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. निष्क्रिय ध्यान—१

आराम से किसी भी आसन में, जैसा आपको सुविधापूर्ण लगे, बैठ जायें। रीढ़ और गर्दन बिल्कुल सीधी रखनी है। शरीर के सारे हलन-चलन को छोड़ दें। फिर आंखें बन्द कर लें। आंखें बन्द करते समय यह ध्यान रहे कि आंखों पर कोई तनाव न पड़े। पलकों को बिल्कुल ढीला छोड़ देना है। ओंठ बन्द हों और जीभ तालू से लगी हो। श्वास शांत, धीमी, पर गहरी लेनी है—और ध्यान नाभि के पास रखना है।

नाभि-केन्द्र पर श्वास के कारण जो कम्पन मालूम होता है, उसके प्रति कोई प्रतिक्रिया नहीं करें; उस पर कोई विचार नहीं करें। शब्द न हों और हम अकेले साक्षी हों। जो भी हो रहा है, हम केवल उसे दूर खड़े जान रहे हैं, ऐसे भाव में अपने को छोड़ देना है; उसके प्रति जागरूक बने रहना है। केवल देखते रहना है—विचार को, श्वास को, नाभि-स्पन्दन को—और कोई प्रतिक्रिया नहीं करनी है।

ऐसे ही क्षण में कुछ होता है, जो हमारे चित्त की सृष्टि नहीं है। जो हमारी सृष्टि नहीं, वरन् जो हमारा होना है, हमारी सत्ता है—वह उद्घाटित हो जाती है और हम आश्चर्यों के आश्चर्य स्वयं के समक्ष खड़े हो जाते हैं।

२. निष्क्रिय ध्यान—२

ध्यान में, हमें उस जगह जाना है जहां मरने का कोई उपाय नहीं रह जाता —भीतर,...भीतर,...और भीतर। बाहर की वह सारी परिधि छोड़ देनी है, जो मृत्यु में छूट जाती है। मृत्यु में शरीर छूट जाती है, भाव छूट जाते हैं, विचार छूट जाते हैं, मित्रता छूट जाती है—रह जाते हैं सिर्फ अकेले हम; सिर्फ चेतना रह जाती है।

तो ध्यान में सब छोड़कर मर जाना है। सिर्फ इतना ही रह जाये कि 'मैं जानता हुआ, द्रष्टा-मात्र रह जाऊं'। इस ध्यान-विधि में चार चरण हैं।

पहला चरण

प्रथम चरण है, शरीर की शिथिलता—रिलेग्जेशन। शरीर को इतना शिथिल छोड़ देना है कि ऐसा लगने लगे कि वह दूर ही पड़ा रह गया है, हमारा उससे कुछ लेना-देना नहीं है। शरीर से सारी ताकत को भीतर खींच लेना है। हमने शरीर में ताकत डाली है। जितनी ताकत हम शरीर में डालते हैं, उतनी पड़ती है; जितनी हम खींच लेते हैं, उतनी खिंच जाती है।

आपने कभी ख्याल किया है—किसी से झगड़ा हो जाये तो आपके शरीर में ज्यादा ताकत कहां से आ जाती है? आप इतना बड़ा पत्थर उठाकर फेंक सकते हैं क्रोध की हालत में, जितना बड़ा पत्थर आप शांति की हालत में हिला भी न सकते थे! कभी आपने सोचा है कि शरीर आपका ही है, लेकिन यह ताकत कहां से आ गयी? यह ताकत आप डाल रहे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हैं। जरूरत पड़ गयी है, खतरा है, मुसीबत है, दुश्मन सामने खड़ा है, पत्थर को उठाएंगे नहीं तो जिन्दगी खतरे में पड़ जायेगी! और आप अपनी सारी ताकत शरीर में डाल देते हैं।

शरीर में हमारी शक्ति डाली हुई है; लेकिन निकालने का हमें कोई पता नहीं कि हम वापिस कैसे निकाले। रात में हमें इसलिए आराम मिल पाता है कि अपने-आप शक्ति भीतर वापिस चली जाती है और शरीर शिथिल होकर पड़ जाता है; सुबह हम फिर ताजे हो जाते हैं। लेकिन कुछ लोग रात को भी अपनी शक्ति बाहर नहीं निकाल पाते हैं; शरीर में शक्ति रह ही जाती है। तब नींद मुश्किल हो जाती है। इनसोमनिया या नींद का न आना सिर्फ एक ही बात का लक्षण है कि शरीर में डाली गयी ताकत पीछे लौटने का रास्ता नहीं जानती है।

इस ध्यान-प्रयोग के पहले चरण में शरीर से सारी शक्ति को भीतर खींच लेना है। और यह बड़े मजे की बात है कि सिर्फ भाव करने से शक्ति अन्दर वापिस लौट जाती है। अगर थोड़ी देर तक कोई मन में यह भाव करता रहे कि मेरी शक्ति अन्दर वापिस लौट रही है और शरीर शिथिल होता जा रहा है, तो वह पायेगा कि शरीर शिथिल हो गया। और शरीर उस जगह पहुंच जायेगा...कि खुद ही अपना हाथ उठाना चाहे तो नहीं उठा सकेगा। इतना सब शिथिल हो जायेगा।

पहली बात है, शरीर से सारे प्राण का भीतर वापिस पहुंच जाना। तो शरीर खोल की तरह बाहर पड़ा रह जायेगा—और बराबर ऐसा दिखाई पड़ेगा कि हम अलग हो गये हैं और शरीर की खोल बाहर पड़ी है—वस्त्रों की भांति।

अतः इस प्रथम चरण में पहले बैठ जायें या लेट जायें—जैसा आपको सुविधापूर्ण लगे। ...लेट जाना सरल पड़ेगा। फिर आंखें बन्द कर लें। आंखें बंद करने का अर्थ पलकों पर तनाव डालना नहीं है—बस, पलकों को ढीला छोड़ दें और आंखों को स्वतः बंद हो जाने दें। शरीर को भी ढीला छोड़ दें और दो-तीन मिनट तक हृदयपूर्वक भीतर यह भाव करें कि 'शरीर शिथिल हो रहा है...शरीर शिथिल हो रहा है, शरीर शिथिल हो रहा है'...यह भाव करते हुए शरीर को भी हर ओर से ढीला छोड़ते चले जायें।

दूसरा चरण

फिर दूसरी बात है श्वास को शिथिल छोड़ना। श्वास और गहरे में प्राणों को पकड़े हुए है। इसलिए श्वास के टूटते ही आदमी मर जाता है। श्वास शरीर और आत्मा के बीच सेतु है; वहीं से हम बंधे हुए हैं।

बहुत प्रयोग इस सम्बन्ध में होते हैं। अगर कोई व्यक्ति अपनी श्वास को पूरा शिथिल छोड़ दे, शान्त छोड़ दे, तो क्या होता है?...धीरे-धीरे श्वास उस जगह आ जाती है कि भीतर पता ही नहीं चलता है कि श्वास चल रही है कि नहीं चल रही है। कई बार शक हो जाता है कि कहीं मैं मर तो नहीं गया! श्वास इतनी शान्त हो जाती है कि पता ही नहीं चलता कि

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चल रही है या नहीं चल रही है।

श्वास को ठहराना नहीं है। जिसने ठहराया, उसकी श्वास कभी नहीं ठहरेगी। यदि ठहराया तो श्वास बाहर निकलने की कोशिश करेगी।

अगर बाहर रोका तो भीतर जाने की कोशिश करेगी। इसलिए अपनी तरफ से कुछ नहीं करना है, सिर्फ शिथिल छोड़ते जाना है—शान्त...शान्त और शान्त। धीरे-धीरे श्वास एक बिन्दु पर जाकर ठहर जाती है। श्वास एक क्षण को भी ठहर जाये, तो उसी क्षण आत्मा और शरीर के बीच अनन्त फासला दिखाई पड़ जाता है। जैसे बिजली चमक जाये अभी—और मुझे आप सबके चेहरे दिखाई पड़ जायें एक क्षण में। फिर बिजली खो जाये। ...लेकिन मैंने आपके चेहरे देख लिए। ठीक एक क्षण को जब श्वास बिल्कुल मध्य में ठहर जाती है, तो उस क्षण में बिजली पूरे व्यक्तित्व में कौंध जाती है—और दिखाई पड़ जाता है कि शरीर अलग, मैं अलग। मृत्यु घटित हो गयी।

तीसरा चरण

तीसरे तल पर मन को शिथिल छोड़ना है। क्योंकि अगर श्वास भी शिथिल हो जाये और मन शिथिल न हो पाये, तो बिजली कौंध जायेगी, लेकिन आपको दिखाई नहीं पड़ेगा कि क्या हुआ। क्योंकि मन तो अपने विचारों में उलझा रहेगा! अगर यहां बिजली चमक जाये और मैं अपने ख्यालों में खोया रहूं, तो बिजली चमक जायेगी तब मुझे पता चलेगा कि कुछ हो गया। लेकिन तब तक बिजली चमक चुकी है और मैं अपने विचारों में खोया रह गया हूं।

बिजली तो चमक जायेगी श्वास के ठहर जाते ही, लेकिन उस पर ध्यान तभी जायेगा जब विचार भी बन्द हो गए। नहीं तो ध्यान नहीं जायेगा और मौका चूक जायेगा। इसलिए तीसरी चीज है विचार को शिथिल छोड़ देना। तो तीसरे चरण में मन को भी शिथिल छोड़ दें, और भाव करें कि विचार शान्त होते जा रहे हैं...विचार शान्त होते जा रहे हैं...विचार शान्त होते जा रहे हैं।'...

चौथा चरण

ये तीन चरण हम प्रयोग करेंगे और चौथे चरण में हम दस मिनट—या उससे अधिक, जितनी देर तक आप इस अवस्था में रह सकते हों—के लिए चुपचाप बैठे रहेंगे। इस अन्तिम चरण में जो भी भीतर होता है, उसे साक्षी-भाव से देखते हुए मौन में ठहर जाना है। इसी मौन के किसी क्षण में मृत्यु घटित हो जाती है। और आप होशपूर्वक देखते रह जाते हे...कि आप मृत्यु के भी द्रष्टा हैं; मृत्यु भी पार है।

यही अमृत की उपलब्धि है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

३. बहना, मिटना, तथाता

पहला प्रयोग—पांच मिनट

आंखें आहिस्ता से बन्द कर लें और शरीर को ढीला छोड़ दें। किसी तरह का शरीर पर कोई तनाव, स्ट्रेन न रह जाये। कल्पना करें—पहाड़ों के बीच में एक बड़ी नदी बही जा रही है। जोर की लहर है, जोर का बहाव है, पहाड़ी नदी है। भीतर देखें कि दो पहाड़ो के बीच में एक बड़ी नदी तेजी से बही जाती है। जोर का बहाव है, जोर की आवाज है, लहरें हैं, तेज गति है—और नदी बही जा रही है।

देखें, उसे स्पष्ट देखें नदी तेजी से बही जा रही है, वह साफ दिखाई पड़ने लगी है। इस नदी में आपको उतर जाना है, लेकिन तैरना नहीं है; जस्ट फ़्लोटिंग। इस नदी में आप उतर जायें और बहना शुरू कर दें। हाथ-पैर न चलायें, सिर्फ बहे जायें, बहे जायें, बहे जायें। हाथ-पैर चलायें ही मत; तैरना नहीं है, सिर्फ बह जाना है। नदी में हमने अपने को छोड़ दिया है—और नदी भागी चली जा रही है—और हम उसमें बहे चले जाते हैं।

...बहे जा रहे हैं, बहे जा रहे हैं, बहे जा रहे हैं। कहीं पहुंचना नहीं है; किसी किनारे पर नहीं जाना है, कोई मंजिल नहीं है। इसलिए तैरने का कोई सवाल नहीं है—बस, सिर्फ बहना है। छोड़ दें और बहें। नदी में बहने की जो अनुभूति होगी, वह फिर ध्यान को समझने में सहयोगी होगी।

एक पांच मिनट के लिए अपने को उस नदी में छोड़ दें और बहते जायें। नदी का कोई अन्त नहीं है; वह बही ही चली जा रही है। आप भी उसमें बहते रहें। कुछ करना नहीं है। हाथ-पैर भी नहीं चलाना है,सिर्फ बहते जाना है, बहते जाना है।

देखें, नदी बही जा रही है, आप भी उसके साथ बहने लगे है। जरा भी तैरना नहीं है। पांच मिनट के लिए मैं चुप हो जाता हूं—आप बहने का, फ़्लोटिंग का अनुभव करें। ...बहे जा रहे हैं, बहे जा रहे हैं। नदी में छोड़ दिया है। जरा भी तैरना नहीं है; हाथ-पैर भी नहीं हिलाना है; बहे जा रहे है। जैसे एक सूखा पत्ता नदी में बहता चला जाता हो; ऐसे ही छोड़ दें।

देखें, बहते जायें...और बहने के साथ ही एक अनुभव होना शुरू हो जायेगा—समर्पण का, सरेण्डर का। नदी के साथ छोड़ दें अपने को—'लेट गो' का एक अनुभव होना शुरू हो जायेगा।

बहें, बहते जायें। नदी तेजी से बहती जा रही है, लहरें तेजी से भागी जा रही हैं, आप भी नदी में छूट गये हैं और बहे जा रहे हैं। कुछ करना नहीं है, बहते चले जाना है। ...बिल्कुल छोड़ दें और बह जाएं। नदी और तेजी से बही जा रही है, बही जा रही है, इसको ठीक से अनुभव कर लें। बहने की इस प्रतीति को, बहने के इस अनुभव को ठीक-से समझ लें 'क्या है'।

फिर ध्यान में वह सहयोगी होगा। ठीक-से समझ लें कि यह बह जाने का अनुभव क्या

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है—जब हाथ-पैर भी नहीं चल रहे हैं और नदी हमें लिए जा रही है,लिए जा रही है, लिए जा रही है। सब कुछ नदी कर रही है, हम कुछ भी नहीं कर रहे हैं, हम सिर्फ बह रहे हैं एक सूखे पत्ते की तरह।

अब धीरे-धीरे आंख खोल लें और दूसरा प्रयोग, पांच मिनट के लिए, मैं कहता हूं, वह समझ लें और दूसरा प्रयोग करें। धीरे-धीरे आंख खोल लें।

दूसरा प्रयोग—पांच मिनट

ध्यान है, समर्पण। ध्यान है, अपने को खो देना। ध्यान है, मिट जाना। ध्यान है, सब भांति विसर्जित हो जाना। हमारा गिरना जरूरी है; हमारा मिटना जरूरी है; हमारा होना बाधा है। जैसे एक वृक्ष को कोई काट दे और वृक्ष गिर जाये, जैसे एक बीज जमीन पर पड़ा हो और टूटे और मिट जाये, ठीक ऐसे ही, हमें भी भीतर से बिखर जाना और मिट जाना है।

दूसरा प्रयोग इस मिटने की दिशा में समझें। आंख बन्द कर लें और अपने को ढीला छोड़ दें। पहली बात हमने समझी बहने की, दूसरी बात समझें मिटने की—बिल्कुल मिट जाने की। आंख बन्द करें। बहुत आहिस्ता से आंख बन्द कर लें और शरीर को ढीला छोड़ दें। आंख बन्द कर ली है, शरीर ढीला छोड़ दिया है।

देखें, सामने एक चिता जल रही है। लकड़ियां हैं, जोर से आग की लपटें पकड़ गयी हैं; चिता जोर से जल रही है। चिता को जलता हुआ देखें। लकड़ियों में आग पकड़ गयी है, चिता का जलना शुरू हो गया है। ठीक-से देखें, चिता को आग पकड़ गयी है। लपटें जोर से ऊपर भाग रही हैं आकाश की तरफ, चिता जल रही है।

दूसरी बात ख्याल से देखें कि इस चिता को आप देख ही नहीं रहे हैं, इस चिता पर चढ़े हुए हैं; आप ही इस चिता पर चढ़ा दिये गए हैं। सब मित्र, प्रियजन चारों ओर खड़े हुए हैं; आग लगा दी गयी है; आप चिता पर चढ़ा दिये गये हैं। लकड़ी ही नहीं, आप भी जल रहे हैं। लकड़ियों में लपटें लगी हैं और आप भी जले जा रहे हैं। थोड़ी देर में सब राख हो जायेगा—लकड़ी भी और आप भी। अपने को ही चिता पर चढ़ा हुआ अनुभव करें।

देखें, सामने अपना ही शरीर उस चिता पर चढ़ा हुआ है और आग में जला जा रहा है। एक पांच मिनट इस अनुभव को करें, ताकि मिटने का बोध ख्याल में आ सके। एक दिन चिता जलेगी ही। एक दिन आप उस पर चढ़ेंगे ही। सभी को उस पर चढ़ जाना है। तो आज अपने मन के सामने ठीक-से देख लें—चिता की जलती हुई लपटें; आकाश की तरफ भागती हुई अग्नि-शिखायें; और आप चढ़े हैं! लकड़ियां ही नहीं जल रही हैं, आप भी जले जा रहे हैं।

देखें, जोर से लपटें बढ़ती चली जाती हैं, आपका शरीर भी जला जा रहा है। थोड़ी देर में आग भी बुझ जाएगी, राख रह जाएगी; लोग विदा हो जाएंगे; मरघट खाली, सुनसान हो जाएगा। अब देखें, चिता पर चढ़े हुए हैं आप। मैं चुप हो जाता हूं, लपटें जलती रहेंगी।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आपको कुछ करना नहीं है; लपटें जलेंगी, जला देंगी—सब राख हो जायेगा। थोड़ी देर भीड़ खड़ी रहेगी मित्रों की, प्रियजनों की—आसपास—फिर वे भी विदा हो जायेंगे; फिर राख ही पड़ी रह जायेगी। मरघट सुनसान रह जायेगा।

देखें, शुरू करें; लपटें साफ देखें। ऊपर आप ही चढ़े हुए हैं और जल रहे हैं। कुछ करना नहीं है। जलने में क्या करना है? जल जाना है। आग काम कर देगी। लपटें काम कर देंगी। आपको तो कुछ नहीं करना है; जल जाना है; मिट जाना है। पांच मिनट के लिए आग पर, चिता पर अपने को चढ़ा हुआ देखते रहें। फिर धीरे-धीरे लपटें बुझ जायेंगी, सब शान्त हो जायेगा।

इस मिट जाने के अनुभव को ठीक-से स्मरण रख लेना, वे ध्यान में काम पड़ सकेंगे। लपटें बढ़ंती जा रही हैं, शरीर जलता जा रहा है, आप भी मिटते चले जा रहे हैं। सब धुआं हो जायेगा, सब राख हो जायेगी, मरघट शान्त हो जायेगा। जरा भी अपने को बचाने की कोशिश मत करना,छोड़ देना लपटों में—ताकि सब जल जाये, सब मिट जाये, सब राख हो जाये।

देखें, लपटें बढ़ती चली जाती हैं, धुआं बढ़ता चला जाता है, सब जला जा रहा है। आप भी जले जा रहे हैं, मिटे जा रहे हैं—इसे बहुत साफ देख लें ताकि यह ध्यान में सहयोगी हो जाये। क्योंकि ध्यान भी एक तरह की मृत्यु ही है।

देखें, साफ देखें—सब जल रहा है, सब मिट रहा है, सब समाप्त हो रहा है। और आपको कुछ भी नहीं करना है। बस मिट रहा है, सब समाप्त हो रहा है। और आपको कुछ भी नहीं करना है, बस जल जाना है, मिट जाना है। आग सब काम कर रही है, जलाए दे रही है। लपटें भागी चली जा रही हैं, सब मिटता चला जा रहा है। नदी में तो तैर भी सकते थे, यहां तो तैर भी नहीं सकते हैं। यहां तो तैरने का कोई उपाय ही नहीं है। सब मिटा जा रहा है। लपटें सब समाप्त किये दे रही हैं।

देखें, धुआं रह जायेगा, राख रह जायेगी, मरघट सुनसान हो जायेगा, लोग विदा हो जायेंगे। हवायें चल रही हैं, लपटें और जोर से बढ़ी जा रही हैं। हवायें लपटों को बढ़ाये दे रही हैं—सब जला जा रहा है...सब जला जा रहा है। थोड़ी देर में सब राख हो जायेगा। हवाओं में लपटें और जोर पकड़ रही हैं।

देखें, सब जल गया है, लपटें बुझती जा रही हैं, राख पड़ी रह गयी है, लोग विदा होने लगे हैं, मरघट पर सन्नाटा छा गया है। हवायें फिर भी चलती रहेंगी, राख उड़ती रहेगी, मरघट पर कोई न होगा। लोग विदा होने लगे, सब सन्नाटा हो गया, आप मिट गये हैं, राख ही पड़ी रह गयी है।

इसे ठीक-से देख लें। यह ध्यान में देखना अत्यन्त जरूरी है। ठीक-से देख लें, सब पड़ा हुआ रह गया है। राख ही पड़ी रह गयी है। बुझे हुए अंगार रह गये हैं। लोग जा चुके हैं और मरघट पर कोई नहीं है। आग भी बुझ गयी है और आप भी मिट गये हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अब धीरे-धीरे आंख खोल लें और तीसरे प्रयोग को समझें और उसे करें। धीरे-धीरे आंख खोल लें और बैठ जायें।

पहली बात है यह समझ लेना कि बहने का अर्थ क्या है; दूसरी बात है यह समझ लेना कि मिटने का क्या अर्थ है; और अब तीसरी बात समझनी है, तीसरी बात का नाम है, 'तथाता'—'सचनेस'।

यह तीसरी बात उन दोनों से ज्यादा आगे ले जाने वाली है। यह तीसरा बिन्दु है, तथाता। तो पांच मिनट चीजें ऐसी हैं, हमें कुछ करना नहीं है। करने का कोई उपाय भी नहीं है। हम नहीं थे, तब भी चीजें ऐसी थीं। समुद्र तब भी इसी तरह शोर करता रहा; कौवे बोलते रहे, पक्षी चिल्लाते रहे, रास्ता चलता रहा। हम नहीं होंगे, तब भी चीजें ऐसी ही होंगी।

तो जब हम हैं, तब भी चीजें ऐसी रहें तो अड़चन क्या है, कठिनाई क्या है? हमारे 'होने-न-होने' का इस सारे से क्या सम्बन्ध?

आंख बन्द करें आहिस्ता से। आंख ढीली छोड़ दें, शरीर को आराम में छोड़ दें। शरीर को ढीला, रिलेक्स छोड़ दें। आंख बन्द कर लें, शरीर ढीला छोड़ दें और अब तीसरे प्रयोग में उतरे।

तीसरा प्रयोग — पांच मिनट

तथाता, चीजें ऐसी हैं। हमें कुछ करना नहीं है—चीजें ऐसी हैं ही, जगत् ऐसा है ही। फिर कौन-सी तकलीफ है...चीजें ऐसी हैं? बच्चा, बच्चा है; बूढ़ा, बूढ़ा है; स्वस्थ, स्वस्थ है; बीमार, बीमार है; पक्षी आवाज कर रहे हैं; घास हरी है; आकाश नीला है; कहीं धूप पड़ रही है, कहीं छाया है—ऐसा है।

अब ख्याल करें, चीजें ऐसी हैं। हमारा कोई विरोध नहीं है, इन चीजों के बीच में हम भी हैं।

एक पांच मिनट ऐसा ख्याल करे—कोई विरोध नहीं है, कोई विरोध नहीं है, कोई विरोध नहीं है—जो है, जैसा है, हम उससे राजी हैं, न कुछ हम कुछ बदलना चाहते हैं, न कुछ हम मिटाना चाहते हैं, न कुछ हम बनाना चाहते—जैसा है, वैसा है; हम उससे राजी हैं।

एक पांच मिनट के लिए इस राजी होने की स्थिति में अपने को छोड़ दें। देखें, यह कौवे की आवाज और तरह की सुनाई पड़ेगी। जब हम राजी हो जायेंगे तो यह कौवे की आवाज और तरह की सुनाई पड़ेगी। कोई विरोध नहीं है तो हमारे और इसके बीच की दीवार टूट जायेगी।

सुनें—सड़क की आवाज और तरह की सुनाई पड़ेगी। अगर हमारा कोई विरोध नहीं है तो सड़क की आवाज और तरह की सुनाई पड़ेगी। समुद्र का शोर अब दुश्मन की तरह नहीं मालूम पड़ता, एक डिस्टर्बेन्स नहीं मालूम पड़ता।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सुनें, हमारा कोई विरोध नहीं है—जो है जैसा है —है। पांच मिनट के लिए जो है, उससे राजी होकर डूब जायें। देखें, अब धूप वैसी मालूम नहीं पड़ती; जो है, है। कुछ भी वैसा मालूम नहीं पड़ता। हम शत्रु की तरह नहीं हैं, एक मित्र की तरह हैं—जो है, उससे राजी हैं।

इस तीसरे सूत्र को भी ठीक-से ध्यान में रख लेना—तथाता, सचनेस, चीजें ऐसी हैं। इसे ठीक-से समझ लेना कि चीजें ऐसी हैं—कोई विरोध नहीं, कोई शत्रुता नहीं। कुछ अन्यथा हो, इसकी आकांक्षा नहीं; चीजें ऐसी हैं। धूप गरम है, छाया सर्द है, समुद्र अपने काम में लगा है, रास्ते पर चलने वाले लोग अपने काम में लगे हैं, जरा भी विरोध न रखें—बस, ऐसा हो रहा है, हो रहा है, हो रहा है...और हम जान रहे हैं। कुछ बदलना नहीं है, कुछ मिटाना नहीं है,कुछ परिवर्तन नहीं करना है।

इस तीसरे सूत्र को ठीक-से समझ लेना, क्योंकि ध्यान की गहराई में जाने के लिए यह अत्यन्त जरूरी है। चीजें ऐसी हैं।

अब धीरे-धीरे आंख खोल लें।

४. कल्पना-भोग

किसी सुन्दर युवती को देखकर जाने क्यों मन उसकी ओर आकर्षितत हो जाता है! मेरी उम्र पचास की हो गयी है, फिर भी ऐसा क्यों होता है? मुझे क्या करना चाहिए, कृपया मार्ग-निर्देश करें।

जाग के अपने मन में दबी हुई वासनाओं का अन्तर्दर्शन करना होगा। अब मत दबाओ; कम-से-कम अब मत दबाओ।

अब तक दबाया, उसका यह दुष्फल है; अब इस पर ध्यान करो। क्योंकि अब उम्र भी नहीं है कि तुम स्त्रियों के पीछे दौड़ो। वह बात जंचेगी नहीं।

अब, जो जीवन में नहीं हो सका है उसे ध्यान में घटाओ। अब एक घन्टा रोज आंख बन्द कर के कल्पना को खुली छूट दो; वो किन्हीं पापों में ले जाये—जाने दो; तुम रोको मत; तुम साक्षी-भाव से उसे देखो कि यह मन जो-जो कर रहा है—मैं देखूं।

जो शरीर के द्वारा पूरी नहीं कर पाये वह मन के द्वारा पूरा हो जाने दो। तुम नियम से कामवासना के लिए एक घन्टा ध्यान में लगा दो। आंख बन्द कर लो और जो-जो तुम्हारे मन में कल्पनायें उठती हैं, स्वप्न उठते हैं—जिनको तुम दबाते होओगे निश्चित ही—उनको प्रकट होने दो।

घबराओ मत, क्योंकि तुम अकेले हो। किसी के साथ कोई पाप कर भी नहीं रहे हो। किसी को कोई चोट पहुंचा भी नहीं रहे हो।

किसी के साथ तुम कोई अभद्र व्यवहार भी नहीं कर रहे हो...कि किसी स्त्री को घूर के देख रहे हो। तुम अपनी कल्पना को ही घूर रहे हो।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लेकिन पूरी तरह घूरना और उसमें कंजूसी मत करना। मन बहुत कहेगा कि 'अरे इस उम्र में यह क्या कर रहे हो?' मन बहुत बार कहेगा कि यह तो पाप है। मन बहुत बार कहेगा कि शांत हो जाओ, कहां के विचारों में पड़े हो। मगर उस मन की मत सुनना—कहना, कि एक घन्टा तो दिया है इसी ध्यान के लिए, इस पर ही ध्यान करेंगे। और एक घन्टा जितनी स्त्रियों को जितना सुंदर बना सको बना लेना। इस एक घंटे में जितने 'कल्पना-भोग' में डूब सको, डूब जाना। और साथ-साथ पीछे खड़े देखते रहना कि मन क्या-क्या कर रहा है—बिना रोके, बिना निर्णय किये कि पाप है, कि अपराध है। कुछ फिकर मत करना।

तो जल्दी ही, तीन-चार महीने के निरन्तर प्रयोग के बाद हल्के हो जाओगे; मन से धुआं निकल जायेगा। तब तुम अचानक पाओगे बाहर स्त्रियां हैं, लेकिन तुम्हारे मन में देखने की कोई आकांक्षा नहीं रह गयी,और जब तुम तुम्हारे मन में किसी को देखने की आकांक्षा नहीं रह जाती, तब लोगों का सौन्दर्य प्रकट होता है। वासना तो अंधा कर देती है, सौन्दर्य को देखने कहां देती है। वासना ने कभी सौन्दर्य जाना? वासना ने तो अपने ही सपने फैलाये! वासना दुष्पूर है, उसका कोई अन्त नहीं है।

तुम चकित होओगे, अगर तुमने एक-दो महीने भी इस प्रक्रिया को बिना किसी विरोध को भीतर उठाये, बिना अपराध-भाव के निश्चित मन से किया, तो तुम अचानक पाओगे धुएं की तरह कुछ बातें खो गयीं। महीने दो-महीने के बाद तुम पाओगे—तुम बैठे रहते हो, घड़ी बीत जाती है, कोई कल्पना नहीं आती! कोई वासना नहीं उठती!
नीचे हो जाएगा।

२. सन्तुलन ध्यान—१

लाओत्से के साधना-सूत्रों में से एक गुप्त सूत्र जो उसकी किताबों में उल्लिखित नहीं है। पर वह कानों-कान लाओत्से की परम्परा में चलता रहा है। यह साधना है— पालथी मारकर बैठ जायें और भीतर अनुभव करें कि एक तराजू बैलेंस है—जिसके दोनों पलड़े आपकी दोनों छातियों के पास लटके हुए हैं। और उसका कांटा ठीक आपकी दोनों आंखों के बीच—तीसरी आंख जहां समझी जाती है—वहां स्थित है।

तराजू की डंडियां आपके मस्तिष्क में है उसके दोनों पलड़े आपकी दोनों छातियों के पास लटके हुए हैं।

चौबीस घंटे ध्यान रखें कि ये दोनों पलड़े बराबर रहें और कांटा सीधा रहे।

लाओत्से कहता है कि अगर भीतर का तराजू को साध लिया, तो सब सध जायेगा।

लेकिन आप बड़ी मुश्किल में पड़ेंगे! जब आप इसका प्रयोग करेंगे, तब आपको पता चलेगा कि जरा-सी सांस भी ली नहीं...कि एक पलड़ा नीचे हो जायेगा, दूसरा पलड़ा ऊपर हो जायेगा। अकेले बैठे हैं और एक आदमी बाहर निकल गया दरवाजे से—उसको

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

देखकर—उसने कुछ किया भी नहीं है—लेकिन इतने में ही एक पलड़ा ऊपर और एक जाएगा।

लाओत्से ने कहा है कि भीतर चेतना को एक सन्तुलन दें। जीवन में सुख हो या दुख, सम्मान हो या अपमान, अन्धेरा हो या उजाला—भीतर के तराजू को साधते चले जायें। तो चेतना एक दिन उस परम सन्तुलन पर आ जाती है, जहां जीवन तो नहीं होता, अस्तित्व होता है; जहां लहरें नहीं होतीं, सागर होता है; जहां मैं नहीं होता, सब होता है।

६. सन्तुलन ध्यान —२

तिब्बत की एक छोटी-सी विधि है—'बैलेन्सिंग'—'सन्तुलन' उस विधि का नाम है।

कभी घर में खड़े हो जायें सुबह स्नान करके; दोनों पैर फैला लें और ख्याल करें...आपके दायें पैर पर ज्यादा जोर पड़ रहा है कि बायें पैर पर ज्यादा जोर पड़ रहा है? अगर बायें पर पड़ रहा है तो फिर आहिस्ते से जोर को दायें पैर पर ले जायें। दो क्षण दायें पैर पर जोर रखें, फिर बायें पर ले जायें।

एक पन्द्रह दिन, सिर्फ शरीर का भार, बायें पर है कि दायें पर—इसको बदलते रहें। और यह तिब्बती प्रयोग कहता है कि फिर इस बात का प्रयोग करें कि दोनों पर भार न रह जाये।

एक तीन सप्ताह का प्रयोग, और जब आप बिल्कुल बीच में होंगे—भार न बायें पर होगा, न दायें पर होगा—जब आप बिल्कुल बीच में होंगे—तब आप ध्यान में प्रवेश कर जायेंगे। ठीक उसी क्षण में आप ध्यान में चले जायेंगे।

ऊपर से देखने पर लगेगा, इतनी-सी आसान बात! करेंगे तो आसान भी मालूम पड़ेगी और कठिन भी। बहुत सरल मालूम पड़ती है, दो पंक्तियों में कही जा सकती है, लेकिन लाखों लोग इस छोटे-से प्रयोग के द्वारा परम आनन्द को उपलब्ध हुए हैं। जैसे ही आप बैलेन्स्ड होते हैं—न बायें पर रह जाते, न दायें पर रह जाते—दोनों के बीच में रह जाते हैं; वैसे ही आप पाते हैं कि वह बैलेन्सिंग, सन्तुलन—आपकी कॉन्शसनेस का, आपकी चेतना का भी हो गया; चेतना भी बैलेन्स्ड हो गयी, चेतना भी सन्तुलित हो गयी।

और तब तत्काल तीर की तरह भीतर गति हो जाती है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

७. मूलबंध—ब्रह्मचर्य-उपलब्धि की सरलतम विधि

जीवन ऊर्जा है—शक्ति है। लेकिन साधारणतः तुम्हारी जीवन-ऊर्जा नीचे की ओर प्रवाहित हो रही है। इसलिए तुम्हारी जीवन-ऊर्जा अन्ततः कामवासना बन जाती है। कामवासना तुम्हारा निम्नतम चक्र है। तुम्हारी ऊर्जा नीचे गिर रही है। और सारी ऊर्जा धीरे-धीरे काम-केन्द्र पर इकट्ठी हो जाती है। इसलिए तुम्हारी सारी शक्ति कामवासना बन जाती है।

वह जो मूलाधार चक्र है—जहां से ऊर्जा काम-ऊर्जा बनती है; उसे बांध लेना है, उसे सिकोड़ लेना है। इसलिए योग ने—पंतजलि ने—हठयोग ने—बहुत-सी प्रक्रियाएं खोजी हैं 'मूल' को बांधने की। मूल अगर बंध जाये, तो ऊर्जा अपने आप ऊपर उठने लगती है; क्योंकि नीचे का द्वार बन्द हो जाता है, अवरुद्ध हो जाता है।

एक छोटा-सा प्रयोग, जब भी तुम्हारे मन में कामवासना उठे तो करो। तो धीरे-धीरे तुम्हें राह साफ हो जायेगी। जब भी तुम्हें लगे कि कामवासना मन को पकड़ रही है, तब डरो मत; शान्त होकर बैठ जाओ और जोर से श्वास को बाहर फेंको—उच्छ्वास। भीतर मत लो श्वास को—क्योंकि जैसे ही तुम भीतर गहरी श्वास लेते हो, श्वास काम-ऊर्जा को नीचे की तरफ धकाती है।

तो जब तुम्हें कामवासना पकड़े, तब एग्ज्हेल करो, बाहर फेंको श्वास को। नाभि को भीतर खींचो, पेट को अन्दर लो और श्वास को बाहर फेंको। ...जितनी फेंक सको। धीरे-धीरे अभ्यास होने पर तुम सम्पूर्ण रूप से श्वास को बाहर फेंकने में सफल हो जाओगे।

जब सारी श्वास बाहर फिक जाती है, तो तुम्हारा पेट और नाभि वैक्यूम हो जाता है, शून्य हो जाता है। और जहां कहीं शून्य हो जाती है, वहीं आस-पास की ऊर्जा शून्य की तरफ प्रवाहित होने लगती है। शून्य खींचता है; क्योंकि प्रकृति शून्य को बरदाश्त नहीं करती है, शून्य को भरती है। तुम्हारी नाभि के पास शून्य हो जाये, तो मूलाधार से ऊर्जा तत्क्षण नाभि की तरफ उठ जाती है।

और तुम्हें बड़ा रस मिलेगा—जब तुम पहली दफा अनुभव करोगे कि एक गहन ऊर्जा बाण की तरह आकर नाभि में उठ गयी। तुम पाओगे तुम्हारा सारा तन-मन एक गहन स्वास्थ्य से भर गया ...एक ताजगी।

ठीक वैसे ही अनुभव होगा ताजगी का—जैसे सम्भोग के बाद उदासी का होता है; जैसे ऊर्जा के स्खलन के बाद एक शिथिलता पकड़ लेती है; सम्भोग के बाद जैसे विषाद का अनुभव होता है- वैसे ही, अगर ऊर्जा नाभि की तरफ उठ जाए तो तुम्हें हर्ष का अनुभव होगा, एक प्रफुल्लता घेर लेगी। ऊर्जा का रूपान्तरण शुरू हुआ। तुम ज्यादा शक्तिशाली, ज्यादा सौमनस्यपूर्ण, ज्यादा उत्फुल्ल, सक्रिय, अनथके और विश्रामपूर्ण मालूम

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पड़ोगे। जैसे गहरी नींद के बाद उठे हो, ताजगी आ गयी हो।

इसलिए जो लोग भी मूलाधार से शक्ति को सक्रिय कर लेते हैं, उनकी नींद कम हो जाती है। जरूरत ही नहीं रह जाती। वे थोड़े घन्टे सोकर उतने ही ताजे हो जाते हैं।

ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन बड़ा अनूठा अनुभव है। और पहला अनुभव होता है मूलाधार से, जब ऊर्जा का नाभि की तरफ संक्रमण होता है।

यह मूलबंध की सहजतम प्रक्रिया है कि तुम श्वास को बाहर फेंक दो। नाभि शून्य हो जायेगी, ऊर्जा उठेगी नाभि की तरफ—मूलाधार का द्वार अपने-आप बन्द हो जायेगा। वह द्वार खुलता है ऊर्जा के धक्के से। जब ऊर्जा मूलाधार में नहीं रह जाती, वह धक्का नहीं पड़ता, द्वार बन्द हो जाता है।

इसे अगर तुम निरन्तर करते रहे, अगर इसे तुमने एक सतत् साधना बना लिया—और इसका कोई पता किसी को नहीं चलता—तुम इसे बाजार में खड़े हुए कर सकते हो, किसी को पता भी नहीं चलेगा; तुम दुकान पर बैठे हुए कर सकते हो, किसी को पता भी नहीं चलेगा। अगर एक आदमी दिन में कम-से-कम तीन सौ बार क्षणभर को मूलबंध लगा ले, तो कुछ ही महीनों के बाद पायेगा—कामवासना तिरोहित हो गयी; काम ऊर्जा रह गयी. वासना तिरोहित हो गयी।

और तीन सौ बार करना बहुत कठिन नहीं है। यह मैं सुगमतम मार्ग कह रहा हूं, जो ब्रह्मचर्य की उपलब्धि का हो सकता है। फिर और कठिन मार्ग हैं, जिनके लिए सारा जीवन छोड़ के जाना पड़ेगा। पर कोई जरूरत नहीं है। यह किसी को पता भी नहीं चलेगा कि कब तुमने बाहर फेंक दिया सांस को। बाजार में अपनी दुकान पर; कुर्सी पर दफ्तर में बैठे हुए; कब तुमने चुपचाप आपने पेट को खींच लिया।

एक क्षण में ऊर्जा ऊपर की तरफ स्फुरण कर जाती है। और तुम पाओगे कि उसके बाद घड़ी-आधा-घड़ी के लिए तुम एकदम शान्त हो गये, हल्के हो गये; एक नयी ताजगी आ गयी।

बस तुमने अगर एक बार सीख लिया कि ऊर्जा कैसे नाभि तक आये, फिर चिन्ता नहीं करनी है। तुम ऊर्जा को, जब भी कामवासना उठे, नाभि में इकट्ठा करते जाओ। जैसे जैसे ऊर्जा बढ़ेगी नाभि में, अपने-आप ऊपर की तरफ उठने लगेगी। जैसे बर्तन में पानी भरता है तो पानी की सतह उठती है।

असली बात मूलाधार का बन्द हो जाना है। घड़े के नीचे का छेद बन्द हो गया, अब नीचे की ऊर्जा इकट्ठी होती जायेगी; घड़ा अपने-आप भरता जायेगा। एक दिन तुम अचानक पाओगे कि धीरे-धीरे नाभि के ऊपर ऊर्जा आ रही है; तुम्हारा हृदय एक नयी संवेदना से आप्लावित हुआ जा रहा है।

जिस दिन हृदय-चक्र पर आयेगी तुम्हारी ऊर्जा, तुम पाओगे, भर गये तुम प्रेम से। तुम जहां भी उठोगे, बैठोगे, तुम्हारे चारों तरफ एक हवा बहने लगेगी प्रेम की। दूसरे लोग भी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अनुभव करेंगे कि तुममें कुछ बदल गया, तुम अब वही नहीं हो। तुम कोई और ही तरंग लेकर आते हो। तुम्हारे साथ कुछ और ही लहर आती है। कि उदास प्रसन्न हो जाता है। कि दुखी थोड़ी देर को दुख भूल जाता है। कि अशान्त शान्त हो जाता है। कि तुम जहां छू देते हो, जिसे छू देते हो, उस पर ही एक छोटी-सी प्रेम की बरसात हो जाती है।

लेकिन, हृदय में ऊर्जा आयेगी, तभी यह होगा। ऊर्जा जब बढ़ेगी—हृदय से कंठ में आयेगी—तब तुम्हारी वाणी में एक माधुर्य आ जायेगा।

जब तुम्हारी वाणी में एक संगीत, एक सौन्दर्य आ जायेगा, तुम साधारण से शब्द बोलोगे और उन शब्दों में काव्य होगा। दो शब्द किसी से कह दोगे और उसे तुम तृप्त कर दोगे। तुम चुप भी रहोगे, तो तुम्हारे मौन में भी सन्देश छिप जायेंगे। तुम न भी बोलोगे, तो भी तुम्हारा अस्तित्व बोलेगा। ऊर्जा कंठ पर आ गयी।

ऊर्जा ऊपर उठती जाती है; एक घड़ी आती है कि तुम्हारे तीसरे-नेत्र पर ऊर्जा का आविर्भाव होता है। तब तुम्हें पहली दफा दिखाई पड़ना शुरू होता है—तुम अन्धे नहीं होते। उसके पहले तुम अन्धे हो। क्योंकि उसके पहले तुम्हें सिर्फ आकार दिखाई पड़ते हैं, निराकार नहीं दिखाई पड़ता; और वही असली में है।

मूलाधार अंधा चक्र है। इसलिए तो हम कामवासना को अंधी कहते हैं। वह अंधी है, उसके पास आंख बिल्कुल नहीं है। आंख तो खुलती है—तुम्हारी असली आंख—जब तीसरे नेत्र पर ऊर्जा आकर प्रकट होती है। जब लहरें तीसरे-नेत्र को छूने लगती हैं—तीसरे-नेत्र के किनारे पर तुम्हारी लहरें आकर टकराने लगती हैं—तब पहली दफा तुम्हारे भीतर दर्शन की क्षमता जगती है।

ऊर्जा जब तीसरी-आंख में प्रवेश करती है, तो अनुभव शुरू होता है। और ऐसे व्यक्ति के वचनों में तर्क का बल नहीं होता, सत्य का बल होता है। ऐसे व्यक्ति के वचनों में एक प्रामाणिकता होती है, जो वचनों के भीतर से आती है—किन्हीं प्रमाणों के आधार पर नहीं। ऐसे व्यक्ति के वचन को ही हम शास्त्र कहते हैं। ऐसे व्यक्ति के वचन वेद बन जाते हैं—जिसने जाना है, जिसने जीया है; जिसने परमात्मा को चखा है—पिया है; जिसने परमात्मा को पचाया है।

जो परमात्मा के साथ एक हो गया है।

फिर ऊर्जा और ऊपर जाती है—सहस्रार को छूती है। पहला, सबसे नीचे का चक्र है, 'मूलाधार'; और सबसे अंतिम चक्र है, 'सहस्रार'। उसे हम सहस्रार कहते हैं—आखिरी चक्र को; क्योंकि वह ऐसा है—जैसे सहस्र पंखुड़ियोंवाला कमल हो। बड़ा सुन्दर है। और जब खिलता है तो भीतर ऐसी ही प्रतीति होती है, जैसे पूरा व्यक्तित्व सहस्र पंखुड़ियोंवाला कमल हो गया; पूरा व्यक्तित्व खिल गया।

जब ऊर्जा टकराती है सहस्रार से, तो उसकी पंखुड़ियां खिलनी शुरू हो जाती हैं। सहस्रार के खिलते ही व्यक्तित्व से आनन्द का झरना बहने लगता है। मीरा उसी क्षण नाचने

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लगती है। 'पद घुंघरू बांध मीरा नाची।' उसी क्षण चैतन्य महाप्रभु पागलों की तरह उन्मत्त होकर नाचने लगते हैं। उसी क्षण चेतना तो नाचती है, शरीर का रोआं-रोआं भी आनंदित हो उठता है।

८. यौन-मुद्रा काम-ऊर्जा के ऊर्ध्वगमन की एक सरल विधि

एक तो यौन का जैविक, बायोलॉजिकल पहलू है—पौद्गलिक, पदार्थगत; जो शरीर से जुड़ा हुआ है—शरीर के अणुओं से जुड़ा है; दूसरा यौन का शक्तिगत, आत्मिक पहलू है—जो मन से, चेतना से जुड़ा हुआ है।

बायोलॉजिकल हिस्सा हम सबको प्रत्यक्ष है—जिसे हम वीर्य कहें, यौन-ऊर्जा कहें—या कोई और नाम दें, लेकिन एक और पहलू भी उसके पीछे जुड़ा हुआ है, जो आत्मगत है, शक्तिगत है। उसे आत्म-ऊर्जा—या जो भी नाम हम देना चाहें, दे सकते हैं।

यह ऐसे है, जैसे कि एक लोहे का चुम्बक होता है। एक तो लोहे का टुकड़ा होता है, जो साफ दिखाई पड़ता है; और एक मैगनेटिक फील्ड होता है उसके चारों तरफ, जो दिखाई नहीं पड़ता है। लेकिन, अगर हम आस-पास लोहे के टुकड़े रखें, तो चुम्बक की मैगनेटिक शक्ति उसे खींच लेती है। एक क्षेत्र है, जिसके भीतर वह शक्ति काम करती है।

यह जमीन हमें खींचे हुए है; उसका हमें पता नहीं चलता है, क्योंकि वह दिखाई पड़ने वाली बात नहीं है। जो दिखाई पड़ता है, वह जमीन है; जो नहीं दिखाई पड़ता है, वह उसका ग्रेविटेशन है। जो दिखाई पड़ता है, वह शरीर है; वह जो नहीं दिखाई पड़ता है, वह मनस् और आत्मा है।

ठीक ऐसे ही—काम के साथ, यौन के साथ, दो पहलुओं को समझ लेना ज़रूरी है—जो दिखाई पड़ता है, वह जैविक कोष्ठ है; जो नहीं दिखाई पड़ता है, वह काम-ऊर्जा है। इस सत्य को ठीक-से न समझने से आगे बातें फैलाकर देखनी कठिन हो जाती हैं।

इस देश के योगियों ने कहा है कि काम-ऊर्जा, सैक्स-इनर्जी, नीचे से ऊपर की तरफ ऊर्ध्वगमन कर सकती है। वैज्ञानिक कहता है—'हम शरीर में काटकर भी देख लेते हैं, योगी के वीर्य-कण तो वहीं पड़े रहते हैं। उसी जगह, जहां साधारण आदमी के शरीर में पड़े होते हैं। वीर्य ऊपर चढ़ता हुआ दिखाई नहीं पड़ता है!'

वीर्य ऊपर चढ़ता भी नहीं है, चढ़ भी नहीं सकता। लेकिन जिस काम-ऊर्जा के चढ़ने की बात की है, उसे हम समझ नहीं पाये। वीर्य-कणों की भी बात नहीं है; वीर्य-कणों के साथ एक और ऊर्जा जुड़ी है, जो दिखाई नहीं पड़ती है। वह ऊर्जा ऊपर ऊर्ध्वगमन कर सकती है। जब कोई व्यक्ति यौन-संबंध से गुजरता है, तो उसके जैविक परमाणु तो उसके शरीर को छोड़ते ही हैं, साथ ही उसकी काम-ऊर्जा, उसकी सेक्स-एनर्जी आकाश में खो जाती है—और यौन-कण नये व्यक्ति को जन्म देने की यात्रा पर निकल जाते हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

साधना सोपान

सम्भोग के क्षण में दो घटनाएं घटती हैं— एक जैविक और एक साइकिक। एक तो जीव-शास्त्र की दृष्टि से घटनाएं घटती हैं—जैसा कि बायोलॉजिस्ट अध्ययन कर रहे हैं। वह वीर्य-कण का स्खलन है। वह वीर्य-कण का यात्रा पर निकलना है अपने विरोधी कणों की खोज में—जिससे कि नये जीवन को वह जन्म दे पाये। पर जिसकी योग खोज करता है, वह दूसरी घटना है। कृत्य के साथ ही मनस् की शक्ति स्खलित होती है, जो कि शून्य में खो जाती है।

इस मनस्-शक्ति को ऊपर ले जाने के उपाय हैं। जब वीर्य के ऊर्ध्वगमन की बात कही जाती है, तो कोई शरीर-शास्त्री, कोई डॉक्टर भूलकर यह न समझे कि वह वीर्य की, या वीर्य कणों के ऊपर से जाने की बात है। वीर्य-कण ऊपर नहीं जा सकते। उनके लिए कोई मार्ग नहीं है शरीर में—ऊपर। सहस्रार तथा अस्तित्व तक पहुंचने के लिए कोई उपाय नहीं है उनके पास। जो चीज ऊपर जा सकती है, वह मैगनेटिक फोर्स है। वह जो मैगनेटिक फोर्स है, उसके ही नीचे जाने पर वीर्य-कण सक्रिय होते हैं।

काम-ऊर्जा अनन्त है; महावीर ने उसे अनन्तवीर्य कहा है। अनन्तवीर्य से अर्थ जैविक-वीर्य से नहीं है—'सीमेन' से नहीं है। अनन्तवीर्य से अर्थ उस काम-ऊर्जा का है, जो निरन्तर मन से शरीर तक उतरती है—पर जो मन से नहीं आती है। वह आती है आत्मा से मन तक, और मन से शरीर तक। ये उसकी सीढ़ियां हैं। उसके बिना वह उतर नहीं सकती। अगर बीच में से मन टूट जाये, तो आत्मा और शरीर के बीच सारे सम्बन्ध टूट जायेंगे।

जिस शक्ति को योग और तन्त्र ने काम-ऊर्जा कहा है, वह जीव-शास्त्रीय काम-ऊर्जा नहीं है। वह काम-ऊर्जा ऊपर की तरफ पुनः गति कर सकती है। किसी व्यक्ति में भी वह काम-ऊर्जा ऊपर की तरफ गति कर जाये, तो उसकी जिन्दगी उतनी ही सरल, इनोसेन्ट और निर्दोष हो जायेगी, जितनी छोटे बच्चे की होती है। वह यौन-ऊर्जा नीचे की तरफ सहज आती है; प्रकृति की तरफ से आती है।

अगर किसी मनुष्य को इस ऊर्जा को ऊपर ले जाना है, तो यह सहज नहीं होगा, प्रकृति की तरफ से नहीं होगा; यह संकल्प से होगा। यह मनुष्य के प्रयास, मनुष्य की आकांक्षा, अभीप्सा और श्रम से होगा। मनुष्य को इस दिशा में श्रम करना पड़ेगा, क्योंकि प्रकृति से उल्टी दिशा में बहना पड़ेगा।

नदी में अगर नीचे की तरफ बहना हो—सागर की तरफ—तब तैरने की कोई भी जरूरत नहीं है। तब हम हाथ-पैर छोड़कर सागर की तरफ बह सकते हैं। नदी ही सागर की तरफ ले जायेगी, हमें कुछ भी करना नहीं है। लेकिन, अगर नदी के मूलस्रोत की तरफ, उद्‌गम की तरफ जाना हो, तो फिर तैरना पड़ेगा, श्रम उठाना पड़ेगा। फिर एक संघर्ष होगा—नदी की धारा से संघर्ष।

जो लोग भी ऊपर की तरफ जाना चाहते हैं, उन्हें दूसरी बात समझ लेनी चाहिए कि

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

संकल्प और संघर्ष मार्ग होगा। ऊपर जाया जा सकता है; और ऊपर जाने के अपूर्व आनन्द हैं। क्योंकि नीचे जाकर जब सुख मिलता है—क्षणिक ही सही—तो ऊपर जाकर क्या मिल सकता है,उसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

यौन-ऊर्जा नीचे बहकर जो लाती है वह सुख है, ऊपर उठ कर जो लाती है वह आनन्द है।

संकल्प, शक्तियों के रूपान्तरण का नाम है। जब चित्त मांगता है यौन, जब चित्त मांगता है दूसरे को, अपोजिट को—स्त्री पुरुष को, पुरुष स्त्री को; जब चित्त मांगता है दूसरे की तरफ बहो— तब बहाव का रूपान्तरण करना पड़ेगा। चित्त जिस ढंग से दूसरे को मांगता है उससे उल्टी प्रक्रिया करनी पड़ेगी, ताकि चित्त की यह मांग परमात्मा की, मोक्ष की मांग बन जाये।

इसके लिए दो-तीन बातें ख्याल में लेनी जरूरी हैं।

जैसे ही चित्त यौन की मांग करता है, सेक्स की मांग करता है—शरीर सेक्स की तैयारी करने लगता है। यौन-केन्द्र से, मूलाधार से दूसरी मांग का स्फुरण शुरू हो जाता है यौन-केन्द्र बहिर्गामी हो जाता है। इस क्षण में, तन्त्र कहता है कि अगर यौन-केन्द्र को अन्तर्गामी किया जा सके, भीतर की तरफ खींचा जा सके—जिसे 'यौन-मुद्रा' का नाम दिया है; तो तत्काल आप दो क्षण में पायेंगे कि शरीर ने यौन की मांग बन्द कर दी।

मांग लेकिन पैदा हो गयी थी, शक्ति जग गयी थी; इस शक्ति को ऊपर ले जाया जा सकता है। जैसे ही हम सेक्स का विचार करते हैं, वैसे ही हमारा चित्त जननेन्द्रिय की तरफ बहने लगता है। तो तुरन्त जननेन्द्रिय को भीतर की ओर खींच लें; जननेन्द्रिय से बाहर जाने वाले सब द्वार बन्द हो जायेंगे। ऊर्जा जग गयी है, उस क्षण में हम आंखों को बन्द कर लें; आंख बन्द करके सिर को छत की तरफ अन्दर से—जैसे ऊपर से देख रहे हैं ऐसे देखना शुरू कर दें। ऐसे निरन्तर प्रयास से आप एक महीने भर के भीतर पायेंगे कि आपके भीतर से कोई चीज नीचे से ऊपर की तरफ जानी शुरू हो गयी है।

यह वस्तुतः अनुभव होगा कि कोई चीज ऊपर बहने लगी, कोई चीज ऊपर उठने लगी। उसे कोई 'कुण्डलिनी' के नाम से कहता है, उसे कोई और नाम दे सकता है।

इसमें दो बिन्दुओं पर ध्यान देना जरूरी है—एक तो 'सेक्स-सेन्टर' पर, 'मूलाधार' पर;और दूसरे 'सहस्रार' पर। सहस्रार हमारे ऊपर का केन्द्र है—और मूलाधार हमारे सबसे नीचे का केन्द्र है। मूलाधार को सिकोड़ लें भीतर की तरफ; उसमें जो शक्ति पैदा हुई है वह शक्ति मार्ग खोज रही है; और अपने चित्त को ले जाएं ऊपर की तरफ, क्योंकि वही मार्ग खुला रह जाता है।

चित जिस तरफ देखता है—उसी तरफ शरीर की शक्ति बहनी शुरू हो जाती है—यह ट्रान्सफॉर्मेशन की छोटी-सी विधि है। इसका अगर प्रयोग करें तो ब्रह्मचर्य बिना सप्रेशन के फलीभूत होता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यह सप्रेशन नहीं है, यह सब्लिमेशन है। यह दमन नहीं है। दमन का तो मतलब है कि ऊपर द्वार नहीं खुला है और नीचे के द्वार पर रोके चले जा रहे हैं। तब उपद्रव होगा; तब विक्षिप्तता होगी, पागलपन होगा। अगर मार्ग है शक्ति के लिए, तो दमन नहीं होगा, सिर्फ ऊर्ध्वगमन होगा; शक्ति नीचे से ऊपर की तरफ उठनी शुरू हो जायेगी।

यह तो प्रायोगिक बात मैंने आप से कही। यह प्रयोग करें और समझें। यह कोई सैद्धान्तिक बात नहीं है। न कोई बौद्धिक या शास्त्रीय बात है। यह करोड़ों लोगों की अनुभूत घटना है और सरलतम प्रयोग है। और एक बार मस्तिष्क के ऊपरी छोरों पर रस के फूल खिलने शुरू हो जायें, तो आपकी जिन्दगी से यौन विदा होने लगेगा। वह धीरे-धीरे खो जायेगा और एक नयी ही ऊर्जा का, नयी शक्ति का, नये वीर्य का, नयी दीप्ति का, नये आलोक का और नये संसार का जन्म होगा।

फिजिओलॉजी से इसका कोई लेना-देना नहीं है। जो शक्ति ऊपर उठेगी, उसे हम शरीर को काटकर देखें, तो वह कहीं भी नहीं मिलेगी; वह मैगनेटिक फील्ड की तरह है। हम हड्डियों को तोड़ें-फोड़ें तो वह कहीं भी नहीं मिलेगी। वह शारीरिक घटना नहीं है, वह घटना साइकिक है। वह घटना मनस् में घटती है।

शरीर के तल पर लेकिन अन्तर पड़ने शुरू हो जायेंगे। उस शक्ति के नीचे प्रवाहित होने पर शरीर के वीर्य-कणों का प्रवाह बाहर की तरफ होता है। यदि वह शक्ति नीचे नहीं बहेगी, तो शरीर के वीर्य-कण भी बाहर की ओर बहने बन्द हो जायेंगे और शरीर संरक्षित होगा। लेकिन शरीर के संरक्षण के लिए यह प्रयोग नहीं है। क्योंकि शरीर की उम्र है और वह मरेगा; जन्म और मृत्यु के बीच फासला जितना है, वह पूरा कर लेगा। जो बड़ी घटना घटेगी वह साइकिक-एनर्जी की है; वह मनस् ऊर्जा की है।

जितनी मनस्-ऊर्जा व्यक्ति के पास हो, उतना ही व्यक्ति का विस्तार होने लगता है,उतना ही वह फैलने लगता है, उतना ही वह विराट् होने लगता है। और जिस दिन एक कण भी व्यक्ति की मनस्-ऊर्जा का नीचे की तरफ प्रवाहित नहीं होता, उसी दिन व्यक्ति घोषणा कर सकता है—'अहं ब्रह्मास्मि'। वह कह सकता है—'मैं ब्रह्म हूं'।

यह 'अहं ब्रह्मास्मि' की घोषणा कोई तार्किक निष्पत्ति, कोई लॉजिकल कन्क्लूजन नहीं है, यह एक एग्जिस्टेन्शियल कन्क्लूजन है; यह एक अस्तित्वगत अनुभव है। जिस दिन विराट् से सम्बन्ध होता है, उस दिन पता चलता है कि मैं व्यक्ति नहीं हूं; विराट् हूं।

लेकिन ये विराट् का अनुभव विराट् शक्ति के संरक्षण से हो सकता है। और इस शक्ति का संरक्षण, जब तक काम-ऊर्जा ऊपर की तरफ प्रवाहित न हो, तब तक असम्भव है।

९. निश्चल-ध्यान-योग

ध्यान के सैकड़ों प्रकार हैं। और ध्यान के सैकड़ों मार्गों से लोग ध्यान को उपलब्ध हो सकते हैं। निश्चल-ध्यान-योग की तरफ पहुंचने के लिए भी सैकड़ों रास्ते हैं। और पृथ्वी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पर अनेकानेक रास्तों से चलकर लोग लक्ष्य को उपलब्ध हो गये हैं—जिसे हम मन का ठहर जाना कहते हैं।

एक छोटी-सी सरल प्रक्रिया मैं आपसे कहूंगा, जिसे आप कर सकें। और आपको निश्चल मन की थोड़ी-सी झलक और छाया भी मिलनी शुरू हो जाये, तो आपकी जिन्दगी रूपांतरित होने लगेगी। एक नये आदमी का जन्म आपके भीतर हो जायेगा। पुराना आदमी बिखरने लगेगा, एक नयी चेतना, एक नया केन्द्र; देखने का एक नया ढंग, जीने की एक नयी प्रक्रिया, होने की एक नयी व्यवस्था आपके भीतर पैदा हो जायेगी। जैसे अचानक अन्धे की आंख खुल जाये, जैसे अचानक बहरे को कान मिल जाएं, जैसे अचानक मरा हुआ पुनः जीवित हो जाये—ठीक ध्यान के प्रयोग से ऐसी ही व्यापक क्रांतिकारी घटना घटती है।

आपने चित्र देखे होंगे बच्चों के, जब वे मां के पेट में, गर्भ में होते हैं। मां के पेट में बच्चा जिस हालत में होता है—गर्भ में; उस अवस्था में—मनोवैज्ञानिक कहते हैं, योग की गहरी खोज कहती है...कि मां के पेट में जब बच्चा होता है—जिस आसन में, उस समय बच्चों के पास न्यूनतम मन होता है; न-के-बराबर मन होता है। कह सकते हैं कि होता ही नहीं। और बच्चे की चेतना, मां के पेट में, मस्तिष्क में नहीं होती। और न ही बच्चे की चेतना हृदय में होती है।

शायद आपको पता नहीं कि मां के पेट में बच्चे का हृदय नहीं धड़कता; नौ माह का बच्चा बिना हृदय की धड़कन के होता है। इसलिए एक बात और ख्याल में लेना कि हृदय की धड़कन से जीवन का कोई सम्बन्ध नहीं है; क्योंकि बच्चा बिना हृदय की धड़कन के नौ महीने जिन्दा रहता है।

जीवन गहरी बात है। चेतना जब भाव में होती है तो हृदय केन्द्र होता है; और चेतना जब विचार में होती है तो मस्तिष्क केन्द्र होता है। लेकिन मस्तिष्क बहुत बाद में विकसित होता है और हृदय नौ महीने बाद धड़कता है। उसके भी पहले, चेतना जिस केन्द्र पर होती है, वह नाभि है। बच्चा मां से, नाभि से जुड़ा रहता है; जीवन का पहला अनुभव बच्चे की नाभि पर होता है। जिन लोगों को मन के पार जाना है, उन्हें हृदय और मस्तिष्क दोनों से उतर कर नाभि के पास लौटना होता है। अगर वे फिर से अपनी चेतना को नाभि के पास अनुभव कर सकें, तो मन तत्क्षण ठहर जायेगा।

तो इस ध्यान की प्रक्रिया में—जिसे मैं 'निश्चल-ध्यान-योग' की तरफ एक विधि कहता हूं—दो बातें ध्यान में रखनी जरूरी हैं। जैसा कि सूफी-फकीरों को अगर आपने देखा है प्रार्थना करते, या मुसलमानों को अगर आपने नमाज पढ़ते देखा हो, तो जिस भांति वे घुटने मोड़कर बैठते हैं, वैसे घुटनें मोड़कर बैठ जायें (बच्चे के घुटने ठीक उसी तरह मुड़े होते हैं मां के गर्भ में।) आंखें बन्द कर लें, शरीर को ढीला छोड़ दें, और श्वास को बिल्कुल शिथिल, रिलैक्स्ड छोड़ दें। क्योंकि श्वास जितनी धीमी और जितनी आहिस्ता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होगी, आपके लिए उतना अच्छा होगा।

श्वास को शांत नहीं किया जा सकता; अगर आप रोकेंगे तो श्वास तेजी से चलने लगेगी। रोकें मत, सिर्फ ढीला छोड़ दें। आंख बन्द कर लें और अपनी चेतना को भीतर नाभि के पास ले जायें। अपने ध्यान को आंख बन्द कर वहीं लायें, जहां नाभि कम्पित हो रही है; जहां श्वास के धक्के से पेट ऊपर-नीचे हो रहा है। थोड़ी देर में शरीर आपका आगे झुकेगा और फिर जाकर जमीन से लग जायेगा। तब आप ठीक उस हालत में आ जायेंगे जिस हालत में बच्चा मां के पेट में होता है।

शांत होने का इससे ज्यादा कीमती आसन जगत् में कोई भी नहीं है! आसन ऐसा हो जाये, जैसा गर्भ में बच्चे का होता है—और आपका ध्यान नाभि पर चला जाये। बच्चे का ध्यान और चेतना नाभि पर होती है। आपका ध्यान भी नाभि पर चला जायेगा।

अनेक बार ध्यान उचट जायेगा। कोई कहीं आवाज होगी, ध्यान चला जायेगा। कहीं कोई बोल देगा कुछ, ध्यान उचट जायेगा। विचार आ जायेगा और ध्यान हट जायेगा। उससे लड़ें मत। अगर ध्यान हट जाये तो चिंता मत करें। जैसे ही ख्याल आये कि ध्यान हट गया, तो वापिस अपने ध्यान को नाभि पर ले आयें।

आप एक अज्ञात-अस्तित्व से जुड़े हैं, नाभि के द्वारा ही। जैसे हम मां से जुड़े होते हैं इस भौतिक संसार से, ऐसे ही इस बड़े जगत्, इस बड़े अस्तित्व से—इस प्रकृति या अस्तित्व के गर्भ से, नाभि से जुड़े होते हैं।

जैसे ही आप नाभि के निकट अपनी चेतना को लाते हैं, मन निश्चल हो जाता है।

जीसस का बहुत अद्‌भुत वचन है, शायद ही कोई ईसाई उसका अर्थ समझ पाया हो। जीसस ने कहा कि तुम तभी मेरे प्रभु के राज्य मे प्रवेश करोगे, जब तुम छोटे बच्चे की भांति हो जाओ।

यूं तो इसका अर्थ वही हुआ कि हम छोटे बच्चों की तरह सरल हो जायें, लेकिन गहरे वैज्ञानिक अर्थ में इसका अर्थ होता है कि हम बच्चे की उस आंतरिक अवस्था में हो जायें, जब बच्चा होता ही नहीं, मां ही होती है—और बच्चा मां के सहारे ही जी रहा होता है। न उसमें हृदय की धड़कन होती है, न उसका अपना मस्तिष्क होता है—बच्चा, पूरा समर्पित, मां के अस्तित्व का अंग होता है।

ठीक ऐसी ही हालत 'निश्चल-ध्यान-योग' में घटती है। आप शांत हो जाते हैं। परमात्मा के साथ एक हो जाते हैं और परमात्मा के द्वारा आप जीने लगते हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१०. अनापानसती-योग

एक सरल-सी प्रक्रिया पर रोज दिनभर ख्याल रखें, चलते, उठते,बैठते, सोते—जब तक ख्याल रहे, श्वास पर ख्याल रहे; पूरे वक्त स्मृति श्वास पर रहे। श्वास भीतर जा रही है तो हमारी स्मृति भी उसके साथ भीतर जाये—बोध भी... कि श्वास भीतर गयी; श्वास बाहर जा रही है तो बोध भी श्वास के साथ बाहर जाये।

आप श्वास पर ही तैरने लगें, श्वास पर ही चेतना की नाव को लगा दें। बाहर जाये तो बाहर, भीतर जाये तो भीतर, श्वास के साथ ही आपका भी कम्पन होने लगे। और इसे बिल्कुल न भूलें कभी। जब भी भूल जायें, और जब याद आये, फौरन फिर शुरू कर दें। घूमने गये हैं, बगीचे में गये हैं—कहीं भी गये हैं; कार में बैठे हैं तो इसको नहीं छोड़ देना है, इसको सतत् ही स्मरण रखें।

तो एक दिन तीन-चार दिन में स्मरण टिकने लगेगा। और जैसे-जैसे स्मरण टिकने लगेगा, वैसे-वैसे ही आपका चित्त शान्त होने लगेगा। ऐसी शान्ति, जो आपने कभी नहीं जानी होगी। क्योंकि जब चित्त पूर्ण श्वास के साथ चलने लगता है तो विचार अपने-आप बन्द होने लगते हैं, विचार का उपाय नहीं रहता। क्योंकि यें बातें एक साथ नहीं हो सकतीं। श्वास पर चित्त होगा तो विचार बन्द होंगे, और विचार पर चित्त जायेगा तो श्वास पर नहीं रहेगा। दोनों बातें एक साथ नहीं हो सकतीं; यह असम्भव है।

इसलिए मैं श्वास पर ध्यान रखने के लिए कह रहा हूं—ताकि विचार वहां से खो जायें। और विचार सीधे हटाने तो बहुत कठिन हैं; क्योंकि वह तो दबाना हो जाता है। यहां हम हटा नहीं रहे विचारों को; विचार से कोई सम्बन्ध ही नहीं; हम तो अपनी पूरी चेतना को दूसरी जगह लिए जा रहे हैं। और चूंकि चेतना वहां नहीं होती जहां विचार हैं, इसलिए उनको हट जाना पड़ता है।

तो विचार छोड़ने का ख्याल ही नहीं करना है। श्वास पर ध्यान चला जाये तो विचार छूट जाते हैं। क्योंकि श्वास बिल्कुल दूसरा तल है, जहां विचार नहीं हैं। और विचार एक दूसरा तल है जहां श्वास का स्मरण नहीं हो सकता। तो ये बिल्कुल ही विरोधी प्रक्रियाएं हैं। और अगर एक तल पर से जाते हैं, तो दूसरे से आपने-आप मुक्ति हो जाती है। तो पूरे समय—ऐसा नहीं कि कभी, थोड़ी-बहुत देर; क्योंकि तब फिर गहरा नहीं हो पायेगा। तो पूरे समय श्वास पर ध्यान रखें। सुबह उठें तो पहला स्मरण श्वास का; रात सोयें तो अन्तिम स्मरण श्वास का।

श्वास पर पूरे वक्त ध्यान रखें। और घन्टा, आधा घन्टा कभी भी एकान्त में बैठकर ध्यान रखें। आंखें बन्द कर लें और श्वास पर ही ध्यान रखें। क्योंकि बाहर चलते हैं, काम करते हैं, बार-बार चूक हो जाती है। पैर में कांटा गड़ गया है, तो ध्यान कहां श्वास पर रहा—ध्यान तो कांटे पर चला गया! प्यास लगी तो ध्यान पानी पर चला जायेगा। एक घन्टे के लिए कहीं एकान्त मिल जाये, तो वहां बैठ जायें।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रात बहुत बढ़िया होगी। कहीं भी दीवार से टिक जायें और बैठ जायें, और पूरा घन्टा श्वास को देखने में ही बिता दें। तो पन्द्रह दिनों में उतना बड़ा काम हो जायेगा, जो आप अकेले पन्द्रह वर्षों में नहीं कर पायेंगे।

हो सकता है कि इसमें दो-चार घटनायें घटें—पर उनकी चिन्ता नहीं करनी है। जैसे; श्वास पर जितना ध्यान देंगे, नींद कम हो जायेगी; उसकी जरा भी चिन्ता न करें। जितनी देर नींद खुली रहे, बिस्तर पर, श्वास पर ही ध्यान रहे। चार-पांच दिन श्वास पर ध्यान रखने से नींद उड़ भी जा सकती है—उस पर जरा भी चिन्ता न करें; क्योंकि श्वास पर ध्यान रखने से नींद से जो काम होता है, वह पूरा हो जाता है—विश्राम मिल जाता है।

नींद दो तरह से खत्म होती है—तनाव से भी और विश्राम से भी। चिन्ता से भी नींद खत्म होती है, क्योंकि चिन्ता इतना तनाव से भर देती है कि मस्तिष्क शिथिल ही नहीं हो पाता। तो नींद खत्म हो जाती है। और अगर कोई ध्यान का प्रयोग करे, तो चित्त इतना शान्त हो जाता है कि नींद से जो शान्ति की जरूरत थी, वह पूरी हो जाती है। इसलिए नींद का कोई कारण नहीं रह जाता, वह विदा हो जाती है। तो उसका ध्यान नहीं करेंगे; जरा भी फिक्र नहीं करेंगे।

और कुछ अजीब-अजीब अनुभव हो सकते हैं; तो उन पर भी चिन्ता नहीं करेंगे। वे अलग-अलग सबको हो सकते हैं; एक-से होते भी नहीं। उसकी बात किसी दूसरे से आप मत करें। क्योंकि दूसरा सिर्फ हंसेगा और आपको पागल समझेगा।

क्योंकि वैसा अनुभव उसको नहीं हो रहा है। इसलिए उसको दूसरे से कहना ही मत कभी; वह सबको अलग-अलग होता है। हो सकता है श्वास पर ध्यान देते समय किसी को एकदम ऐसा लगे कि उसका शरीर बहुत बड़ा हो गया है और एकदम फैल गया है—विस्तार हो गया है उसके शरीर का। और वह एकदम घबरा जाये कि यह क्या हुआ! अब उठ सकेंगे कि नहीं उठ सकेंगे? इतना भारी हो जाये कि एकदम पत्थर हो जाये। इतना हल्का हो जाये कि ऐसा लगे कि जमीन से ऊपर उठ गया है। जमीन और हमारे बीच फासला हो गया है। मैं ऊपर उठा जा रहा हूं। मैं लौट पाऊंगा या नहीं लौट पाऊंगा?

गहन अंधकार का अनुभव हो सकता है। तेज चमकती बिजलियों का अनुभव हो सकता है। सुगन्ध अनुभव हो सकती है अजीब तरह की। दुर्गन्ध अनुभव हो सकती है। कुछ भी हो सकता है। बहुत तरह की बातें हो सकती हैं।

तो उनको चुपचाप खुद ही अपने भीतर रखें, किसी से कहें ही नहीं। जब मैं आपको मिलूंगा तो आप मुझको कहें। और मुझसे कहकर फिर आप दुबारा उसकी किसी से बात मत करें।

उसके कई कारण हैं—एक तो दूसरा कभी उस बात पर विश्वास नहीं कर सकता। कभी नहीं करेगा, क्योंकि वैसा उसको हो नहीं रहा है। और वह हंसेगा और उसकी हंसी आपको नुकसान पहुंचायेगी। बहुत गहरा नुकसान पहुंचाएगी।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दूसरी बात है कि हमें जो अनुभव होते हैं, अगर हम उनकी बात करें तो वे फिर दुबारा नहीं होते। क्योंकि वे होते हैं अनायास और जब हम उनकी बात कर देते हैं, तो फिर नहीं होते।

और भी एक बड़े मजे की बात है कि ये जो गहरी अनुभूतियां हैं, उनको बिल्कुल रहस्य की तरह छिपाना चाहिए, नहीं तो ये बिखर जाती हैं। उनमें भी बड़ी ताकत है।

जैसे कि हम तिजोरी में धन छिपा देते हैं। और जैसे कि हम कपड़े पहनते हैं और सूरज की गर्मी को भीतर रोक लेते हैं। सर्दी पड़ रही है तो हम कपड़े पहने हुए हैं — इसलिए कि सर्दी हमारी गर्मी को खींच लेगी बाहर; और शरीर मुश्किल में पड़ जायेगा।

तो पूरे वृक्त हमारा शरीर बाहर के सम्पर्क में अपनी गर्मी को खो रहा है। जब बहुत गहरी अनुभूति अन्दर होती है तो एक खास तरह की शक्ति पैदा होती है उन अनुभवों के साथ। अगर आपने बात की तो वह तत्काल बिखर जाती है, खो जाती है।

तो उसकी बात ही नहीं करना। निकटमत सम्बन्धियों से भी बात मत करना। पत्नी से भी नहीं कहना। उसको बिल्कुल अपने अन्दर छिपा लेना, ताकि वह बढ़े, गहरी हो और गहरे अनुभवों मे ले जाये।

श्वास पर ध्यान केन्द्रित करना बहुत गहरा प्रयोग है। इसमें किसी तरह का तनाव और परेशानी भी नहीं है। और मैं हर तरह की विधियों की बात करता हूं—सिर्फ इस कारण कि बहुत तरह के लोग हैं; न-जाने किस को कौन-सी विधि कब पकड़ मे आ जाये! तो जिसको जो पकड़ में आ जाये, वह उस पर चला जाये।

एक सौ बारह विधियां हैं ध्यान की। बहुत अच्छा होगा कि मैं एक बार उन एक सौ बारह विधियों पर सात-आठ दिन बैठकर बात करूं—ताकि एक पूर्ण संकलन पूरी विधियों का अलग हो जाये।

११. इक्कीस दिवसीय मौन

भगवान, इक्कीस दिन के पूर्ण एकान्त और मौन में—गहरे ध्यान के विशेष प्रयोग-काल में साधक को किन नियमों का पालन करना चाहिए?

सक्रिय ध्यान प्रत्येक दिन एक बार अवश्य करो, और श्वास पर सतत् ध्यान रखो। न पढ़ो, न लिखो, न चिन्तन ही करो—क्योंकि पढ़ना-लिखना प्राण-शरीर (इथरिक-बॉडी) के द्वारा सम्पन्न नहीं होता है। यह क्रिया मनस्-शरीर (मेन्टल-बॉडी) के द्वारा सम्पादित

---

१. ध्यान रहे, ध्यान की एक सौ बारह विधियों पर अंग्रेजी भाषा में भगवान श्री के अस्सी प्रवचन हैं—जिसके 'द बुक ऑफ द सिक्रेट्स' के नाम से चार-चार सौ पृष्ठों के पांचों खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। इन पुस्तकों के इच्छुक साधक 'श्री रजनीश आश्रम, १७-कोरेगांव पार्क, पूना-४११ ००१' से सम्पर्क करें।

संकेत : 'द बुक ऑफ द सिक्रेट्स' से अनुदित पांच ध्यान विधियों पर एक पूरा प्रवचन—'आत्मोपलब्धि की पांच तान्त्रिक विधियां'—देखें।

स्वप्न में सचेतन प्रवेश की दोनों ध्यान-विधियां भी 'द बुक ऑफ द सिक्रेट्स' से ली गई हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होती है, और यह ऊर्जा को दूसरी दिशा में प्रवाहित कर देती है।

टहलने के लिए जा सकते हो; क्योंकि टहलना प्राण-शरीर का हिस्सा है। इसलिए, अगर प्राण-शरीर अस्वस्थ हो, तो तुम टहलना पसन्द नहीं करोगे। सभी शारीरिक क्रियायें प्राण-शरीर से सम्बन्धित हैं; वे प्राण-शरीर के द्वारा ही सम्पादित होती हैं।

इसलिए इस प्रयोग-अवधि में देखने में भी संयम बरतना—कारण कि देखने की क्रिया प्राण-शरीर के द्वारा सम्पन्न नहीं होती है, बल्कि मनस्-शरीर के द्वारा सम्पन्न होती है, और फलस्वरूप देखने में हमारी शक्ति गलत दिशा की ओर बहने लगती है।

भ्रमण के लिए जाओ तो आंखें अधखुली हों। क्योंकि अधखुली आंखें रास्ते के अलावा और कुछ नहीं देख सकतीं। नयी उत्तेजनायें हों, तो ही विचार-प्रक्रिया सम्भव हो सकती है। अगर इन्द्रियां हमेशा ऊब में हों, अकेलेपन में हों, तो सोच-विचार सम्भव नहीं हो सकता।

इसलिए विषय-परिवर्तन पर दृष्टि मत रखो, क्योंकि वह विचार को उकसाता है।

तुम्हें नीरसता के परिवेश में ही रहना चाहिए—मात्र एक कमरे में, ताकि निरन्तर वही फर्श दिखाई पड़े। वह बिल्कुल नीरस और ऊबाने वाला होना चाहिए, ताकि विचार को सक्रिय होने का मौका न मिले। तो उस हालत में तुम कुछ सोच ही नहीं सकते।

विचार के लिए नयी उत्तेजनायें आवश्यक हैं। चिन्तन हमेशा कुछ नये की अपेक्षा रखता है, ताकि विचार निर्मित हो सके। इसलिए साधक को ऐसा मौका नहीं देना चाहिए।

किसी व्यक्ति को मत देखना; तब विचार सक्रिय नहीं होंगे। क्योंकि टेबल, कुर्सी या बिस्तर के साथ तुम संवाद नहीं कर सकते। लेकिन, अगर किसी व्यक्ति को देखते हो—हालांकि उससे बात भी नहीं करते; तो भी विचार सक्रिय होने लगते हैं; क्योंकि उससे संवाद सम्भव है। हर क्षण अपनी श्वास के प्रति होशपूर्ण रहो—ताकि तुम्हारी पूरी ऊर्जा एवं ध्यान बाह्य-वस्तुओं पर न होकर भीतर श्वास पर हो।

चाहो तो टहलने के लिए निकल सकते हो, लेकिन तब सिर्फ टहलना ही, और कुछ मत करना; सिर्फ टहलने से ही प्रयोजन रखना। इससे लाभ होगा।

प्राण-शरीर के अलावा अन्य किसी भी शरीर से सम्पन्न होने वाली क्रियाओं में संलग्न नहीं होना चाहिए।

दिन में एक या दो बार स्नान कर सकते हो, वह प्राण-शरीर से ही सम्बन्धित है। हर चीज को ध्यानपूर्वक, साक्षीभाव से देखते रहो। तुम टहलने के लिए निकले हो या चाय पी रहे हो, उन्हें साक्षी-भाव से देखते रहो।

इन इक्कीस दिनों में बहुत-सी घटनायें घटेंगी, इसलिए थोड़ा इस सम्बन्ध में भी समझ लेना अच्छा होगा। प्रथम सप्ताह में अगर बहुत कम नींद की आवश्यकता महसूस हो तो चिन्तित न होना। यह सम्भव है—क्योंकि सोचने-विचारने आदि बहुत-सारी क्रियाओं को, जो तुम साधारणतः किया करते थे—अब छोड़ दिया है। श्वास पर निरन्तर ध्यान

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

से इतनी ऊर्जा का जन्म होगा कि लम्बे समय तक आलस्य में नहीं रह सकते हो; तुम इतने जीवन्त और प्राणवान हो जाते हो कि नींद बहुत कम महसूस होगी।

अतः निद्रा आती हो तो ठीक—नहीं आती हो, तो भी ठीक। उससे कोई हानि नहीं होने जा रही है। इसके बहुत-से कारण हैं। पहला, जब तुम श्वास पर ध्यान देते हो तो श्वास लयबद्ध हो जाती है। और उस लयबद्धता से पूरा व्यक्तित्व संगीतपूर्ण हो जाता है। उस लयबद्धता से ऊर्जा का संरक्षण होता है।

साधारणतः हमारी श्वास लयबद्ध नहीं होती है, श्वास की गति बड़ी ऊलजलूल एव विक्षिप्त होती है। और इस कारण ऊर्जा का व्यर्थ निष्कासन होता है। लयबद्धता और समस्वरता से ऊर्जा संरक्षित होती है। और चूंकि तुम हर क्षण जागरूक हो, श्वास पर ध्यान देने में अत्यल्प ऊर्जा का व्यय होता है। क्योंकि यह कोई काम नहीं है, श्वास पर ध्यान देने में तुम कुछ कर नहीं रहे हो; यह एक तरह की अक्रिया है; तुम बस होशपूर्ण हो।

जिस क्षण तुम कुछ करने लगते हो—चाहे वह सोच-विचार ही क्यों न हो; क्रिया शुरू हो जाती है। और इससे ऊर्जा का अपव्यय होता है।

चौबीसों घण्टे निरन्तर श्वास पर ध्यान देने का अर्थ हुआ—अति-अल्प ऊर्जा का खर्च, ताकि अधिकतम ऊर्जा का संरक्षण हो। उससे तुम ऊर्जा का एक भण्डार हो जाते हो। यही ऊर्जा कुण्डलिनी-जागरण में काम आयेगी। अन्यथा हम शक्ति का अपव्यय कर-करके इस मामले में बिल्कुल दीन-हीन हो गये हैं। और तब कुण्डलिनी के यात्रा-पथ से जब ऊर्ध्वगमन के लिए हम कोशिश करते हैं, तो इतनी ऊर्जा ही नहीं होती है हमारे पास कि वह ऊपर की ओर यात्रा कर सके।

नीचे जाने में कोई बहुत ज्यादा ऊर्जा की जरूरत नहीं है, पर ऊर्ध्वगमन के लिए ऊर्जा के एक विशाल भण्डार की आवश्यकता है। तभी ऊपर के लिए द्वार खुल सकते हैं, वरना नहीं। इसलिए जिनके पास बहुत थोड़ी ऊर्जा शेष रह गयी है, उनके लिए एकमात्र काम-वासना का द्वार ही खुला है।

साधारणतः हम सोचते हैं कि कामुक व्यक्ति बड़ा ऊर्जावान होता होगा, जो कि बिल्कुल गलत बात है। अति ऊर्जावान् व्यक्ति कामुक कभी नहीं हो सकता, क्योंकि तब उसकी जीवन-शक्ति ऊपर की ओर यात्रा करने लगती है। कामुकता भी शक्ति है, पर बहुत अल्प मात्रा की। उससे तुम ऊपर नहीं उठ सकते, सिर्फ नीचे ही जा सकते हो। उस हालत में सिर्फ अधोगमन ही एकमात्र सम्भावना बचती है—क्योंकि ऊर्जा कहीं-न-कहीं जाना चाहेगी, वह एक जगह स्थिर नहीं रह सकती।

ऊर्जा का स्वभाव ही गतिशील रहना है। इसलिए अगर वह ऊपर नहीं जा सकती, तो नीचे जायेगी ही। इससे अन्यथा कोई उपाय नहीं है। अगर वह ऊपर की ओर यात्रा करने लगती है, तो नीचे का द्वार स्वतः धीरे-धीरे बन्द होने लगता है।

इसलिए श्वास पर ध्यान देकर तुम अपनी सारी क्रियाओं को इन्कार कर देते हो। और

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस प्रकार ऊर्जा इकट्ठी होती है।

दूसरी बात—सिर्फ होश और जागरूकता जीवन-ऊर्जा को ओजपूर्ण बनाने में काफी मदद पहुंचाती है। यह ठीक वैसा ही है, जैसे कि अगर तुम पर एक समूह का ध्यान पड़े तो तुम ज्यादा जीवन्त महसूस करते हो और आलस्य विदा हो जाता है—क्यों?

नेता अपने को बड़ा प्राणवान अनुभव करते हैं, क्योंकि एक समूह का बराबर उन्हें ध्यान मिलता रहता है; उनकी ओर देखने मात्र से उन्हें शक्ति उपलब्ध होती है। जिस क्षण से लोगों का ध्यान मिलना उन्हें बन्द होता है, वे मृतप्राय हो जाते हैं। नेता होने का जो सुख है, वह यही है कि समूह द्वारा ध्यान दिये जाने से वे ज्यादा जीवन्त और प्रफुल्लित अनुभव करते हैं।

ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि जब बहुत-से लोग तुम्हारी ओर देख रहे हों; तो तुम स्वयं सावधान और जागरूक हो जाते हो। वही जागरूकता जीवन-ऊर्जा को उत्पन्न करती है। इसलिए जब तुम अपनी श्वास के प्रति जागरूक होते हो, तो उससे तुम्हारी जीवन-ऊर्जा का भीतरी स्रोत स्पर्शित होता है।

इसलिए जब निद्रा समाप्त हो जाये तो चिन्तित मत होना। और अगर किसी ऐसी चीज की वजह से तुम्हारे मन में उथलपुथल होने लगे, जिसके बारे में तुमने कभी सोचा ही नहीं था, तो भी इसके लिए चिन्ता मत करना; उसे साक्षीपूर्वक देखते रहना। अचेतन में जो कुछ दबा पड़ा है, वह मुक्त होगा और मन की ऊपरी सतह पर आयेगा। बाहर फेंके जाने के पहले, उसे मन के चेतन भाग में आना ही होगा।

अगर उसे दबा दोगे, तो वह फिर अचेतन में चला जायेगा। अगर उसका अनुसरण करोगे, तो उससे व्यर्थ ही शक्ति का अपव्यय होगा।

इसलिए निरन्तर श्वास पर ध्यान रखना और पृष्ठभूमि में जो कुछ भी दिखाई पड़ता या अनुभव में आता हो, उसे उदासीन-भाव से देखते रहना। उन चीजों के प्रति बिल्कुल उदासीनता का भाव रखना, मानो उनसे तुम्हें कोई मतलब ही नहीं है। और श्वास पर हमेशा ध्यान रखना। श्वास पर ध्यान तुम्हारी जागरूकता का केन्द्र होगा और परिधि पर बहुत-सारी घटनाएं घटती रहेंगी। वहां पर विचार होंगे, कम्पन होंगे... लेकिन परिधि पर ही, केन्द्र पर नहीं; केन्द्र पर तो सिर्फ श्वास पर ध्यान रखना है। जैसे कि तुम मुझे सुन रहे हो और मेरी आवाज तुम तक पहुंच रही है। पर यह आवाज मूल ध्यान-क्षेत्र के अन्दर नहीं है; तुम मुझे सुन रहे हो, यही केन्द्र पर है। आवाज तो परिधि पर, बाहरी सतह पर सुनी जा रही है। अवचेतन आवाज को सुन रहा है; तुम इस तथ्य के प्रति चेतन हो सकते हो। जब तुम इसके प्रति चेतन नहीं हो, तो अवचेतन का इस पर भी ध्यान है; यह वहां है।

बहुत-सी चीजें तुम्हारे ध्यान में आयेंगी। वैसी चीजें जो कि मूखर्तापूर्ण प्रतीत होंगी। जो अतर्क्य, अविश्वसनीय, काल्पनिक, दुस्वप्न आदि प्रतीत होंगी। पर तुम अपनी श्वास को

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ही देखते रहना—और उन मूर्खतापूर्ण चीजों को उभरने देना; उनके प्रति, बस उदासीन रहना। ठीक उसी तरह, जैसे कि सड़क पर अनेकों लोग गुजर रहे हैं—और तुम भी उस रास्ते से गुजर रहे हो, पर उन सबों से तुम्हें कोई प्रयोजन नहीं है।

और तब उन भाव-चित्रों से तुम मुक्त हो जाओगे, उनका रेचन हो जायेगा। और प्रथम सप्ताह के बाद तुम पर एक बिल्कुल ही नयी शान्ति का आविर्भाव होगा। क्योंकि जब तक अचेतन का पूरा निष्कासन नहीं हो जाता है, हम कभी भी पूर्ण मौन को अनुभव नहीं कर पाते। जिस क्षण यह अचेतन निष्कासन के बाद हल्का होता है, उसके बाद अचेतन के भीतर कोई शोरगुल नहीं बच रहता है।

उदासी या विषाद का कोई भाव गहरे अचेतन में कहीं दबा पड़ा होगा, तो वह बाहर आयेगा और तुमको बिल्कुल आन्दोलित और उद्विग्न कर देगा। वह मात्र एक विचार नहीं होगा,बल्कि वह तुम्हारी भावदशा होगी। बहुत सारी चित्तदशायें उभरेंगी। कभी बड़ी प्रफुल्लता का अनुभव होगा, तो कभी उदासी का — ये भावदशाएं हैं।

तो जिस तरह विचारों के प्रति तुम उदासीन रहे हो, उसी तरह इन भावदशाओं के प्रति भी उदासीन रहना; उन्हें आने जाने देना, वे स्वतः आयेंगे और जायेंगे। उनके चलते कोई चिन्ता करने की जरूरत नहीं है। वे भी अवचेतन में दबे हैं और उनका निष्कासन होगा। तब उसके बाद कुछ अज्ञात अनुभवों की घटनायें घटेंगी।

इस प्रयोग में बहुत कुछ सम्भव है। हर व्यक्ति को अलग अलग अनुभव होंगे। लेकिन जो कुछ भी हो, भयभीत मत होना। भयभीत होने की ज़रा भी आवश्यकता नहीं है।

उदाहरण के लिए तुम्हें अनुभव हो सकता है कि तुम मर रहे हो। और अनुभव इतना तीव्र और स्पष्ट प्रतीत होगा कि और दूसरी कोई सम्भावना ही नहीं दिखाई पड़ेगी। उसे समग्र-भाव से स्वीकार कर लेना।

विचार, भावदशाएं, अनुभव—ये सब बड़े तीव्र और सत्य प्रतीत होंगे, उन्हें स्वीकार कर लेना। अगर अनुभव हो कि मृत्यु आ रही है तो उसका स्वागत करना और श्वास पर ध्यान रखना।

अनुभूतियों के प्रति उदासीन रहना कठिन है, पर विचारों और भावदशाओं के प्रति तुम उदासीन रह सकते हो। यह सब घटित होगा। ऐसा लगेगा कि मृत्यु आ रही है—अब सिर्फ एक क्षण की बात है कि तुम मरोगे। यह इतना तीव्र होगा कि चारों ओर से यह तुम में प्रवेश करेगा। हर चीज इस घटना के लिए तत्पर और सहयोगी प्रतीत होगी और इससे निकलने का कोई रास्ता नहीं सूझेगा। इसलिए इसे स्वीकार कर लो, इसका स्वागत करो। और जिस क्षण तुम इसका स्वागत करते हो, तुम इसके प्रति उदासीन रहते हो। अगर इससे लड़ने और इसे रोकने की कोशिश करते हो, तो हर चीज विकृत हो जायेगी।

मृत्यु का अनुभव होगा। कभी-कभी लगेगा कि तुम अस्वस्थ हो गये हो। तुम वस्तुतः

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बीमार हुए नहीं हो, यह अस्वस्थता का भाव भी अवचेतन में दबा है जो कि अब स्वतन्त्र होकर निष्कासित हो रहा है। इसलिए बहुत तरह की बीमारियों का अनुभव होगा, जो एक क्षण पहले बिल्कुल अज्ञात थीं। इनके प्रति भी उदासीनता का भाव रखो और श्वास पर ध्यान बनाये रखो। किसी भी विचार, गतिविधि, भाव या घटना में श्वास पर ध्यान अवश्य रहना चाहिए।

प्रथम सप्ताह के बाद कुछ मानसिक अनुभूतियां होंगी। शरीर काफी विशाल लग सकता है या बिल्कुल छोटा।

कभी ऐसा भी प्रतीत हो सकता है कि शरीर है ही नहीं! इस शरीर-शून्यता के बोध से भयभीत न होना। कभी ऐसे क्षण आ सकते हैं कि तुम महसूस ही नहीं कर पाओ कि तुम्हारा शरीर कहां पर है! कभी-कभी शरीर तुम्हारे सामने दिखाई पड़ सकता है—बैठा हुआ या लेटा हुआ! पर इससे भयभीत मत होना। बिजली के झटके जैसा भी कभी अनुभव हो सकता है।

प्रत्येक बार जब कोई नया चक्र खुलता है, तो 'बिजली के झटके सदृश' अनुभव होगा। और पूरा शरीर आन्दोलित हो उठेगा। इसमें कभी बाधा नहीं डालना, बल्कि इन प्रतिक्रियाओं के साथ सहयोग करना। इसमें अवरोध पैदा करने का अर्थ होगा कि तुम स्वयं के विरोध में चले गये हो। कम्पन, झटका, बिजली का झटका, गर्मी, ठण्डक—कुछ भी चक्रों पर अनुभव हो, उनके साथ सहयोग करना; तुमने स्वयं इन्हें आमन्त्रित किया है, इसलिए रुकावट मत डालना। नहीं तो तुम्हारी ऊर्जा व्यर्थ के अन्तर संघर्ष में उलझ जायेगी।

दूसरे सप्ताह के बाद जो भी घटनाएं घट रही हैं, उन्हें उदासी-भाव से देखते हुए अगर तुम श्वास पर ध्यान देते रहे, सारी मानसिक अनुभूतियों को अगर स्वीकार करते हुए सहयोग किया, तो तीसरे सप्ताह में पूर्ण शून्यता का बोध होगा। मानो हर चीज मिट गयी हो, अनस्तित्व में समा गयी हो। सिर्फ शून्यता ही शेष रह जायेगी।

तीसरे सप्ताह के बाद तुम्हें लगेगा, 'इससे बाहर न जायें। और पहले सप्ताह के बाद लगेगा कि 'प्रयोग को छोड़कर चले जायें। प्रथम सप्ताह के बाद यह भाव इतना जोर पकड़ता है कि लगता है कि इस नासमझियों से कब निकल भागें। पर इस पर कभी ध्यान मत देना;इक्कीस दिनों के लिए कहीं नहीं जाना है।

एक बार निश्चयपूर्वक अपने मन से कह दो कि इक्कीस दिनों के बाद ही बाहर जाना सम्भव है, उसके पहले नहीं। और तीसरे सप्ताह के बाद ऐसा भाव उठेगा कि बाहर न जायें।

तो दो-चार दिनों तक इस प्रयोग को जारी रख सकते हो। तबीयत हो तो लम्बे अरसे के लिए रुक सकते हो। इक्कीस दिनों के बाद वाले ये दिन बड़े लाभप्रद होते हैं। अगर तुम आनन्द से भरे हो, और ऐसा लगता हो कि इसमें कोई व्यवधान न हो, सिर्फ शून्यता और

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

और आनंद में ही रहने की इच्छा हो, तो प्रयोग-अवधि को थोड़ा बढ़ा ले सकते हो—पर इक्कीस दिनों के पहले तो किसी हालत में भी इसे नहीं तोड़ना है।

कोई अनुभव जिसे तुम लिख लेना चाहते हो, उसे एकान्त से बाहर आने के बाद ही लिखना,उससे पूर्व नहीं। प्रयोग के बाद एक-दो दिन समय निकालकर बैठना और सारी चीजें, जो चाहते हो, लिखना। इक्कीस दिन के अन्दर तो कुछ भी नहीं लिखना है। कुछ याद करने की कोशिश मत करना। जो कुछ भी भीतर घटित हुआ है, वह स्मृति में पूरी स्पष्टता के साथ अंकित रहेगा; क्योंकि मन ने इसे स्मरण करने की भी कोशिश नहीं की है।

तुम किसी चीज को भूल सकते हो, अगर उसे याद करने की कोशिश किये हो, पर तुम वैसी चीजों को नहीं भूल सकते; जिन्हें याद करने के लिए कभी प्रयास नहीं किये हो। तब वह अपने समग्र रूप में तुम्हारी स्मृति में आयेगी। और अगर नहीं आती है, तो इसका अर्थ है कि वह किसी काम की नहीं होगी। इसलिए उसे छोड़ ही देना।

अभी व्यर्थ की चीजों की स्मृतियां तुममें भरी हैं। तुम उसे याद करने की कोशिश करते हो जो कि व्यर्थ है—पर तुम समझते नहीं हो कि वह व्यर्थ है।

मन स्वतः ही कार्य करता है; जो कुछ भी याद रखने योग्य है, वह सदा ही स्मरण रहता है। इसलिए दिन, तारीख आदि कुछ भी याद करने की कोशिश मत करना; उसकी कोई आवश्यकता नहीं है। जो भी अनुभूतियां घटित हुई हैं, वह तुम सहज ही स्मरण कर पाओगे; जो कुछ भी याद रखने योग्य है, वह प्रयोग से बाहर आने के बाद भी तुम्हारे साथ होगा। इसलिए जाओ और जितना जल्द हो सके इस प्रयोग में उतरो।

कभी-कभी लगता है कि श्वास रुक गयी है; ऐसा क्यों होता है?

कभी-कभी तुम श्वास को अनुभव नहीं कर पाओगे। ऐसा नहीं है कि श्वास चल ही नहीं रही है। पर तुम अनुभव इसलिए नहीं कर पाते हो, क्योंकि वह इतनी लयबद्ध हो जाती है कि तुम्हें लगता कि वह बिल्कुल ठहर गयी है। हम सिर्फ बीमारियों को ही अनुभव कर पाते हैं,स्वास्थ्य को नहीं। जब तुम्हारे सिर में दर्द होता है, तभी तुम्हें अपने सिर का पता चलता है। उसी तरह से हमारी श्वास इतनी बेसुरी और अस्वाभाविक है कि उसका हमें पता चलता है, वरना उसका अनुभव नहीं होता है। यह जान लेना चाहिए कि स्वाभाविक, शांत और लयबद्ध होने के बाद भी श्वास चलती रहती है; तब उसका सिर्फ पता भर नहीं चलता है। पर श्वास-प्रश्वास जारी रहती है।

तुम्हें श्वास पर ध्यान देना है। शुरू में इसका अनुभव होगा, पर धीरे-धीरे यह अनुभव कम होता चला जायेगा; श्वास बड़ी सूक्ष्म होती चली जायेगी। और इसके साथ-साथ स्थूल श्वास पर होश और जागरूकता भी कम होती चली जायेगी; क्योंकि अब तुम्हें सूक्ष्म प्राण पर ध्यान देना है। और तब जैसे ही लगे कि श्वास नहीं चल रही है, तो इस 'अ-श्वास' के प्रति ही होशपूर्ण रहना; इस समस्वरता के प्रति ही होशपूर्ण रहना। तब होश—और जागरूकता... और गहराई में प्रवेश करेगी।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसके लिए तुम्हें कोई प्रयास नहीं करना है—बस, तुम जागरूक रहो। और अगर ऐसा लगे कि श्वास का अनुभव नहीं हो रहा है, तो इस 'अ-श्वास' की स्थिति के प्रति भी जागे रहो। यह बड़े ही आनन्द का क्षण होगा। जागरूकता जितनी सूक्ष्म होती जायेगी, उतना ही यह प्राण-शरीर के तल तक पहुंचती है। तुम हरदम प्राण-शरीर में स्थित नहीं हो।

जब तुम अपनी श्वास पर ध्यान देते हो, तो सबसे पहले शारीरिक श्वास—याने स्थूल श्वास के प्रति ही जागे होते हो। यह जागरूकता स्थूल-श्वास के प्रति है। तुम अपने स्थूल शरीर और श्वसन-यन्त्र के प्रति जाग्रत हो, पर अब श्वास का यात्रा-पथ पीछे छूट रहा है। जब यह सूक्ष्म और संगीतपूर्ण हो जाता है, तब तुम प्राण-शरीर के प्रति जाग्रत होते हो; पर श्वास वहां क्रियाशील है। हां, यह उतना ज्यादा नहीं होगा—क्योंकि उतनी अधिक श्वास की अब जरूरत नहीं है।

अगर तुम क्रोध में हो तो ज्यादा ऑक्सीजन की जरूरत पड़ती है; क्रोध में नहीं हो तो उतनी अधिक ऑक्सीजन की आवश्यकता नहीं रहती है। अगर काम-वेग से पीड़ित हो तो ज्यादा ऑक्सीजन की जरूरत पड़ती है—और इसीलिए श्वास तीव्र हो जाती है—इसीलिए आवश्यकतानुसार श्वास की मात्रा घटती-बढ़ती रहती है। अगर तुम पूर्ण मौन हो, तो श्वास की जरा भी आवश्यकता नहीं है। इसलिए श्वास उतनी ही चलेगी जितने की आवश्यकता है—न्यून-से-न्यून; जितने से ज़िन्दा रह सकते हो। और जिन्दा रहने के लिए बहुत थोड़े की ही जरूरत है। इसलिए इस स्थिति को समझ लो।

तुम्हें एक स्थिति का पता था, जब श्वास का अनुभव होता था। अब एक दूसरी स्थिति के प्रति चैतन्य हो, जबकि श्वास के चलने का अनुभव नहीं हो रहा है। जो भी स्थिति आये, उसके प्रति जागरूक रहो। होश सदा ही मौजूद रहना चाहिए। अगर कुछ भी अनुभव नहीं हो रहा हो, तो इस 'गैर-अनुभव' की स्थिति के प्रति भी जागे रहो। कुछ भी अनुभव नहीं हो रहा है, पर इसका भी होश तुम्हें रहना चाहिए। तुम्हें सो नहीं जाना है, क्योंकि यही क्षण है जिसकी तुम अपेक्षा कर रहे थे; अगर सो जाते हो तो वह सप्ताह बेकार गया।

जो कुछ भी घटित हो उसके प्रति सचेत रहो; श्वास नहीं चल रही है, इसके प्रति भी होश कायम रखो। और पूर्ण शांति में श्वास का अस्तित्व प्रायः नहीं रहता है। बिल्कुल थोड़े की जरूरत है, और उतनी ही श्वास चलती है। मात्रा बहुत घट गयी है और लयबद्धता बढ़ गयी है, इसलिए श्वास का पता नहीं चलता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१२. स्वप्न में सचेतन प्रवेश की दो विधियां

भगवान श्री, इसे स्पष्ट करने की कृपा करें कि कौन-से ऐसे पहलू हैं जिससे कि स्व देखते समय भी होश कायम रखा जा सके?

यह उन सभी के लिए महत्त्वपूर्ण सवाल है, जिनकी ध्यान में अभिरुचि है; क्योंकि ध्या वस्तुतः स्वप्न-प्रक्रिया का अतिक्रमण किया जाना है। तुम सतत् स्वप्न देख रहे हो— सिर्फ रात्रि में, न सिर्फ निद्रा में—बल्कि तुम पूरे दिन स्वप्न में हो।

यह पहली बात ख्याल में ले लेनी चाहिए कि जब तुम जागे हुए हो, उस समय भी तु स्वप्न देखते हो। दिन में किसी समय आंखें बन्द कर लो, शरीर को शिथिल हो दो—और तुम पाओगे कि भीतर स्वप्न चल रहा है। यह कभी बन्द नहीं होता है, यह सि दैनिक कार्यों के चलते दबा रहता है। यह दिन में 'आकाश के तारों जैसा' है।

रात्रि में तारे दिखाई पड़ते हैं, दिन में दिखाई नहीं पड़ते। पर वे वहां हमेशा ही मौजू हैं। वे सिर्फ सूर्य की रोशनी की वजह से अदृश्य हो गये हैं। अगर तुम एक गहरे कुएं भीतर चले जाओ, तो दिन में भी वहां से तारों को देख सकते हो। तारों को देखने के लि अन्धेरे की एक खास मात्रा की जरूरत है; तारे आकाश में सदा ही मौजूद हैं। ऐसा नहीं कि वे रात्रि में ही होते हैं और दिन में नहीं होते हैं; वे हमेशा वहां होते हैं।

रात्रि में तुम उन्हें आसानी से देख सकते हो, पर दिन में वे नहीं दिखाई पड़ते; क्योंकि सूर्य की रोशनी बाधा डालती है। वही स्वप्न के सम्बन्ध में भी सत्य है। ऐसा नहीं है कि जब तुम सोये होते हो, सिर्फ तभी स्वप्न देखते हो। सोने की हालत में स्वप्न आसानी से अनुभव में आते हैं।

क्योंकि रोजमर्रा के बाह्य क्रिया-कलाप बन्द हो जाने के कारण भीतरी क्रिया-कला देखे और अनुभव किये जा सकते हैं। सबेरे जब तुम निद्रा से उठते हो, भीतर स्वप्न-प्रक्रिया जारी रहती है—तुम्हारे क्रियाशील हो जाने के बाद भी। ये रोजमर्रा क्रिया-कलाप सिर्फ स्वप्न को दबा देते हैं, पर स्वप्न जारी रहता है। अपनी आंखें बन्द कर लो, आरामकुर्सी प शरीर को शिथिल छोड़ दो—और अचानक तुम स्वप्न अनुभव कर सकते हो। तारे वा मौजूद हैं, वे कहीं नहीं गये थे। स्वप्न वहां हमेशा मौजूद है;उसकी गतिविधि सतत् है।

दूसरी बात—अगर स्वप्न हर क्षण चल रहा हो, तो तुम्हें वस्तुतः जागा हुआ नहीं क जा सकता। रात्रि में तुम ज्यादा सोये हुए हो और दिन में थोड़ा कम। अन्तर सापे है,क्योंकि स्वप्न अगर हर क्षण विद्यमान है; तो इस स्थिति को जाग्रत की संज्ञा नहीं दी ज सकती है। जाग्रत तो तुम तभी कहे जा सकते हो, जब भीतर कोई स्वप्न शेष नहीं रह गया हो।

हम बुद्ध को प्रज्ञावान, परम-जाग्रत कहते हैं। यह जागृति क्या है? यह जागृति स

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आन्तरिक स्वप्नों की गतिविधियों का ठहर जाना है—अब भीतर कोई स्वप्न नहीं रहा; भीतर गति करते हैं, पर वहां अब कोई स्वप्न नहीं है। यह ऐसा ही है, मानो आकाश में अब कोई तारे नहीं रहे, शुद्ध आकाश ही रह गया है। जब स्वप्न-जाल समाप्त हो जाते हैं, तो तुम शुद्ध आकाश बन जाते हो। इस शुद्धता, इस निर्दोषता, इस स्वप्न-शून्य चेतना को ही प्रज्ञा या समाधि कहते हैं।

सदियों से सारे संसार में अध्यात्म ने—पूर्व एवं पश्चिम दोनों ही ने घोषणा की है कि मनुष्य सोया हुआ है। जीसस यही कहते हैं, बुद्ध यही कहते हैं, उपनिषद् के ऋषि इसी की उद्घोषणा करते हैं कि मनुष्य सुषुप्तावस्था में है। इसलिए जब तुम रात्रि में सोये हुए हो, तो अपेक्षाकृत ज्यादा सोये हुए हो; दिन में अपेक्षाकृत कम सोये हुए हो। इस सदी में गुर्जियेफ ने इस तथ्य पर बहुत जोर डाला है कि मनुष्य सोया हुआ है। उसने कहा है कि मनुष्य एक प्रकार की निद्रा ही है। हर एक गहरी नींद में है।

ऐसा कहने का क्या कारण है? कारण यह है कि तुम नहीं जानते, तुम स्मरण नहीं कर सकते कि तुम कौन हो। क्या तुम्हें पता है कि तुम कौन हो?

रास्ते में कोई तुम्हें मिल जाये और उससे पूछो कि वह कौन है—और वह कोई जवाब न दे पाये, तो तुम उसके सम्बन्ध में क्या सोचोगे? तुम समझोगे कि या तो वह पागल है, नशे में है—या सोया हुआ है। अगर वह कौन है का उत्तर नहीं दे पाये, तो तुम उसके सम्बन्ध में क्या अनुमान करने जा रहा हो?

अध्यात्म के मार्ग पर प्रत्येक उसी हालत में है। तुम जवाब नहीं दे सकते कि तुम कौन हो। यह पहला अर्थ हुआ जब गुर्जियेफ या जीसस या अन्य कोई कहता है कि मनुष्य सोया हुआ है।

तुम अपने प्रति चेतन नहीं हो। तुम स्वयं को नहीं जानते। तुमने स्वयं का कभी साक्षात्कार नहीं किया है। बाह्य जगत् की बहुत सारी चीजों को तुम जानते हो, पर स्वयं के बारें में तुम्हें कुछ पता नहीं है।

यह आत्म-अज्ञान ही निद्रा है। और जब तक यह स्वप्न पूर्णरूप से समाप्त न हो जाये, तुम स्वयं अपने प्रति जाग्रत नहीं हो सकते। पर एकाएक स्वप्न अगर रुक भी जाये, तो तुम अपने को पहचानने में समर्थ नहीं हो पाओगे; तुम बेहोशी अनुभव करोगे—और घबराहट भी। तुम चेष्टा करोगे पुनः स्वप्न में जाने की, क्योंकि वह ज्ञात है; उससे तुम अच्छी तरह परिचित हो, उससे तुम्हारा तालमेल बैठा हुआ है।

यह कैसे घटित हो? इसके लिए एक मार्ग है। विशेषकर झेन-परम्परा में जो 'सडन-पाथ' के नाम से जाना जाता है। इन एक सौ बारह विधियों में बहुत-सी ऐसी विधियां हैं जो तुम्हें अचानक जाग्रत कर दें। लेकिन वह बहुत ज्यादा हो जायेगा, और तुम इसे झेलने में समर्थ न हो पाओगे। तुम टूट जाओगे, और मर भी सकते हो; क्योंकि स्वप्न के साथ तुम इतने लम्बे अरसे तक जीये हो कि स्वप्न-शून्य स्थिति में तुम कौन हो, इसका

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तुम्हें स्मरण ही नहीं रह गया है। तुम्हें स्मरण ही नहीं रह गया है।

अगर यह पूरा विश्व खो जाये और तुम अकेले छूट जाओ, तो यह इतना बड़ा आघात होगा कि तुम मर जाओगे। यही घटित होगा अगर तुम्हारी चेतना से सारे स्वप्न तिरोहित हो जायें। तुम्हारा संसार विदा हो जायेगा, क्योंकि स्वप्न ही तुम्हारा संसार था। हम वस्तुतः संसार में नहीं रहते हैं। हमारे लिए संसार वस्तुतः बाह्य चीजों का जोड़ नहीं है, बल्कि हमारे स्वप्नों का जोड़ है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति अपने निजी स्वप्न-जगत् में जीता है।

ध्यान रहे, यह एक ही संसार नहीं है जिसकी हम चर्चा करते रहते हैं। भौगोलिक अर्थ में तो ऐसा है, पर मनोवैज्ञानिक अर्थ में जितने मन हैं उतने जगत् हैं। हर एक मन का अपना एक जगत् है। और अगर तुम्हारा स्वप्न बिल्कुल तिरोहित हो जाये, तो तुम्हारा जगत् भी तिरोहित हो जाता है। बिना स्वप्न के तुम्हारे लिए जीना मुश्किल है। यही कारण है कि 'अकस्मात-विधि' सामान्यतः प्रयोग में नहीं लायी जाती है, सिर्फ 'क्रमिक-विधि' ही इस्तेमाल की जाती है।

इसे ध्यान में रखना चाहिए कि 'क्रमिक-विधि' का उपयोग इसलिए नहीं किया जाता है कि इसकी कोई अनिवार्यता है। तुम इसी क्षण समाधि में छलांग लगा सकते हो, कोई अवरोध नहीं है। कोई अवरोध नहीं रहा है, तुम सदा से ही वही प्रज्ञा हो। पर उसका अचानक साक्षात्कार खतरनाक और भयानक सिद्ध हो सकता है। तुम उसे झेलने में अपने को सक्षम नहीं पाओगे; वह तुम्हारे लिए बहुत ज्यादा हो जायेगी।

क्रमिक विधि का प्रयोग होता है—इसलिए नहीं कि ज्ञान के लिए समय की आवश्यकता है;ज्ञान के लिए समय की कोई आवश्यकता नहीं है। फिर क्रमिक विधि कौन-सी भूमिका अदा करती है?

वह वस्तुतः तुम्हें सीधा ज्ञान प्राप्ति के लिए मदद नहीं करती, वह तो सिर्फ तुम सत्य को सहन कर सको, इसके लिए तुम्हें तैयार भर करती है। वह तुम्हें इस योग्य और इतना शक्तिशाली बनाती है, कि जब घटना घटे तो तुम उसे झेल पाओ। इस स्वप्न का, इस गहरी निद्रा का कैसे अतिक्रमण किया जाये, इसके लिए दो आसान विधियों की चर्चा आज मैं करूंगा।

पहली विधि

पहली विधि है—तुम ऐसा व्यवहार करना शुरू करो मानो यह पूरा जगत एक स्वप्न-मात्र है—जो कुछ भी तुम कर रहे हो, स्मरण रखो कि यह एक स्वप्न है। जब तुम भोजन कर रहे हो, या टहल रहे हो, तो उस समय स्मरण रखो कि यह एक स्वप्न है। जब तक तुम जागे हुए हो, अपने मन को हर क्षण इस स्मरण से भरे रहने दो कि हर चीज स्वप्न है।

इसे स्मरण रखना; स्वप्न को बदलने के लिए कुछ मत करना, सिर्फ इसे सतत् स्मरण रखना। तीन सप्ताह निरन्तर यह स्मरण रखने की कोशिश करो कि तुम जो कुछ भी क

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रहे हो वह स्वप्न है। शुरू में यह कठिन मालूम पड़ेगा; मन के पुराने ढांचे में तुम बार-बार गिर पड़ोगे और सोचने लगोगे कि यह सत्य है। तुम्हें अपने को सतत् जागरूक रखना पड़ेगा ताकि ध्यान बना रहे कि यह स्वप्न है।

अगर तीन सप्ताह तक लगातार इस धारणा को बरकरार रखते हो, तो चौथे या पांचवें सप्ताह में, किसी वक्त-स्वप्न देखते वक्त-अचानक तुम्हें स्मरण आयेगा कि यह स्वप्न है।

स्वप्न में सचेतन रूप से प्रवेश की यह एक विधि है। और अगर रात्रि में स्वप्न देखते वक्त तुम यह स्मरण रख सकते हो कि यह स्वप्न है, तो दिन में स्मरण रखने में...कि यह भी एक स्वप्न है, किसी श्रमकि आवश्यकता नहीं पड़ेगी: तब तुम इसे जानोगे।

प्रारम्भ में, जब तुम इसका अभ्यास करोगे, तो इस पर विश्वास करके चलना पड़ेगा; इस विश्वास के साथ प्रारम्भ करना पड़ेगा कि 'यह स्वप्न है'। लेकिन, रात स्वप्न में जब तुम स्मरण कर सकोगे कि 'यह स्वप्न है', तो फिर तुम्हारे लिए यह एक तथ्य हो जायेगा। तब सबेरे जागते वक्त तुम्हें ऐसा नहीं लगेगा कि तुम नींद से जाग रहे हो, बल्कि ऐसा लगेगा कि तुम एक स्वप्न से जाग रहे हो और दूसरे में प्रवेश कर रहे हो। तब यह एक तथ्य हो जायेगा और चौबीस घन्टे इस स्वप्न का बोध बना रहेगा; तब तुम अपने को स्व-केन्द्र पर स्थित पाओगे। तुम अगर स्वप्न देख रहे हो, और उन्हें स्वप्न ही समझ रहे हो, तो स्वप्न-द्रष्टा भी तुम्हारे अनुभव में आने लगेगा।

दूसरी विधि

गुर्जियेफ ने इस दूसरी विधि का उपयोग किया था। यह दूसरी विधि इस्लाम की सूफी-परम्परा से आती है। उन लोगों ने इस पर बड़ी गहराई तक काम किया है।

इस दूसरी विधि में हर क्षण यह स्मरण रखना है कि 'मैं हूं'। जो कुछ भी तुम कर रहे हो, उसमें इस स्मरण को जोड़ लो कि 'मैं हूं'। तुम पानी पी रहे हो या भोजन कर रहे हो—स्मरण रखो—'मैं हूं'। खाते जाओ और स्मरण भी कायम रखो कि 'मैं हूं'। इसे भूलना मत।

यह थोड़ा कठिन है। कारण कि पहले ही तुम समझते हो कि तुम्हें पता है कि तुम कौन हो। तो फिर इसे स्मरण किये जाने की क्या जरूरत है? तुम कभी स्मरण नहीं करते; पर यह एक बहुत शक्तिशाली प्रयोग है। जब टहल रहे हो, तो स्मरण रखो 'मैं हूं'।

टहलना जारी रखो, पर निरन्तर इस आत्म-स्मरण—'मैं हूं-मैं हूं' पर भी ख्याल रखो। इसे भूलना मत।

तुम मुझे सुन रहे हो... अभी इसे यहीं करके देखो। ... तुम मुझे सुन रहे हो, तो इसे सुनते जाना, साथ ही 'मैं हूं-मैं हूं'...इस स्मरण पर ध्यान रखना। इस 'मैं हूं' को अपनी चेतना का, होश का अंग बन जाने दो।

यह बड़ा ही कठिन है। लगातार एक मिनट तक भी तुम यह स्मरण कायम नहीं रख सकते हो। कभी कोशिश करो—-अपनी घड़ी को अपने सामने रख लो और सेकेन्ड वाली

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सुई को देखो। हर सेकेन्ड को होशपूर्वक देखते जाओ—एक सेकेन्ड, दो सेकेन्ड, तीन सेकेन्ड... इस तरह देखते जाओ।

इसमें दो चीजें करो—सेकेन्ड वाली सुई की गति को भी देखो और लगातार 'मैं हूं-मैं हूं'—इसे भी स्मरण करते रहो; हर सेकेन्ड के साथ 'मैं हूं' का भी स्मरण करते जाओ। पांच-छह सेकेन्ड के अन्दर ही तुम अनुभव करोगे कि तुम भूल गये हो। अचानक तुम्हें याद आयेगा कि बहुत सेकेन्ड गुजर गये। और 'मैं हूं' का मैं स्मरण नहीं रख सका।

लगातार एक मिनट तक भी स्मरण रख पाना एक चमत्कार है। और अगर एक मिनट तक स्मरण रख सकते हो तो यह विधि तुम्हारे काम की है; तब इसे करो। इस प्रयोग के द्वारा तुम स्वप्न के पार जाने में समर्थ हो पाओगे—और यह जानने में भी कि स्वप्न स्वप्न है।

यह विधि कैसे काम करती है? अगर तुम पूरे दिन 'मैं हूं' का स्मरण करते हो, तो यह तुम्हारी नींद में प्रवेश कर जायेगा। और जब तुम स्वप्न देख रहे होओगे, तो लगातार यह भी स्मरण बना रहेगा कि 'मैं हूं'। अगर स्वप्न में तुम स्मरण रख पाते हो कि 'मैं हूं', तो अचानक स्वप्न स्वप्न हो जाते हैं, सत्य नहीं प्रतीत होते। तब स्वप्न तुम्हें धोखा नहीं दे सकता, तब स्वप्न सत्य-जैसा प्रतीत नहीं हो सकता है—यही मेकेनिज़म है।

स्वप्न सत्य जैसा भासता है, क्योंकि आत्म-स्मरण को तुम चूक रहे हो तुम 'मैं हूं' के स्मरण को चूक रहे हो। अगर स्वयं का स्मरण नहीं है तो स्वप्न सत्य प्रतीत होने लगते हैं; अगर स्वयं का स्मरण है, तो तथाकथित सत्य स्वप्न हो जाते हैं। यही स्वप्न और सत्य में अन्तर है। ध्यान करने वाले व्यक्ति के लिए या ध्यान के विज्ञान के लिए, इन दोनों में एकमात्र यही अन्तर है—अगर तुम हो, तो सम्पूर्ण जगत् स्वप्नवत है; अगर तुम स्वयं नहीं हो, तो स्वप्न सत्य हो जाते हैं। इसलिए या तो तुम हो सकते हो, या स्वप्न हो सकता है; दोनो एक साथ नहीं हो सकते है।

इसलिए, पहली बात, 'मैं हूं' के स्मरण को निरन्तर जारी रखो। सिर्फ 'मैं हूं'—इतना ही। 'राम' या 'श्याम' मंत कहो। किसी नाम का उपयोग मत करो, क्योंकि तुम वह नहीं हो। सिर्फ उपयोग करो—'मैं हूं'। हर क्रिया-कलाप में इस प्रयोग को जोड़ो और इसे अनुभव करो।

भीतर जितने तुम वास्तविक हो जाते हो, तुम्हारे चारों ओर बाहर का जगत् उतना ही मिथ्या हो जाता है; 'मैं' सत्य हो जाता है और 'जगत' मिथ्या हो जाता है। या तो 'जगत्' सत्य है, या 'मैं' सत्य है; दोनों एक साथ सत्य नहीं हो सकते। अभी तुम अनुभव करते हो कि तुम एक स्वप्न हो, इसलिए 'जगत्' सत्य है। जरा जोर को बदलो; 'स्वयं' सत्य बनो और 'जगत्' असत्य हो जायेगा।

गुर्जियेफ ने इस विधि पर निरन्तर काम किया। उसके प्रमुख शिष्य पी.डी. ऑस्पेन्स्की ने वर्णन किया है कि जब गुर्जियेफ उस पर इस विधि का उपयोग कर रहा था—और उसने तीन महीने तक लगातार 'मैं हूं-मैं हूं' के स्मरण का प्रयोग किया; तो तीन महीने के बाद

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सब कुछ ठहर गया; विचार, स्वप्न—सब बन्द हो गये; सिर्फ एक ही ध्वनि रह गयी—शाश्वत, संगीतनुमा—'मैं हूं-मैं हूं'।

लेकिन तब यह कोई प्रयास की बात नहीं रही, यह एक सहज क्रिया थी। तब गुर्जियेफ ने ऑस्पेन्स्की को कमरे के बाहर बुलाया—तीन महीने तक वह कमरे में बन्द रखा गया था। और उस बीच बाहर जाने का उसे आदेश नहीं था—और गुर्जियेफ उसे बाहर रास्ते पर ले गया। ऑस्पेन्स्की ने अपनी डायरी में लिखा है—

'तब पहली बार मैं समझ पाया कि जीसस के कथन... कि 'मनुष्य एक निद्रा है'... का क्या अर्थ है। मुझे लगा कि पूरा नगर ही सोया हुआ है! लोग सड़कों पर चल रहे है निद्रा की हालत में! दुकानदार नींद में ही चीजें बेच रहा है! ग्राहक नींद में ही खरीद रहा है! पूरा नगर सोया हुआ था। मैंने गुर्जियेफ की ओर देखा—सिर्फ वही भर जागा था; बाकी पूरा शहर सोया था।'

वे क्रोध में थे, झगड़ रहे थे, प्रेम कर रहे थे, खरीद फरोख्त—हर चीज नींद में ही कर रहे थे।

ऑस्पेन्स्की कहता है—'अब मैं उनका चेहरा देख सका, उनकी आखें देख सका—और पाया की वे निद्रा में हैं; वे वहीं मौजूद नहीं हैं। अन्दर का केन्द्र ही खोया हुआ है; वे वहां मौजूद नहीं हैं।'

ऑस्पेन्स्की ने गुर्जियेफ को कहा कि 'शहर के लोगों को क्या हो गया है? प्रत्येक सोया हुआ प्रतीत होता है!'

गुर्जियेफ ने कहा— शहर को कुछ नहीं हुआ है, कुछ तुम में ही घटित हुआ है; तुम्हारी बेहोशी कुछ टूटी है, शहर जैसा-का-तैसा है। यह वही जगह है जहां तीन माह पूर्व तुम घूमा करते थे, पर तुम यह देख नहीं सकते थे कि लोग सोये हुए हैं; क्योंकि तुम खुद ही सोये हुए थे। अब तुम देख सकते हो, क्योंकि तुममें थोड़ी जागरुकता का आविर्भाव हुआ है। 'मैं हूं' के स्मरण का प्रयोग लगातार तीन महीने तक करने से बहुत थोड़ी-सी मात्रा में तुम होशपूर्ण हुए हो। तुम्हारी चेतना का कुछ हिस्सा स्वप्न-प्रक्रिया का अतिक्रमण कर गया है। यही कारण है कि तुम अब देख सकते हो कि हर एक निद्रा में है; हर एक चलता-फिरता है बेहोशी में—मानो एक सम्मोहन में हो।'

पर यह किसी को भी घटित होगा। अगर तुम स्वयं का स्मरण कर सके, तब तुम जानोगे कि किसी को भी स्वयं का स्मरण नहीं है, और इसी हालत में सारे लोग चल-फिर रहे हैं—पूरा संसार ही सोया हुआ है।

पर जब तक तुम जागे हुए हो, तभी से शुरू करो, हर क्षण 'मैं हूं' का स्मरण रखो।

मेरा मतलब यह नहीं है कि 'मैं हूं' शब्द को रटते रहना है; बल्कि वैसा अनुभव करना है।

स्नान कर रहे हो तो अनुभव करो 'मैं हूं'। ठण्डे जल का स्पर्श होने दो, ठण्डे जल की

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शीतलता का अनुभव होने दो—और साथ ही 'मैं हूं' का स्मरण भी।

ध्यान रहे, मैं यह नहीं कह रहा हूं कि 'मैं हूं' शब्द की पुनरावृत्ति करते जाना है। तु इसे दोहरा सकते हो, पर इससे तुममें कोई होश का आविर्भाव नहीं होगा। पुनराव तुम्हारी निद्रा को और गहरी बना सकती है। कुछ लोग हैं जो बहुत शब्दों को दुहरा रहे वे 'राम-राम' का जाप करते रहते हैं। इस तरह बिना होश के, बिना जागरूकता 'राम-राम' दोहराये चले जाने से यह नींद लाने वाली दवाओं जैसा काम करने लगता है।

'मैं हूं' का स्मरण कोई शाब्दिक मन्त्र नहीं है; उसे बोलकर दोहराते नहीं रहना है। उ अनुभव करो और अपने होने के प्रति संवेदनशील रहो। जब खा रहे हो तो सिर्फ खान मत, स्वयं को खाते हुए अनुभव भी करो। यह अनुभव, यह संवेदनशीलता तुम्हारे मन गहरी-से-गहरी पर्तों में समा जानी चाहिए। तब, एक दिन अचानक तुम अपने को पह बार अपने केन्द्र पर जागे हुए पाओगे।

और अब सारा जगत् स्वप्न हो जाता है। और तब तुम जान सकते हो कि तुम्हारे स्व स्वप्न हैं। और इसे जानते ही स्वप्न तत्काल बन्द हो जाते हैं। वे तभी तक जारी रह सक हैं, जब तक वे सत्य प्रतीत होते हों। स्वप्न तत्काल बन्द हो जाते है, जब वे असत्य दिख पड़ने लगते है। और एक बार स्वप्न के रुकने पर तुम बिल्कुल दूसरे आदमी हो जाते पुराना आदमी मर चुका; सोया हुआ आदमी मर चुका; पहली बार तुम होश से भरते हो तब पहली बार इस सोये हुए जगत् में तुम जागे हुए होते हो। तुम बुद्ध हो ज हो—परम-जाग्रत।

इस जागरण के बाद कोई दुख नहीं है। इस जागरण के बाद कोई मृत्यु नहीं है। इ जागरण के बाद अब कोई भय नहीं। तुम पहली बार हर चीज से मुक्त होते हो—प स्वतन्त्रता को उपलब्ध होते हो। घृणा, क्रोध, लालच—सभी गिर जाते हैं, तुम प्रेम जाते हो। प्यारे नहीं, तम बस प्रेम ही बन जाते हो।

१३. आत्मोपलब्धि की पांच तान्त्रिक विधियां

'विज्ञान भैरव तन्त्र'—तन्त्र-विद्या का अति प्राचीन व दुर्लभ ग्रन्थ है। भगवान श्री रजनीश के शब्दों में—'इस ग्रन्थ से अद्‌भुत ग्रन्थ इस पृथ्वी पर दूसरा नहीं हैं।'

'विज्ञान भैरव तन्त्र' में भगवान शिव ने अपनी प्रिया पार्वती को आत्मोपलब्धि की ए सौ बारह विधियां बतायी हैं।

उन पर ही १९७२-७३ में भगवान श्री ने अस्सी प्रवचन देकर दूसरी बार इस परम वि का अनावरण किया है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उन अस्सी प्रवचनों में से चुनकर, एक अमृत-प्रवचन इस पुस्तक में दिया जा रहा है।

विज्ञान भैरव के पांच सूत्र

पहला

भृकुटियों के बीच अवधान को स्थिर कर विचार को मन के सामने करो। फिर सहस्त्रार तक रूप को श्वास-तत्व से, प्राण से भरने दो। वहां वह प्रकाश की तरह बरसेगा।

दुसरा

सांसारिक कामों में लगे हुए, अवधान को दो श्वासों के बीच टिकाओ। इस अभ्यास से थोड़े दिनों में ही नया जन्म होगा।

तीसरा

ललाट के मध्य में सूक्ष्म श्वास को, प्राण को टिकाओ। जब वह सोने के क्षण में हृदय तक पहुंच जायेगा, तब स्वप्न और स्वयं मृत्यु पर अधिकार हो जायेगा।

चौथा

आत्यंतिक भक्तिपूर्वक श्वास के दो सन्धि-स्थलों पर केन्द्रित होकर ज्ञाता को जान लो।

पांचवा

मृतवत लेटे रहो। क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमें ठहरे रहो। या पुतलियों को घुमाए बिना एकदम घूरते रहो। या कुछ चूसो और चूसना बन जाओ।

पहली विधि—शिवनेत्र खोलने की।

'भृकुटियों के बीच अवधान को स्थिर कर विचार को मन के सामने करो। फिर सहस्त्रार तक रूप को श्वास तत्व से प्राण से भरने दो। वहां वह प्रकाश की तरह बरसेगा।'

यह विधि बहुत गहरी विधियों में से एक है; इसे समझने की कोशिश करो।

'भृकुटियों के बीच अवधान..... ।

आधुनिक शरीर-शास्त्र कहता है, वैज्ञानिक शोध कहती है कि दो भृकुटियों के बीच जो ग्रन्थि है, वह शरीर का सबसे रहस्यपूर्ण भाग है; जिसका नाम पाइनिजल ग्रन्थि है। यही तिब्बतियों को 'तीसरी आंख' है और यही 'शिवनेत्र' है—तन्त्र के शिव का 'त्रिनेत्र'।

दो आंखों के बीच एक तीसरी आंख भी है, लेकिन वह सक्रिय नहीं है। यह है, और यह किसी भी समय सक्रिय हो सकती है। निसर्गतः यह सक्रिय नहीं है। इसको सक्रिय करने के लिए इसकें सम्बन्ध में तुमको कुछ करना पड़ेगा। यह अन्धी नहीं है, सिर्फ बन्द है।

यह विधि—तीसरी आंख खोलने की विधि है।

भृकुटियों के बीच अवधान..... ।

आंखें बन्द कर लो और तब दोनों आंखों को भृकुटियों के बीच स्थिर करो। आंखों को बन्द रखते हुए ठीक बीच में दृष्टि को स्थिर करो—मानो कि दोनों आंखों से तुम देख रहे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हो—और समग्र अवधान को वहीं लगा दो।

यह विधि एकाग्र होने की सबसे सरल विधियों में है। शरीर के किसी दूसरे भाग में इतनी आसानी से तुम अवधान को नहीं उपलब्ध हो सकते। यह ग्रन्थि अवधान को अपने में समाहित करने में कुशल है। यदि तुम इस पर अवधान दोगे, तो आपकी दोनों आंखें तीसरी आंख से सम्मोहित हो जायेंगी। वे थिर हो जायेंगी; वे वहां से हिल न सकेंगी। यदि तुम शरीर के किसी दूसरे हिस्से पर अवधान दो तो वहां कठिनाई होगी। तीसरी आंख अवधान को पकड़ लेती है, अवधान को मजबूर सा कर देती है। अवधान के लिए चुम्बक का काम करती है।

इसलिए दुनिया भर की सभी विधियों में इसका समावेश किया गया है। अवधान को प्रशिक्षित करने में यह सरलतम है; क्योंकि इसमें तुम ही चेष्टा नहीं करते, यह ग्रन्थि भी तुम्हारी मदद करती है। यह चुम्बकीय है; तुम्हारे अवधान को यह बलपूर्वक खींच लेती है। यह उसे समाहित करती है। तन्त्र के पुराने ग्रन्थों में कहा गया है कि अवधान तीसरी आंख का भोजन है। यह भूखी है; जन्मों-जन्मों से भूखी रही है। जब तुम इसे अवधान देते हो, यह जीवित हो उठती है। जीवित हो उठती है, क्योंकि उसे भोजन मिल गया। और जब तुम जान लोगे कि अवधान इसका भोजन है—जान लोगे कि तुम्हारे अवधान को यह चुम्बक की तरह खींच लेती है—तब अवधान कठिन नहीं रह जायेगा; सिर्फ सही बिन्दु को जानना है।

इसलिए आंखें बन्द कर लो और दोनों आंखों की बीच में घूमने दो—और उस बिन्दु को अनुभव करो। जब तुम उस बिन्दु के करीब होगे, अचानक तुम्हारी आंखें थिर हो जायेंगी। और जब उन्हें हिलाना कठिन हो जाये, तब जानो कि सही बिन्दु मिल गया।

'भृकुटियों के बीच अवधान को स्थिर कर विचार को मन के सामने करो।'

अगर यह अवधान प्राप्त हो जाये तो पहली बार एक अद्‌भुत बात तुम्हारे अनुभव में आयेगी—पहली बार तुम देखोगे कि तुम्हारे विचार तुम्हारे सामने चल रहे हैं; तुम साक्षी हो जाओगे। जैसे सिनेमा के परदे पर दृश्य देखते हो, वैसे तुम देखोगे—विचार आ रहे हैं और तुम साक्षी हो। एक बार तुम्हारा अवधान त्रिनेत्र-केन्द्र पर स्थिर हो जाये, तुम तुरन्त विचारों के साक्षी हो जाओगे।

आमतौर से तुम साक्षी नहीं होते, तुम विचारों के साथ तादात्म्य कर लेते हो। यदि क्रोध है तो तुम क्रोध हो जाते हो। यदि एक विचार चलता है तो उसके साक्षी होने की बजाए तुम विचार के साथ एक हो जाते हो, उससे तादात्म्य कर साथ-साथ चलने लगते हो। तुम विचार ही वन जाते हो; विचार का रूप ले लेते हो। जब कामवासना होती है तब तुम कामवासना बन जाते हो—जब क्रोध उठता है, तब क्रोध बन जाते हो; और जब लोभ आता है, तब लोभ ही बन जाते हो। कोई भी विचार तुम्हारे साथ एकात्म हो जाता है और उसके और तुम्हारे बीच अवकाश नहीं रहता।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जब तुम अपनी खिड़की से आकाश को या राह चलते लोगों को देखते हो, तब तुम उनसे तादात्म्य नहीं करते; तब अलग होते हो, मात्र दर्शक रहते हो—बिल्कुल अलग। वैसे ही,अब जब क्रोध आता है तब तुम उसे विषय की तरह देखते हो; अब तुम वह नहीं सोचते कि मुझे क्रोध हुआ, तुम यही अनुभव करते हो कि तुम क्रोध से घिरे हो, क्रोध की एक वदली तुम्हारे चारों ओर घिर गयी है। और जब तुम खुद क्रोध नहीं रहे, तो क्रोध नपुंसक हो जाता है; तब वह तुमको नहीं प्रभावित कर सकता; अब तुम अस्पर्शित रह जाते हो। क्रोध आता है और जाता है, और तुम अपने में केन्द्रित रहते हो।

लेकिन तीसरी आंख पर स्थिर होते ही तुम एकाएक साक्षी हो जाते हो। तीसरी आंख के जरिए तुम साक्षी बनते हो। इस शिवनेत्र के द्वारा तुम विचारों को बैठे देख सकते हो—जैसे आसमान पर तिरते बादलों को, या राह चलते लोगों को देखते हो। यह पांचवीं विधि साक्षित्व को प्राप्त करने की विधि है।

'भृकुटियों के बीच अवधान को स्थिर कर विचार को मन के सामने करो।'... अब अपने विचारों को देखो, विचारों का साक्षात्कार करो।

'फिर सहस्रार तक रूप को श्वास-तत्व से, प्राण से भरने दें। वहां वह प्रकाश की तरह बरसेगा।'

जब अवधान भृकुटियों के बीच शिवनेत्र के केन्द्र पर स्थिर होता है, तब दो चीजें घटित होती हैं। एक कि तुम एकाएक साक्षी बन जाते हो। और यही चीज दो ढंगों से हो सकती है—एक, तुम साक्षी हो जाओ तो तुम तीसरी आंख पर स्थिर हो जाओगे; साक्षी हो, जो भी हो रहा है उसके साक्षी हो।

तुम बीमार हो, शरीर में पीड़ा है, तुमको दुख और सन्ताप है—जो भी हो, तुम उसके साक्षी रहो; जो भी हो उससे तादात्म्य न करो, बस साक्षी रहो; दर्शक भर। और यदि साक्षित्व सम्भव हो जाये तो तुम तीसरे नेत्र पर स्थिर हो जाओगे। दूसरा, ठीक इससे उलटा भी हो सकता है—यदि तुम तीसरी आंख पर स्थिर हो जाओ तो तुम साक्षी हो जाओगे। ये दोनों एक ही बात हैं।

इसलिए, पहली बात—तीसरी आंख पर केन्द्रित होते ही साक्षी आत्मा का उदय होगा; अब तुम अपने विचारों का सामना कर सकते हो। और दूसरी बात—और अब तुम श्वास-प्रश्वास के सूक्ष्म व कोमल तरंगों को भी अनुभव कर सकते हो; अब तुम श्वसन के रूप को ही नहीं,उसके तत्व को, सार को, प्राण को भी समझ सकते हो।

इसका प्रभाव अनुभव किया जा सकता है। जब तुम किसी प्राणवान् व्यक्ति के पास होते हो, तुम अपने भीतर भी किसी शक्ति को उगते देखते हो। और जब किसी बीमार के पास होते हो, तुमको लगता है कि तुम चूसे जा रहे हो; तुम्हारे भीतर से कुछ निकाला जा रहा है। जब तुम अस्पताल जाते हो, तब थके-थके क्यों अनुभव करते हो? वहां चारों ओर से तुम चूसे जाते हो। अस्पताल का पूरा माहौल बीमार होता है और वहां सब किसी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

को अधिक प्राण की, अधिक जीवनी शक्ति की जरूरत है। इसलिए वहां जाकर अचानक तुम्हारा प्राण तुमसे बहने लगता है।

जब तुम भीड़ में होते हो, तुम घुटन क्यों महसूस करते हो? इसलिए कि वहां तुम्हारा प्राण चूसा जाने लगता है। और जब तुम प्रातः काल अकेले आकाश के बीच या किसी वृक्ष के नीचे होते हो, तब फिर अचानक तुम अपने में किसी शक्ति का, प्राण का उदय अनुभव करते हो। प्रत्येक को एक खास मात्रा में अवकाश की जरूरत है। और जब वह अवकाश नहीं मिलता है, तुमको घुटन महसूस होती है।

पहले यह समझने की कोशिश करो कि 'रूप' और 'श्वास तत्व' का क्या अर्थ है। जब तुम सांस लेते हो, तब सिर्फ वायु की ही सांस नहीं लेते। वैज्ञानिक तो यही कहते हैं कि तुम वायु की ही सांस लेते हो—जिसनें ऑक्सीजन, हाइड्रोजन, तथा अन्य तत्व रहते हैं। वे कहते हैं कि तुम वायु की सांस लेते हो। लेकिन तन्त्र कहता है कि हवा तो मात्र वाहन है, असली चीज नहीं। दरअसल तुम प्राण की सांस लेते हो। हवा तो माध्यम भर है, प्राण उसका तत्व है, सार है। तुम न सिर्फ हवा की, बल्कि प्राण की सांस लेते हो।

तीसरी आंख पर केन्द्रित होकर तुम श्वास के सार-तत्व को—श्वास नहीं, प्राण को देख सकते हो। और अगर तुम प्राण देख सको तो तुम उस बिन्दु पर पहुंच गये जहां से छलांग लग सकती है, क्रांति घटित हो सकती है।

सूत्र कहता है—'सहस्रार तक रूप को प्राण से भर जाने दो...'। और जब तुमको प्राण का एहसास हो, तब तुम कल्पना करो कि तुम्हारा सिर प्राण से भर गया है। सिर्फ कल्पना करो; किसी प्रयत्न की जरूरत नहीं है।

यह सूत्र कहता है कि जब तुम भृकुटियों के बीच स्थिर हो और प्राण को अनुभव करते हो, तब रूप को भरने दो। अब कल्पना करो कि प्राण तुम्हारे पूरे मस्तिष्क को भर रहा है—विशेषकर सहस्रार को जो सर्वोच्च मनस-केन्द्र है। उस क्षण तुम कल्पना करो और वह भर जायेगा। कल्पना करो कि वह प्राण तुम्हारे सहस्रार से प्रकाश की तरह बरसे, और वह बरसने लगेगा। और उस प्रकाश की वर्षा में तुम ताजे हो जाओगे; तुम्हारा पुनर्जन्म हो जायेगा; तुम बिल्कुल नये हो जाओगे। आंतरिक जन्म का यही अर्थ है।

यहां दो बातें हैं। एक, तीसरी आंख पर केन्द्रित होकर तुम्हारी कल्पना पुंसत्व को, शुद्धि को उपलब्ध हो जाती है। यही कारण है कि शुद्धता पर, पवित्रता पर इतना बल दिया गया है। इस साधना में उतरने के पहले शुद्ध बनो। तन्त्र के लिए शुद्धि कोई नैतिक धारणा नहीं है। शुद्धि इसलिए अर्थपूर्ण है कि यदि तुम तीसरी आंख पर स्थिर हुए और तुम्हारा मन अशुद्ध रहा, तो तुम्हारी कल्पना खतरनाक सिद्ध हो सकती है—तुम्हारे लिए भी और दूसरों के लिए भी। यदि तुम किसी की हत्या करने की सोच रहे हो, उसका महज विचार भी मन में है, तो सिर्फ कल्पना से उस आदमी की मृत्यु घटित हो जायेगी। यही कारण है कि शुद्धता पर इतना जोर दिया जाता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कई बार तुमने हत्या करने की सोची है; लेकिन भाग्य से वहां कल्पना ने काम नहीं किया। यदि वह काम करे, यदि वह तुरन्त वास्तविक हो जाये तो वह दूसरों के लिए ही नहीं; तुम्हारे लिए भी खतरनाक सिद्ध होगी। क्योंकि कितनी ही बार तुमने आत्महत्या करने की भी सोची है। अगर मन तीसरी आंख पर केन्द्रित है तो आत्महत्या का विचार भी आत्महत्या बन जायेगा। तुमको विचार बदलने का भी समय नहीं मिलेगा। वह तुरन्त घटित हो जायेगी। सो जब तुम तीसरे नेत्र पर केन्द्रित हो जाओ, तब कल्पना करो कि सहस्रार से प्राण बरस रहा है; जैसे कि तुम किसी वृक्ष के नीचे बैठे हो और फूल बरस रहे हैं, या तुम आकाश के नीचे हो और कोई बदली बरसने लगी, या सुबह में तुम बैठे हो और सूरज उग रहा है और उसकी किरणें बरसने लगी हैं। कल्पना करो और तुरन्त तुम्हारे सहस्रार से प्रकाश की वर्षा होने लगेगी। यह वर्षा मनुष्य को पुनर्निर्मित करती है, उसको नया जन्म दे जाती है। तब उसका पुनर्जन्म हो जाता है।

दूसरी विधि—नया जन्म

'सांसारिक कामों में लगे हुए, अवधान को दो श्वासों के बीच टिकाओ। इस अभ्यास से थोड़े ही दिनों में नया जन्म होगा।'

'सांसारिक कामों में लगे हुए, अवधान को दो श्वासों के बीच टिकाओ...।'

श्वासों को भूल जाओ और उनके बीच में अवधान को लगाओ। एक सांस भीतर आती है; इसके पहले कि वह लौट जाये, उसे बाहर छोड़ा जाये—वहां एक अन्तराल होता है।

'सांसारिक कामों में लगे हुए, अवधान को दो श्वासों के बीच टिकाओ। इस अभ्यास से थोड़े ही दिनों में नया जन्म होगा।'

लेकिन, इसको लगातार करना है; यह छठी विधि निरन्तर करने की है। इसलिए कहा गया है—'सांसारिक कामों में लगे हुए।' जो भी तुम कर रहे हो उसमें अवधान को दो श्वासों के अन्तराल में स्थिर रखो। लेकिन कामकाज में लगे हुए ही इसे साधना है। इसे सांसारिक कामों में लगे हुए ही करना है; उनसे अलग होकर इसे न करें। यह साधना ही तब करो, जब तुम कुछ और काम कर रहे हो। तुम भोजन कर रहे हो, खाये जाओ और अन्तराल पर अवधान रखो; तुम चल रहे हो, चलते जाओ और अन्तराल पर अवधान को टिकाओ; तुम सोने जा रहे हो, लेटो और नींद को आने दो—लेकिन तुम अन्तराल के प्रति सजग रहो।

कामकाज क्यों? क्योंकि कामकाज मन को विकर्षित करता है। कामकाज में तुम्हारे अवधान को बार-बार बुलाना पड़ता है। विकर्षित न हो; अन्तराल में थिर रहो। कामकाज भी न रुके, चलता रहे! तब तुम्हारे अस्तित्व के दो तल हो जायेंगे—करना और होना। अस्तित्व के दो तल हो गये—एक करने का जगत और दूसरा होने का जगत; एक परिधि है और दूसरा केन्द्र। परिधि पर काम करते रहो, रुके नहीं; लेकिन केन्द्र पर भी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सावधानी से काम करते रहो।

क्या होगा? तुम्हारा कामकाज तब अभिनय हो जायेगा—मानो तुम कोई पार्ट अदा कर रहे हो। उदाहरण के लिए, तुम किसी नाटक में खेल रहे हो; तुम राम बने हो या क्राइस्ट बने हो। यद्यपि तुम राम या क्राइस्ट का अभिनय करते हो, तो भी तुम स्वयं बने रहते हो।

केन्द्र पर तुम जानते हो कि तुम कौन हो और परिधि पर तुम राम या क्राइस्ट या किसी का पार्ट अदा करते रहते हो। तुम जानते हो, तुम राम नहीं हो, राम का अभिनय भर कर रहे हो। तुम कौन हो, तुमको मालूम है। तुम्हारा अवधान तुममें केन्द्रित है और तुम्हारा काम परिधि पर जारी है।

यदि इस विधि का अभ्यास हो तो पूरा जीवन एक लम्बा नाटक बन जायेगा। तुम एक अभिनेता होगे; अभिनय भी करोगे और सदा अन्तराल में केन्द्रित रहोगे। जब तुम अन्तराल को भूल जाओगे, तब तुम अभिनेता नहीं रहोगे; तब तुम कर्त्ता हो जाओगे। तब वह नाटक नहीं रहेगा; उसे तुम भूल से जीवन समझ लोगे। यही हम सबने किया है। हर आदमी सोचता है कि वह जीवन जी रहा है। यह जीवन नहीं है, यह तो एक रोल है, एक पार्ट है—जो समाज ने, परिस्थितयों ने, संस्कृति ने, देश की परम्परा ने तुमको थमा दिया है और तुम अभिनय कर रहे हो। और तुम इस अभिनय के साथ तादात्म्य भी कर बैठे हो। उसी तादात्म्य को तोड़ने के लिए यह विधि है।

यह विधि, छठी विधि, तुमको एक मनोनाट्य, एक खेल बना देती है। तुम दो श्वासों के अन्तराल में थिर हो और जीवन परिधि पर चल रहा है। यदि तुम्हारा अवधान केन्द्र पर है तो तुम्हारा अवधान परिधि पर नहीं है, परिधि पर जो है, वह उपावधान है; वह कहीं तुम्हारे अवधान के पास घटित होता है। तुम उसे अनुभव कर सकते हो, उसे जान सकते हो, पर वह महत्वपूर्ण नहीं है। वह ऐसा है, जैसे तुमको नहीं घटित हो रहा है।

मैं इसे दोहराता हूं—यदि तुम इस छठी विधि की साधना करो तो तुम्हारा समूचा जीवन ऐसा हो जायेगा जैसे वह तुमको न घटित होकर किसी दूसरे व्यक्ति को घटित हो रहा है।

तीसरी विधि—मृत्यु पर अधिकार

'ललाट के मध्य में सूक्ष्म श्वास (प्राण) को टिकाओ। जब वह सोने के क्षण में हृदय तक पहुंच जायेगा, तब स्वप्न और स्वयं मृत्यु पर अधिकार हो जायेगा।'

तुम अधिकाधिक गहरी पर्तों में प्रवेश कर रहे हो।

'ललाट के मध्य में सूक्ष्म श्वास (प्राण) टिकाओ।' अगर तुम तीसरी आंख जान गये हो तो तुम ललाट के मध्य में स्थित सूक्ष्म श्वास को, अदृश्य प्राण को भी जान गये। और तब तुम यह भी जान गये कि वह ऊर्जा, वह प्रकाश बरसता है।

'जब यह हृदय तक पहुंचती है... जब यह वर्षा तुम्हारे हृदय तक पहुंचेगी... सोने के क्षण में, स्वप्न और स्वयं मृत्यु पर अधिकार हो जायेगा।'

इस विधि को तीन हिस्सों में लो। एक—श्वास के भीतर जो प्राण है, जो उसका सूक्ष्म,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अदृश्य, अपार्थिव अंश है, उसे तुम्हें अनुभव करना होगा। यह तब होता है, जब तुम भृकुटियों के बीच अवधान को थिर रखते हो। तब यह आसानी से घटित होता है। अगर तुम अवधान को अन्तराल में टिकाते हो, तो भी घटित होता है; लेकिन उतनी आसानी से नहीं। यदि तुम नाभि-केन्द्र के प्रति सजग हो, जहां श्वास आता है और छूकर चला जाता है, तो भी यह घटित होता है—पर कम आसानी से। उस सूक्ष्म प्राण को जानने का सब से सुगम मार्ग है, तीसरी आंख में थिर होना। वैसे तुम जहां भी केन्द्रित होगे, यह घटित होगा; तुम प्राण को प्रभावित होते अनुभव करोगे।

यदि तुम प्राण को अपने भीतर प्रवाहित होता अनुभव कर सको, तो तुम यह भी जान सकते हो कि कब तुम्हारी मृत्यु होगी। यदि तुम सूक्ष्म श्वास को, प्राण को महसूस करने लगो, तो मरने के छह महीने पहले तुम अपनी आसन्न मृत्यु को जानने लगते हो।

कैसे इतने सन्त अपनी मृत्यु की तिथि बता देते हैं?

यह आसान है। क्योंकि यदि तुम प्राण के प्रवाह को जानते हो, तो जब उसकी गति उलट जायेगी, तब उसको भी तुम जान लोगे। मृत्यु के छह महीने पहले प्रक्रिया उलट जाती है; प्राण तुम्हारे बाहर जाने लगता है। तब इसके प्रतिकूल श्वास—वही श्वास भीतर लेने की बजाए बाहर निकलने लग जाती है। तुम इसे नहीं जान पाते हो, क्योंकि तुम उसके अदृश्य भाग को नहीं देखते; केवल दृश्य को देखते हो, केवल बाहर को देखते हो। और वाहन तो एक ही रहेगा। अभी श्वास प्राण को भीतर ले जाता है और वहां छोड़ देता है। फिर वाहन बाहर खाली वापस जाता है और प्राण से पुनः भरकर भीतर जाता है।

इसलिए याद रखो कि भीतर जाने वाला श्वास और बाहर जाने वाला श्वास, दोनों एक नहीं है। वाहन के रूप में तो पूरक श्वास और रेचक श्वास एक ही है, लेकिन जहां पूरक प्राण से भरा होता है, वहां रेचक उससे रिक्त रहता है। तुमने प्राण को पी लिया और श्वास खाली हो गया।

जब तुम मृत्यु के करीब होते हो, तब उलटी प्रक्रिया चालू होती है। भीतर आने वाला श्वास—पूरक—तब प्राण-विहीन हो जाता है, रिक्त हो जाता है। और चूंकि तुम्हारा शरीर अस्तित्व से प्राण को ग्रहण करने में असमर्थ हो जाता है, इसलिए तुम मरते हो। तुम्हारी जरूरत न रही। पूरी प्रक्रिया उलट जाती है। अब जब श्वास बाहर जाता है तब प्राण को साथ लिए बाहर जाता है। इसलिए जिसने सूक्ष्म प्राण को जान लिया, वह अपनी मृत्यु का दिन भी तुरन्त जान सकता है। छह महीने पहले प्रक्रिया उल्टी हो जाती है।

यह सूत्र बहुत-बहुत महत्वपूर्ण है।

'ललाट के मध्य से सूक्ष्म श्वास (प्राण) को टिकाओ। और जब सोने के क्षण में वह हृदय तक पहुंच जायेगा तब स्वप्न और स्वयं मृत्यु पर अधिकार हो जायेगा।'

जब तुम नींद में उतर रहे हो, तभी इस विधि की साधना है, अन्य समय में नहीं। ठीक सोने का समय इस विधि के अभ्यास के लिए उपयुक्त समय है। तुम नींद में उतर रहे हो,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

धीरे-धीरे नींद तुम पर हावी हो रही है—क्षणों के भीतर तुम्हारी चेतना लुप्त होगी, तुम अचेत हो जाओगे—उस क्षण के आने के पहले तुम अपने श्वास और उसके सूक्ष्म अंश प्राण के प्रति सजग हो जाओ और उसे हृदय तक जाते हुए अनुभव करो। अनुभव करते जाओ कि यह हृदय तक आ रहा है, हृदय तक आ रहा है। प्राण हृदय से होकर तुम्हारे शरीर में प्रवेश करता है। इसलिए यह अनुभव करते ही जाओ कि प्राण हृदय तक आ रहा है। और इस निरन्तर अनुभव के बीच ही नींद को आने दो। तुम अनुभव करते जाओ और नींद को आने दो; नींद को तुमको अपने में समेट लेने दो।

यदि यह सम्भव हो जाये, कि तुम अदृश्य प्राण को हृदय तक जाते देखो और नींद को भी, तो तुम अपने सपनों के प्रति भी सजग हो जाओगे। तब तुमको बोध रहेगा कि तुम स्वप्न देख रहे हो। आमतौर से हम नहीं जानते हैं कि हम स्वप्न देख रहे हैं। जब तुम सपना देखते हो, तब तुम समझते हो कि यह यथार्थ ही है, वह भी तीसरी आंख के कारण ही सम्भव होता है।

क्या तुमने किसी को नींद में देखा है? उसकी आंखें ऊपर चली जाती हैं और तीसरी आंख में थिर हो जाती हैं। यदि नहीं देखा है तो देखो। आपका बच्चा सोया है, उसकी आंखें खोलकर देखो कि उसकी आंखें कहां हैं? उसकी आंख की पुतलियां ऊपर चढ़ी हैं और त्रिनेत्र पर केन्द्रित हैं। मैं कहता हूं कि बच्चों को देखो, सयानों को नहीं। सयाने भरोसे योग्य नहीं हैं, क्योंकि उनकी नींद गहरी नहीं होती; वे सोचते भर हैं कि सोये हैं। बच्चों को देखो, उनकी आंखें ऊपर को चढ़ जाती हैं।

इसी तीसरी आंख में थिरता के कारण तुम अपने सपनों को सच मानते हो; तुम यह नहीं समझ सकते कि वे सपने हैं। वह तुम तब जानोगे, जब सुबह जागोगे। तब तुम जानोगे कि मैं स्वप्न देख रहा था; लेकिन वह बाद का अनुदर्शन है। स्वप्न में तुम नहीं समझ सकते कि यह स्वप्न है। यदि समझ जाओ तो दो तल हो गए—स्वप्न है और तुम सजग हो, जागरूक हो।

जो नींद में स्वप्न के प्रति जाग सके, उसके लिए यह सूत्र चमत्कारिक है। यह कहता है—'स्वप्न पर और स्वयं मृत्यु एर अधिकार हो जायेगा।' यदि तुम स्वप्न के प्रति जागरूक हो जाओ, तो तुम दो काम कर सकते हो, एक कि तुम स्वप्न नहीं पैदा कर सकते। आमतौर से तुम स्वप्न नहीं पैदा कर सकते। आदमी कितना नपुंसक है। तुम स्वप्न भी नहीं पैदा कर सकते। अगर तुम कोई खास स्वप्न देखना चाहो तो नहीं देख सकते; यह तुम्हारे हाथ में नहीं है। मनुष्य कितना शक्तिहीन है! स्वप्न भी उससे नहीं निर्मित किये जा सकते। तुम स्वप्नों के शिकार भर हो, उनके स्रष्टा नहीं। स्वप्न तुममें घटित होता है; तुम कुछ नहीं कर सकते। न तुम उसे रोक सकते हो, न उसे पैदा कर सकते हो।

लेकिन अगर तुम यह देखते हुए नींद में उतरो कि हृदय प्राण से भर रहा है, निरन्तर हर श्वास में प्राण से स्पर्शित हो रहा है, तो तुम अपने स्वप्नों के मालिक हो जाओगे। और यह

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मालकियत बहुत अनूठी है, दुर्लभ है। तब तुम जो स्वप्न भी देखना चाहो,देख सकते हो। ठीक सोने के समय भाव करो कि मैं यह स्वप्न देखना चाहता हूं, और तुम वह स्वप्न देख लोगे। और सोते समय कहो कि मैं फलां स्वप्न नहीं देखना चाहता, और वह स्वप्न कभी तुम्हारे मन में प्रवेश नहीं करेगा।

लेकिन अपने स्वप्नों के मालिक बनने का क्या प्रयोजन है? क्या यह व्यर्थ नहीं है?

नहीं, यह व्यर्थ नहीं है। एक बार तुम स्वप्नों के मालिक हो गये, तो दुबारा तुम स्वप्न नहीं देखोगे; वह व्यर्थ हो गया। जब तुम स्वप्नों के मालिक होते हो, स्वप्न बन्द हो जाते हैं; उनकी जरूरत नहीं रह जाती। और जब स्वप्न बन्द होते हैं, तब तुम्हारी नींद का गुण-धर्म ही और होता है। वह गुण-धर्म वही है, जो मृत्यु का है।

मृत्यु गहन नींद है। अगर तुम्हारी नींद मृत्यु की तरह गहरी हो जाये, तो उसका अर्थ है कि सपने विदा हो गये। सपने नींद को उथली बना देते हैं। सपनों के चलते तुम सतह पर ही घूमते रहते हो। सपनों में उलझे रहने के कारण तुम्हारी नींद उथली हो जाती है। और जब सपने नहीं रहते, तब तुम नींद के समुद्र में उतर जाते हो, उसकी गहराई छू लेते हो। वही मृत्यु है।

इस विधि के द्वारा पहले तो तुम स्वप्नों के मालिक हो जाओगे। उसका अर्थ हुआ कि सपना बन्द हो जायेगा। या यदि तुम खुद सपना देखना चाहोगे तो देख भी सकते हो। लेकिन तब तक वह ऐच्छिक सपना होगा। वह अनिवार्य नहीं रहेगा; वह तुम पर लादा नहीं जायेगा; तुम उसके शिकार नहीं होगे। और तब तुम्हारी नींद का गुण-धर्म ठीक मृत्यु जैसा हो जायेगा; तब तुम जानोगे कि मृत्यु भी नींद है।

इसीलिए यह सूत्र कहता है—'नींद और स्वयं मृत्यु पर अधिकार हो जायेगा।' अब तुम जानोगे कि मृत्यु एक लम्बी नींद है; और वह सहयोगी है—और सुन्दर भी। क्योंकि वह तुमको नवजीवन देती है, वह तुम को सब-कुछ नया देती है फिर तो मृत्यु भी समाप्त हो जाती है। स्वप्न के शेष होते ही मृत्यु समाप्त हो जाती है।

मृत्यु पर नियंत्रण पाने, अधिकार पाने का दूसरा अर्थ भी है। अगर तुम समझ लो कि मृत्यु नींद है, तो तुम उसको निर्देश दे सकते हो। और अगर तुम अपने सपनों को निर्देश दे सकते हो तो मृत्यु को भी दे सकते हो। तब तुम चुनाव कर सकते हो कि तुम कहां पैदा हो, कब पैदा हो, किससे पैदा हो, और किस रूप में पैदा हो। तब तुम अपने जन्म के भी मालिक हो गये।

यह सूत्र कहता है—...'स्वयं मृत्यु पर।' तब कोई व्यक्ति अपने को एक विशेष तरह का जन्म भी दे सकता है, विशेष तरह का जीवन भी दे सकता है।

हम लोग तो शिकार हैं। हम नहीं जानते हैं कि क्यों जनमते हैं और क्यों मरते हैं? कौन हमें निर्देशित करता है और क्यों? कोई कारण नहीं दिखाई देता। सब-कुछ अराजकता, आकस्मिकता जैसा है। ऐसा इसलिए है कि हम मालिक नहीं हैं। एक बार मालिक हो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जायें तो फिर ऐसा नहीं रहेगा।

चौथी विधि—आत्यंतिक भक्तिपूर्वक

'आत्यंतिक भक्तिपूर्वक श्वास के दो सन्धि-स्थलों पर केन्द्रित होकर ज्ञाता को जान लो।'

इन विधियों के बीच जरा-जरा भेद है, जरा-जरा रूपान्तरण है। और यद्यपि विधियों में वे जरा-जरा से हैं, तो भी तुम्हारे लिए वे भेद बहुत हैं। अकेला एक शब्द बहुत फर्क पैदा करता है। 'आत्यंतिक भक्तिपूर्वक श्वास के दो सन्धि-स्थलों पर केन्द्रित होकर...।'

भीतर आने वाले श्वास का एक सन्धि-स्थल है, जहां से वह लौटता है। और बाहर जाने वाले श्वास का भी वैसा ही दूसरा सन्धि-स्थल है। इन दो सन्धि-स्थलों... (उनकी चर्चा हमकर चुके हैं।)... के साथ यहां जरा-सा भेद किया गया है। हालांकि यह भेद विधि में तो जरा-सा ही है, लेकिन साधक के लिए बड़ा भेद है। एक ही शर्त जोड़ी गयी है—'आत्यन्तिक भक्तिपूर्वक',... और पूरी विधि बदल जाती है।

इसके प्रथम रूप में भक्ति का सवाल नहीं था। वह मात्र वैज्ञानिक विधि थी। तुम प्रयोग करो और वह काम करेगी। लेकिन लोग हैं जो ऐसी शुष्क, वैज्ञानिक विधियों पर काम नहीं करेंगे। इसलिए जो हृदय की ओर झुके हैं, जो भक्ति के जगत के हैं, उनके लिए जरा-सा भेद किया गया है—'आत्यन्तिक भक्तिपूर्वक श्वास के दो सन्धि-स्थलों पर केन्द्रित होकर ज्ञाता को जान लो।'

अगर तुम वैज्ञानिक रुझान के नहीं हो, अगर तुम्हारा मन वैज्ञानिक नहीं है तो तुम इस विधि को प्रयोग में लाओ। आत्यन्तिक भक्ति, प्रेम, श्रद्धा के साथ श्वास के दो सन्धि-स्थलों पर केन्द्रित होकर ज्ञाता को जान लो। यह कैसे सम्भव होगा? भक्ति तो किसी के प्रति होती है; चाहे वो कृष्ण हो या क्राइस्ट। लेकिन तुमको स्वयं के प्रति, श्वास के दो सन्धि-स्थलों के प्रति भक्ति कैसे होगी? यह तत्व तो गैर-भक्ति-वाला है। लेकिन व्यक्ति-व्यक्ति पर निर्भर है।

तन्त्र का कहना है कि शरीर मन्दिर है। तुम्हारा शरीर परमात्मा का मन्दिर है, उसका निवास-स्थान है। इसलिए इसे मात्र अपना शरीर या एक वस्तु न मानो। यह पवित्र है, धार्मिक है। जब तुम एक श्वास भीतर ले रहे हो, तब तुम ही श्वास नहीं ले रहे हो, तुम्हारे भीतर परमात्मा भी श्वास ले रहा है। तुम चलते-फिरते हो इसे इस तरह देखो—आप नहीं, स्वयं परमात्मा ही तुममें चल रहा है। तब सब चीज पूरी तरह भक्तिपूर्ण हो जाती है।

अनेक सन्तों के बारे में कहा जाता है कि वे अपने शरीर को प्रेम करते थे। वे उसके साथ ऐसा व्यवहार करते थे, मानो वे शरीर उनकी प्रेमिकाओं के रहे हों। तुम भी अपने शरीर को यह व्यवहार दे सकते हो। उसके साथ यन्त्रवत व्यवहार भी कर सकते हो। वह भी एक रुझान है, एक दृष्टि है। तुम इसे अपराधपूर्ण, पाप-भरा और गन्दा भी मान सकते हो। और इसे चमत्कार भी समझ सकते हो; परमात्मा का घर भी समझ सकते हो। यह तुम पर निर्भर है। यदि तुम अपने शरीर को मन्दिर मान सको, तो यह विधि तुम

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

काम आ सकती है—'आत्यन्तिक भक्तिपूर्वक.... ।'

जब तुम भोजन कर रहे हो, तब इसका प्रयोग करो। यह न सोचो कि तुम भोजन कर रहे हो, सोचो कि परमात्मा तुममें भोजन कर रहा है। और तब परिवर्तन को देखो। तुम वही चीज खा रहे हो; तुम ही खा रहे हो; लेकिन तुरन्त सब कुछ बदल जाता है। अब तुम परमात्मा को भोजन दे रहे हो। तुम स्नान करते हो; कितना मामूली, अदना काम है! लेकिन दृष्टि बदल दो, अनुभव करो कि तुम अपने में परमात्मा को स्नान करा रहे हो। तब यह विधि आसान होगी—'आत्यन्तिक भक्तिपूर्वक श्वास के दो सन्धि-स्थलों पर केन्द्रित होकर ज्ञाता को जान लो।'

पांचवीं विधि—मृतवत हो जाना

'मृतवत लेट रहो। क्रोध से क्षुब्ध होकर भी उसमें ही ठहरे रहो। या पुतलियों को घुमाये बिना घूरते रहो। या कुछ चूसो और चूसना बन जाओ।'

'मृतवत लेट रहो... ।' ..प्रयोग करो कि तुम एकाएक मर गए हो। शरीर को छोड़ दो, क्योंकि तुम मर गये हो। मात्र कल्पना करो कि मैं मृत हूं; मैं शरीर को नहीं हिला सकताहूं, आंख भी नहीं हिला सकता हूं, मैं चीख भी नहीं सकता हूं, रो भी नहीं सकता हूं; मैं कुछ भी नहीं कर सकता हूं; मैं मरा हुआ हूं। और तब देखो कि कैसा लगता है। लेकिन अपने को धोखा मत दो। तुम शरीर को थोड़ा हिला सकते हो नहीं, हिलाओ नहीं। यदि मच्छर भी आ जाये, तो भी शरीर को मृत ही समझो।

यह एक बहुत व्यवहृत विधि है; बहु-व्यवहृत विधि। 'मृतवत लेट रहो; क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमें ही ठहरे रहो।

सही बात है कि जब तुम मर रहे हो तो वह कोई सुख का क्षण नहीं होगा। वह आनन्दपूर्ण नहीं हो सकता, जब तुम देखते हो कि तुम मर रहे हो। भय पकड़ेगा; मन में क्रोध उठेगा; या विषाद, उदासी, शोक, सन्ताप—कुछ भी पकड़ सकता है। व्यक्ति-व्यक्ति में फर्क होगा।

सूत्र कहता है—'क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमें ही ठहरे रहो, स्थिर रहो।' अगर तुमको क्रोध घेरे तो उसमें ही स्थित रहो; अगर उदासी घेरे तो उसमें भी। भय, चिन्ता, कुछ भी हो, उसमें ही ठहरे रहो, डटे रहो। तुम मर गये हो, फिर तुम क्या कर सकते हो? इसलिए वैसे-के-वैसे स्थित रहो। जो भी मन में हो, उसे वैसा ही रहने दो; क्योंकि शरीर तो मर चुका है।

यह ठहरना बहुत सुन्दर है। अगर तुम कुछ मिनटों के लिए भी ठहर गये तो तुम पाओगे कि सब कुछ बदल गया। लेकिन हम हिलने लगते हैं। यदि मन में कोई आवेग उठता है, तो शरीर हिलने लगता है। उदासी आती है, तो भी शरीर हिलता है। इसे 'आवेग' इसीलिए कहते हैं कि वह शरीर में वेग पैदा करता है। मृतवत महसूस करो और आवेगों को शरीर हिलाने की इजाजत मत दो। वे भी वहां रहें और तुम भी रहो—थिर,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मृतवत। कुछ भी हो, पर हलचल नहीं हो, गति नहीं हो; बस ठहरे रहो।

'या पुतलियां को घुमाये बिना घूरते रहो।'

यह—'या पुतलियों को घुमाये बिना घूरते रहो'—मेहर बाबा की विधि थी। वे अपने कमरे की छत को घूरते रहे, निरन्तर ताकते रहे। वर्षों वे जमीन पर मृतवत पड़े और पुतलियों को, आंखों को हिलाये बिना छत को एकटक देखते रहे। ऐसा वे लगा घंटों, बिना कुछ किये, घूरते रहते थे; टकटकी लगाकर देखते रहते थे।

आंखों से घूरना अच्छा है; क्योंकि उससे तुम फिर तीसरी आंख में स्थिर हो हो। और एक बार तुम तीसरी आंख में थिर हो गये, तो चाहने पर भी तुम पुतलियां नहीं घुमा सकते। वे भी थिर हो जाती हैं—अचल।

मेहर बाबा इसी घूरने के जरिये उपलब्ध हो गये। और तुम कहते हो कि इन छोटे अभ्यासों से क्या होगा! लेकिन मेहर बाबा लगातार तीन वर्षों तक बिना कुछ किये छत घूरते रहे थे। तुम सिर्फ तीन मिनट के लिए ऐसी टकटकी लगाओ, और तुमको लगेगा तीन वर्ष गुजर गये! तीन मिनट भी बहुत लम्बा समय मालूम पड़ेगा—लगेगा कि समय नहीं चलता है और घड़ी बन्द हो गयी है। लेकिन मेहर बाबा घूरते ही रहे, घूरते ही रहे। धीरे-धीरे विचार मिट गये, गति बन्द हो गयी। और मेहर बाबा मात्र चेतना रह गये; मात्र घूरना बन गये, टकटकी बन गये। और तब वे आजीवन मौन रह गये। टकटकी द्वारा वे अपने भीतर इतने शान्त हो गये कि उनके लिए फिर शब्द-रचना असम्भव हो गयी।

'या पुतलियों को घुमाये बिना ताकते रहो। या किसी चीज को चूसो और चूसना बन जाओ।'

यहां जरा-सा रूपान्तरण है। कुछ भी काम दे देगा। तुम मर गये, यही काफी है। 'क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमें ठहरे रहो।' केवल यह अंश एक विधि बन सकता है। क्रोध में हो; लेट रहो और क्रोध में स्थित रहो, पड़े रहो। इससे हटो नहीं, कुछ करो नहीं, स्थिर पड़े रहो। कृष्णमूर्ति इसी की चर्चा किये चले जाते हैं। उनकी पूरी विधि इसी चीज पर निर्भर है—क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमें ठहरे रहो।'

यदि तुम क्रुद्ध हो और क्रुद्ध रहो—उससे हिले नहीं; हटे नहीं। और अगर तुम ठहर सको तो क्रोध चला जायेगा। और तुम दूसरे आदमी होकर उससे निकलोगे। एक बार तुमने क्रोध को, उससे आन्दोलित हुए बिना देख लिया कि तुम उसके मालिक हो गये।

'या पुतलियों को हिलाये बिना एकटक घूरते रहो। या किसी चीज को चूसो और चूसना बन जाओ।'

यह अन्तिम विधि शारीरिक है और प्रयोग में सुगम है। क्योंकि चूसना पहला कृत्य है जो कि कोई बच्चा करता है। चूसना जीवन का पहला कृत्य है। बच्चा जब पैदा होता है तब वह पहले रोता है। तुमने यह जानने की कोशिश नहीं की होगी कि बच्चा क्यों

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। सच में वह रोता नहीं है, वह रोता हुआ मालूम पड़ता है। वह सिर्फ हवा को पी रहा है, चूस रहा है। अगर वह नहीं रोए तो मिनटों के भीतर वह मर जायेगा। क्योंकि रोना हवा लेने का पहला प्रयत्न है। जब वह पेट में था, बच्चा सांस नहीं लेता था बिना सांस लिए वह जीता था। वह वही क्रिया कर रहा था, जो भूमिगत समाधि लेने पर योगीजन करते हैं। वह बिना सांस लिए प्राण को ग्रहण कर रहा था—मां से शुद्ध प्राण ही ग्रहण कर रहा था।

सूत्र कहता है—'या किसी चीज को चूसो और चूसना बन जाओ।' किसी भी चीज को चूसो। हवा को चूसो, लेकिन तब हवा को भूल जाओ और चूसना ही बन जाओ। इसका क्या अर्थ हुआ?

तुम कुछ चूस रहे हो, इसमें तुम चूसने वाले हो, चोषण नहीं। तुम चोषण के पीछे खड़े हो। यह सूत्र कहता है कि पीछे मत खड़े रहो। कृत्य में सम्मिलित हो जाओ और चोषण बन जाओ। किसी चीज से भी तुम प्रयोग कर सकते हो। अगर तुम दौड़ रहे हो तो दौड़—दौड़ना ही बन जाओ; दौड़ने वाले न रहो। दौड़ना बन जाओ; दौड़ बन जाओ और दौड़ने वाले को भूल जाओ। अनुभव करो कि भीतर कोई दौड़नेवाला नहीं है, मात्र दौड़ने की प्रक्रिया है। वह प्रक्रिया तुम हो—सरिता जैसी प्रक्रिया। भीतर कोई नहीं है, भीतर सब शान्त है। और केवल यह प्रक्रिया है।

चूसना, चोषण—अच्छा है, लेकिन तुमको यह कठिन मालूम पड़ेगा; क्योंकि हम इसे बिल्कुल भूल गये हैं। यह कहना भी ठीक नहीं है कि बिल्कुल भूल गये हैं; क्योंकि हम इसका विकल्प तो निकालते रहते हैं। मां के स्तन की जगह सिगरेट ले लेती है और तुम उसे चूसते रहते हो। यह स्तन ही है—मां का स्तन, मां का चुचुक। और जो गर्म धुआं निकलता है, वह मां का गर्म दूध है।

इसलिए छुटपन में जिनको मां के स्तन के पास उतना नहीं रहने दिया गया, जितना वे चाहते थे, वे पीछे चलकर धूम्रपान करने लगते हैं। यह विकल्प है और विकल्प से भी काम चल जायेगा। इसलिए अगर तुम सिगरेट पीते हो, तो धूम्रपान ही बन जाओ। सिगरेट को भूल जाओ, पीने वाले को भूल जाओ और धूम्रपान ही बने रहो। एक विषय है जिसे तुम चूसते हो, विषयी है जो चूसता है, और उसके बीच चूसने की, चोषण की प्रक्रिया है। तुम चोषण बन जाओ, प्रक्रिया बन जाओ।

इसे प्रयोग करो। पहले कई चीजों से प्रयोग करना होगा और तब तुम जानोगे कि तुम्हारे लिए क्या चीज सही है। तुम पानी पी रहे हो। ठंडा पानी भीतर जा रहा है। तुम पीना बन जाओ। पानी न पीओ; पानी को भूल जाओ, अपने को भूल जाओ, अपनी प्यास भी, और मात्र पीना बन जाओ, प्रक्रिया बन जाओ। प्रक्रिया में ठण्डक है, स्पर्श है, प्रवेश है और पीना है—वही सब बन रहो।

क्या होगा?...यदि तुम चोषण बन जाओ तो क्या होगा?

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यदि तुम चोषण बन जाओ तो तुम निर्दोष हो जाओगे— ठीक वैसा, जैसा प्रथम जनमा हुआ शिशु होता है। क्योंकि वह प्रथम प्रक्रिया है। एक तरह से तुम पीछे की यात्रा करोगे। लेकिन उसकी ललक, लालसा भी तो है। आदमी का पूरा अस्तित्व स्तन-पान के लिए लालायित है, तड़पता है। इसके लिए वह कई प्रयोग करता है, लें कुछ भी काम नहीं आता; क्योंकि मूल बिन्दु ही खो रहा है। जब तक तुम चूसना नहीं जाते, तब तक कुछ भी काम नहीं आयेगा। इसलिए इसे प्रयोग में लाओ।

एक आदमी को मैंने यह विधि दी थी। उसने कई विधियां प्रयोग की थीं, तब वा पास आया। उससे मैंने कहा— यदि मैं समूचे संसार में से केवल एक चीज ही तुम्हें को कहूं, तो तुम क्या चुनोगे? और मैंने तुरन्त उसे यह भी कहा कि आंखें बन्द करो इस पर कुछ भी सोचे बिना मुझे बताओ।

जब वह डरने लगा, झिझकने लगा, तब मैंने कहा— न डरो और न झिझको; मुझे बताओ। उसने कहा— यह तो बेहूदा मालूम पड़ता है, लेकिन मेरे सामने एक स्तन रहा है। और यह कहकर वह अपराधी अनुभव करने लगा। तब मैंने कहा— अपराध अनुभव करो; स्तन में गलत क्या है? सर्व-सुन्दर चीजों में स्तन एक है; अपराध-भाव क्यों?

लेकिन उस आदमी ने कहा—यह चीज तो मेरे लिए ग्रस्तता बन गयी है। इस अपनी विधि बताने के पहले आप कृपा कर यह बताएं कि मैं क्यों स्त्रियों के स्तनों में उत्सुक हूं? जब भी मैं किसी स्त्री को देखता हूं, पहले उसका स्तन ही मुझे दिखाई देता शेष शरीर उतने महत्त्व का नहीं रहता। और यह बात उसके साथ ही लागू नहीं है। के साथ, प्रायः—प्रत्येक के साथ यह लागू है। और यह बिल्कुल स्वाभाविक है; मां का स्तन ही जगत् के साथ आदमी का पहला परिचय बनता है। यह बुनियादी है

जगत के साथ पहला सम्पर्क मां का स्तन बनता है। यही कारण है कि स्तन में आकर्षण है, स्तन इतना सुन्दर लगता है,उसमें एक चुम्बकीय शक्ति है। यह चुम्बक शक्ति तुम्हारे अचेतन से आती है वह पहली चीज है जिसके साथ तुम सम्पर्क में आ और यह सम्पर्क मधुर था; बहुत मधुर था। यह सुन्दर लगा। इसी ने भोजन दिया, दी, प्रेम दिया, सब-कुछ दिया। यह सम्पर्क कोमल, ग्रहणशील और निमन्त्रण था। और यह मनुष्य के मन में सदा वैसा ही बना रहा है।

इसलिए मैंने उस व्यक्ति से कहा कि अब मैं तुमको विधि दूंगा। और यही वि जो मैंने उसे दी। 'किसी चीज को चूसो, और चूसना बन जाओ।

मैंने बताया कि 'आंखें बन्द कर लो और अपनी मां का स्तन याद करो। या अ स्तन जो तुम्हें पसन्द हो। कल्पना करो और ऐसे चूसना शुरू करो कि यह असल है। शुरू करो।

उसने चूसना शुरू किया। तीन दिनों के अन्दर वह इतनी तेजी से, इतने पागल

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

साथ चूसने लगा और वह इसके साथ इतना मन्त्रबिद्ध-सा हो गया कि उसने एक दिन आकर मुझसे कहा—यह तो समस्या बन गयी है—रात दिन मैं चूसता ही रहा हूं। और यह इतना सुन्दर है और इससे ऐसी गहरी शांति पैदा होती है। और तीन महीनों के भीतर उसका चोषण एक मौन-मुद्रा बन गया। तुम समझ नहीं सकते कि वह कुछ कर रहा है। लेकिन अन्त में चूसना जारी था। सारा समय यह चूसता रहता। यह जप बन गया।

तीन महीने बाद उसने मुझसे कहा—कुछ अनूठा मेरे साथ घटित हो रहा है। निरन्तर कुछ मीठा द्रव्य मेरे सिर से मेरी जीभ पर बरसात है और यह इतना मीठा और शक्ति-दायक है कि मुझे किसी और भोजन की जरूरत नहीं रही। भूख समाप्त हो गयी और भोजन मात्र औपचारिक हो गया है। परिवार में समस्या न बने, इसलिए मैं दूध पी लेता हूं। लेकिन कुछ मुझे मिल रहा है जो बहुत मीठा बहुत जीवनदायी है। मैंने उसे यह विधि जारी रखने को कहा।

तीन महीने और—और वह एक दिन नाचता हुआ, पागल-सा मेरे पास आया और बोला— 'चूसना तो चला गया; लेकिन अब मैं दूसरा ही आदमी हूं। अब मैं वही नहीं हूं जो आपके पास आया था। मेरे लिए कोई द्वार खुल गया है। कुछ टूट गया है और कोई आकांक्षा शेष नहीं रही। अब मैं कुछ भी नहीं चाहता—न परमात्मा, न मोक्ष। अब जो है, जैसा है, ठीक हैं। मैं उसे स्वीकारता हूं और आनन्दित हूं।'

इसे प्रयोग में लाओ। किसी चीज को चूसो और चूसना बन जाओ। यह अनेकों के लिए उपयोगी होगा; क्योंकि यह इतना आधारभूत है।

१४. सजग मृत्यु और शरीर से अलग होने की विधि

मनुष्य के संकल्प की बड़ी सम्भावनाएं हैं; लेकिन हमें कुछ ख्याल में नहीं है। मृत्यु का स्वेच्छा से प्रयोग संकल्प का गहरे-से-गहरा प्रयोग है। क्योंकि साधारणतः जीवन के पक्ष में संकल्प करना कठिन नहीं है—हम जीना ही चाहते हैं। मृत्यु के पक्ष में संकल्प करना बहुत कठिन बात है।

लेकिन, जिन्हें भी सच में ही जीने का पूरा अर्थ जानना हो, उन्हें एक बार मर कर जरूर देखना चाहिए। क्योंकि बिना मर कर देखें वे कभी नहीं जान सकेंगे कि उनके पास कैसा जीवन है। एक बार वे स्वेच्छा से मर कर देख लें। फिर मृत्यु है ही नहीं।

सिर्फ पूर्ण संकल्प से कि मेरी चेतना सिकुड़ रही है, मैं अपने को चारों तरफ से सिकोड़ लेता हूं। आंख बन्द करके मैं अपने को सिकोड़ता हूं—भाव करता हूं कि मेरी चेतना सिकुड़ रही है। अपने पैरों से यात्रा भीतर की तरफ शुरू कर दी — उस केन्द्र पर ऊर्जा इकट्ठी होने लगी जहां से फैली थी; सब किरणें वापस लौटने लगीं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसका सघन मन से किया गया प्रयोग एक क्षण में अचानक सारे शरीर को मृत कर देता है और कोई एक भीतर जीवित बिन्दु रह जाता है; सारा शरीर मुर्दे की तरह रह जाता है और सारे शरीर के भीतर एक बिन्दु जीवित हो जाता है।

यह जीवित बिन्दु अब भली भांति देखा जा सकता है कि शरीर से भिन्न है। ऐसे ही, जैसे अन्धेरे में बहुत-सी किरणें फैली हों, और पता न चलता हो कि क्या किरण है और क्या अन्धेरा। सारी किरणें सिकुड़कर एक जगह आ जायें, तो अन्धेरा और किरणों का कंट्रास्ट साफ हो जाये।

जब हमारे भीतर प्राण की ऊर्जा इकट्ठी एक बिन्दु पर आकर घनीभूत हो जाती है, तो सारा शरीर अलग और वह बिन्दु अलग मालूम होने लगता है। अब थोड़े संकल्प की जरूरत है कि आप शरीर से बाहर हो सकते हैं। सिर्फ सोचें कि मैं बाहर हूं, आप बाहर हैं। अब बाहर से खड़े होकर इस शरीर को पड़ा हुआ देख सकते हैं कि यह मुर्दे की तरह पड़ा हुआ है। छोटी-सी, एक धागे की तरह कोई चीज इस शरीर से अब भी जोड़े रहेगी। वही द्वार है आने-जाने का। एक सिलवर कॉर्ड, एक रजत-रज्जू उस शरीर की नाभि से आपको जोड़े रहेगी।

जैसे ही यह बिन्दु बाहर आयेगा, वैसे ही एक और नयी हैरानी का अनुभव होगा कि इस बिन्दु ने फिर नये शरीर का रूप ले लिया— यह फिर फैलकर एक नया शरीर बन गया। यह शरीर सूक्ष्म शरीर है। यह शरीर बिल्कुल इसकी प्रतिलिपि है, जैसा यह शरीर है।

लेकिन है बहुत धूमिल —फिल्म की तरह ट्रांसपेरेन्ट — पारदर्शी। अगर हाथ को हिलायें, तो उसके आर-पार निकल जायेगा, लेकिन उसका कुछ बिगड़ेगा नहीं।

इस संकल्प की साधना पहला तत्त्व है सारे प्राणों को एक बिन्दु पर इकट्ठा कर लेना। और जब एक बिन्दु पर वे इकट्ठे हो जाएं तो आप छलांग लगाकर बाहर निकल जाते हैं।

सिर्फ बाहर निकलने की इच्छा और बाहर निकलना घटित हो जाता है। और सिर्फ इच्छा कि वापिस भीतर चलें और वह हो जाता है।

इसमें कुछ करने का नहीं है, बस सिर्फ ऊर्जा को इकट्ठी करना है। एक दफा ऊर्जा इकट्ठी हो जाये, तो आप बाहर भीतर हो सकते हैं। उसमें कोई कठिनाई नहीं है। यह अनुभव एक बार साधक को हो जाये, तो उसकी जीवन यात्रा तत्काल ही बदल जाती है; रूपांतरित हो जाती है।

कल तक फिर जिसे वह जीवन कहता था, अब जीवन न कह सकेगा। कल तक जिसे मृत्यु कहता था, उसे मृत्यु भी न कह सकेगा। कल तक जिन चीजों के लिए दौड़ रहा था, अब दौड़ जरा मुश्किल हो जाएगी। कल तक जिन चीजों के लिए लड़ रहा था, अब लड़ना मुश्किल हो जायेगा। कल तक जिन चीजों की उपेक्षा की थी, अब उपेक्षा न कर सकेगा।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जिन्दगी बदलेगी, क्योंकि एक ऐसा अनुभव जिन्दगी में आया है कि इसके बाद जिन्दगी वही नहीं हो सकती, जो इसके पहले थी। इसलिए प्रत्येक ध्यान के साधक को एक न एक दिन 'आउट ऑफ बॉडी एक्सपीरियेन्स' — शरीर के बाहर जाने का अनुभव करना चाहिए। यह अनिवार्य चरण है, जो उसके भविष्य के लिए बड़े अद्‍भुत परिणाम ले आता है।

कठिन नहीं है यह, संकल्प भर चाहिए। संकल्प कठिन है, यह प्रयोग कठिन नहीं है। इसलिए कोई सीधा चाहे कि इस प्रयोग को कर ले, तो जरा मुश्किल पड़ेगी। पहले उसे छोटे-छोटे संकल्प के प्रयोग करने चाहिए। जब वह छोटे-छोटे प्रयोगों में सफल होता जाता है, तो उसकी संकल्प की सामर्थ्य बढ़ती चली जाती है।

बहुत छोटे-से निर्णय करें और उनको जीने की कोशिश करें। और उनको जीने की कोशिश करें। और उस जीने की कोशिश से धीरे-धीरे जब आपको ऐसा भरोसा आने लगे कि अब मैं कोई बड़ा संकल्प कर सकता हूं, तो थोड़े बड़े संकल्प करें। अन्तिम संकल्प साधक को करने जैसा है, 'स्वेच्छा से मरने का'। किसी दिन जब आपको यह लगे कि अब मैं यह कर सकता हूं, तो करें।

जिस दिन आप उस संकल्प को करके शरीर को मुर्दे की तरह देख लेंगे, उस दिन से दुनिया का कोई धर्म-शास्त्र आप के लिए कोई नई बात कहने वाला नहीं रह जायेगा; उस दिन से दुनिया का कोई गुरु नयी बात न बता सकेगा।

१५. जाति-स्मरण के प्रयोग

जाति-स्मरण का अर्थ है, पिछले जन्मों के स्मरण की विधि; पहले जो हमारा होना हुआ है, उनके स्मरण की विधि। जाति स्मरण ध्यान का ही एक विशेष प्रयोग है। जैसे नदी है और कोई पूछे कि नहर क्या है, तो हम कहेंगे कि नदी एक विशेष प्रयोग है — सुनियोजित; नदी का ही, पर नियन्त्रित, व्यवस्थित।

नदी है अव्यवस्थित, अनियन्त्रित।

नदी भी पहुंचेगी कहीं, लेकिन पहुंचने की कोई मंजिल का पक्का नहीं। लेकिन नहर सुनिश्चित है कि कहीं पहुंचेगी। ध्यान तो बड़ी नदी है, पहुंचेगी सागर तक। पहुंच ही जायेगी। परमात्मा तक पहुंचा ही देगा ध्यान, लेकिन ध्यान के और अवान्तर प्रयोग भी हैं। ध्यान की छोटी-छोटी शाखाओं को नियोजित करके नहर की तरह भी बहाया जा सकता है। जाति-स्मरण उनमें एक है। ध्यान की शक्ति को हम अपने पिछले जन्मों की तरफ भी प्रवाहित कर सकते हैं।

ध्यान रहे, कोई स्मृति कभी नहीं मिटती है— सिर्फ दबती है या उभरती है। दबी हुई स्मृति, मिटी हुई मालूम पड़ती है। अगर मैं आपसे पूछूं कि १९५० की १ जनवरी को आपने क्या-क्या किया था तो ऐसा तो नहीं है कि आपने कुछ भी न किया होगा; लेकिन आप कुछ भी नहीं बता पायेंगे कि १ जनवरी १९५० को आपने क्या किया। एकदम खाली

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हो गया है १ जनवरी १९५० का दिन। पर खाली न रहा होगा; जिस दिन बीता होगा, उस दिन भरा हुआ था; लेकिन आज खाली हो गया है।

दस साल बाद आज के दिन का भी कोई पता नहीं चलेगा। पर उसे जानने का भी उपाय है; ध्यान को उसकी तरफ भी ले जाया जा सकता है। जैसे ही ध्यान का प्रकाश उस पर पड़ेगा, आप हैरान हो जायेंगे कि वह उतना ही जीवन्त वापिस दिखाई पड़ने लगेगा, जितना जीवन्त उस दिन भी न रहा होगा। जैसे कोई टॉर्च लेकर अन्धेरे कमरे में आये और उसे घुमाये— वह बायीं तरफ देखे तो दायीं तरफ अन्धेरा हो जाता है, लेकिन दायीं तरफ मिट नहीं जाता; वह टॉर्च को घुमाये और दायीं तरफ ले आये, तो दायीं तरफ फिर जीवित हो जाता है, लेकिन बायीं तरफ छिप जाता है।

ध्यान का एक फोकस है। और अगर विशेष दिशा में प्रवाहित करना हो तो ध्यान का टॉर्च की तरह प्रयोग करना पड़ता है; अगर परमात्मा की तरफ ले जाना हो तो ध्यान का दीये की तरह प्रयोग करना पड़ता है। दीये का कोई फोकस नहीं होता, दीया अनफोकस्ड है। दीया सिर्फ जलता है, चारो तरफ रोशनी उसकी फैल जाती है। इसलिए जो भी है वह दीये की रोशनी में प्रकट हो जाता है। लेकिन टॉर्च, दीये का फोकस के रूप में प्रयोग है। उसमें हम सारी रोशनी को बांधकर एक तरफ फैलाते हैं।

इसलिए यह हो सकता है कि दीये के कमरे में जलने से चीजें दिखाई पड़ें — पर साफ दिखाई न पड़ें। साफ दिखाई पड़ने के लिए दिये की रोशनी को हम एक ही जगह बांधकर डालते हैं, वह टॉर्च बन जाती है। तब फिर एक चीज पूरी साफ दिखाई पड़ती है, लेकिन शेष सब चीजे दिखाई पड़नी बन्द हो जाती हैं। असल में एक चीज को अगर साफ देखना हो तो सारे ध्यान को एक ही दिशा में ले जाना पड़ेगा, शेष सब तरफ अन्धेरा कर लेना पड़ेगा।

जिसे सीधे जीवन के सत्य को ही जानना है, वह तो दीये की तरह ध्यान को विकसित करेगा; अन्य कोई प्रयोजन नहीं है उसे। लेकिन, अगर कोई विशेष प्रयोग करने हों — जैसे पिछले जन्मों के स्मरण का; तो फिर ध्यान को एक दिशा में प्रवाहित करना होगा। उस दिशा में प्रवाहित करने के दो तीन सूत्र आपसे कहता हूं।

पूरे सूत्र नहीं कहता हूं; क्योंकि शायद ही किसी को प्रवाहित करने का ख्याल हो। जिनको ख्याल हो, वे मुझसे अलग से मिल सकते हैं। लेकिन दो-तीन सूत्र आपसे कहता हूं। उतने से आप प्रयोग न कर सकेंगे, लेकिन बात भर समझ सकेंगे। सबके लिए प्रयोग करना शायद उचित भी नहीं है, इसलिए पूरी बात नहीं कहूंगा। क्योंकि कई बार प्रयोग आपको खतरे में उतार दे सकता है। एक घटना आपसे कहूं, उससे ख्याल आ जायेगा।

एक प्रोफेसर महिला कोई दो-तीन वर्ष तक ध्यान के सम्बन्ध में मेरे निकट में रही। उसका आग्रह था कि जाति-स्मरण का प्रयोग करना है, पिछला जन्म जानना है, उसे मैंने जाति-स्मरण के प्रयोग करवाये।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मैंने उनसे बहुत कहा कि यह प्रयोग अभी न करो तो अच्छा है। ध्यान पूरा विकसित हो जाये, तब जाति-स्मरण के प्रयोग से कोई खतरा नहीं होता हैं; लेकिन ध्यान पूरा विकसित न हो तो, खतरे हो सकते हैं। क्योंकि एक ही जन्म की स्मृतियों को झेलना भी बहुत बोझिल है; दो-चार जन्म की स्मृतियां एकदम से द्वार तोड़ कर भीतर आ जायें, तो आदमी पागल भी हो सकता है।

इसलिए प्रकृति ने व्यवस्था की है आप भूलते चले जायें। जानने से ज्यादा भूलने की व्यवस्था की गयी है। जितना आप स्मरण करते हैं, उससे ज्यादा विस्मरण करवा दिया जाता है। ताकि आपके चित्त के ऊपर ज्यादा बोझ कभी न हो जाये। चित्त की सामर्थ्य बढ़ जाये, तो ज्यादा बोझ झेला जा सकता है। लेकिन सामर्थ्य न बढ़े और बोझ आ जाये, तो कठिनाई शुरू हो जाती है।

पर उनका आग्रह था, उन्होंने नही माना और प्रयोग किया। जिस दिन उनको पिछले जन्म की स्मृति की धारा टूटी, उस दिन रात के कोई दो बजे वे भागी हुई मेरे पास आयीं। उनकी हालत एकदम खराब थी, बहुत ही मुश्किल में पड़ गयी थीं। उन्होंने कहा— 'अब किसी तरह इसको बिल्कुल बन्द हो जाना चाहिए; मैं तो उस तरफ देखना ही नहीं चाहती'।

लेकिन स्मृति की धारा टूटने पर एकदम से बन्द कर देना इतना आसान नहीं है— द्वार टूट जाये, तो उसे एकदम-से बन्द कर देना बहुत मुश्किल है। क्योंकि द्वार खुलता नहीं है टूटता है। वक्त लगा कोई पन्द्रह दिन, तभी वह स्मृतियों की धारा बन्द हो सकी।

कठिनाई क्या आ गयी?... उन देवी को अत्यन्त पवित्र एवं चरित्रवान होने का दावा था, और पिछले जन्म की स्मृति आयी कि वह वेश्या थी। और जब वेश्या होने के सारे चित्र उभरने शुरू हुए, वह डांवाडोल हो गयीं।

वह स्मृति ऐसी नहीं आती कि कोई वेश्या थी; ऐसी नहीं है वह स्मृति। ... यही जो अब चरित्रवान है, वही वेश्या थी।

अक्सर ऐसा होता है कि पिछले जन्म में जो वेश्या हो, वह इस जन्म में बहुत सती हो जाये। वह पिछले जन्म की प्रतिक्रिया है, पिछले जन्म का दुख-भाव है। वह पिछले जन्म की पीड़ादायक स्मृति है, जो उसे सती बना देती है। अक्सर ऐसा हो जाता है कि पिछले जन्म के गुन्डे इस जन्म में महात्मा हो जाते हैं; इस जन्म के महात्मा अगले जन्म में गुन्डे हो जाते हैं। अक्सर यह प्रतिक्रिया हो जाती है। उसका कारण यह है कि जो हम जान लेते हैं, उससे पीड़ित हो जाते हैं, उससे हम विपरीत चले जाते हैं। चित्त का जो पेन्डुलम है, वह बिल्कुल विपरीत दिशा में घूमता रहता है।

उन देवी को जब पूर्व-जन्म का स्मरण आया, तो उन्हें बहुत पीड़ा हुई। पीड़ा यह हुई कि उनका अहंकार गल गया और टूट गया। जो उन्होंने जाना, वह कंपा देने वाला सिद्ध हुआ। मैंने उनको कहा था कि इसे याद करने की तैयारी रखनी चाहिए; अगर तैयारी न हो तो याद नहीं करनी चाहिए।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसलिए मैं आपको दो-तीन सूत्र कहता हूं, जिनसे आप जाति-स्मरण का जो अर्थ है वह समझ सकें। लेकिन उसमें प्रयोग नहीं हो सकेगा; जिन्हें करना होगा, उन्हें अलग से ही सोचना पड़ेगा।

पहली बात, अगर जाति-स्मरण में उतरना हो, अतीत जन्म को जानना हो, तो भविष्य की तरफ से चित्त को मोड़ना पड़ता है। हमारा चित्त भविष्यगामी है। हमारा चित्त फ्यूचर सेन्टर्ड है आमतौर से, अतीतगामी नहीं है। अभी जो आने को है, उसकी तरफ हम उत्सुक हैं।

इसलिए तो हम ज्योतिषियों के पास पूछते फिरते हैं कि कल क्या होनेवाला है — भविष्य में क्या होनेवाला है। भविष्य के प्रति हम उत्सुक हैं कि क्या होनेवाला है।

जिस व्यक्ति को अतीत-स्मरण करना हो, उसे भविष्य की उत्सुकता बिल्कुल छोड़ देनी पड़ती है; क्योंकि चित्त का जो फोकस है, उसकी जो धारा है, अगर वह भविष्य की तरफ बह रही है, तो उसकी टॉर्च की धारा अतीत की तरफ नहीं बह सकती। तो पहला काम यह करना पड़ता है कि भविष्योन्मुखता बिल्कुल तोड़ देनी पड़ती है कुछ महीनों के लिए, एक निश्चित समय के लिए। ...छह महीने के लिए भविष्य को नहीं सोचूंगा, भविष्य का ख्याल आ जायेगा तो उसको नमस्कार कर लूंगा— भविष्य है ही नहीं, ऐसा छह महीने मान कर चलूंगा; और पीछे की तरफ बहूंगा—पहली बात। और जैसे ही भविष्योन्मुखता टूटती है, चित्त की धारा पीछे की तरफ मुड़नी शुरू हो जाती है।

पहले तो इसी जन्म में पीछे लौटना पड़ेगा; एकदम पिछले जन्म में नहीं लौटा जा सकता। इसके प्रयोग हैं कि इस जन्म में हम पीछे की तरफ कैसे लौटें। जैसे कि मैंने कहा, १ जनवरी १९५० को आपने क्या किया, इसका आपको कोई पता नहीं है। पर इसका प्रयोग है, इसे जाना जा सकता है।

जैसे मैं ध्यान के लिए कहता हूं, ऐसा ध्यान करें । और दस मिनट के बाद जब ध्यान में चित्त चला जाये— शरीर शिथिल हो जाये, श्वास शिथिल हो जाये, मन शान्त हो जाये— तब एक ही बात चित्त में रह जाये कि १ जनवरी १९५० को क्या हुआ; सारा चित्त इस पर घूमने लगे। चित्त में चारो ओर गूंजता हुआ यह एक स्वर रह जाये तो आप दो-चार दिन में पायेंगे कि अचानक एक दिन जैसे पर्दा उठ गया और १ जनवरी आ गयी और सुबह से सांझ तक एक-एक चीज दौड़ रही है और आपने इस तरह १ जनवरी देखी, जैसे आपने उस दिन भी न देखी होगी; क्योंकि इतना होश आपने उस दिन भी न रखा होगा।

पहले इसी जन्म में पीछे लौटकर प्रयोग करना पड़ेगा, फिर पांच वर्ष तक प्रयोग को ले जाना बहुत सरल है। पांच वर्ष की उम्र तक पीछे लौटना बहुत सरल है, बहुत कठिन नहीं है; लेकिन पांच वर्ष के बाद बड़ी बाधा पड़ती है।

इसलिए आमतौर से हमारी स्मृति पांच वर्ष के उम्र के पहले की नहीं होती; पीछे-से-पीछे की स्मृति पांच वर्ष के करीब की होती है। हां, कुछ लोगों मे तीन वर्ष तक

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हो सकती है। लेकिन तीन वर्ष के पहले बहुत मुश्किल बात हो जाती है, वहां एकदम द्वार अटक जाता है— जैसे सब बन्द हो गया। लेकिन जो व्यक्ति इसमें समर्थ हो जायेगा, वह पांच वर्ष की उम्र तक की — किसी भी दिन की स्मृति को पूरा जगाने लगेगा। वह पूरी तरह जगने लगती है। उसकी इस तरह जांच कर लेनी चाहिए —

जैसे आज का दिन गुजर रहा है, तो आज के दिन की कुछ बातें नोट करके ताले में बन्द कर दें और दो साल बाद आज के दिन को याद करें। वह सब खो जायेगा आज का दिन, और तब स्मरण करें। और स्मरण करके फिर ताला तोड़ें और फिर मिलायें कि वह बात मेल खा गयी कि नहीं। आप हैरान होंगे कि जितनी बातें आपने लिखी थीं, उनसे बहुत ज्यादा बातें और भी याद आयी हैं जो आप उस दिन भी नोट नहीं कर पाये थे। वे बातें याद आ जायेंगी।

इसको बुद्ध ने नाम दिया है, 'आलय-विज्ञान' इसका मतलब होता है, 'स्टोर हाऊस ऑफ कॉन्शसनेस'। जैसे घर में एक कबाड़खाना होता है, जहां हम सब बेकार हो गयी चीजों को डालते चले जाते हैं — ऐसा चित्त की स्मृतियों को संग्रह करने वाला एक स्टोर हाऊस है, जहां सब चीज़ें संगृहीत होती चली जाती हैं — जन्मों-जन्मों की। वे कभी वहां से हटती नहीं है; क्योंकि कब जरूरत पड़ जाये उनकी! इसलिए ये वहां संगृहीत होती है।

शरीर बदल जाता है, लेकिन वह स्टोर-हाउस हमारे साथ चलता है। कब जरूरत पड़ जायेगी उसकी, कुछ कहा नहीं जा सकता है। और जिन्दगी में जो-जो हमने किया है, जो-जो जाना है। जो-जो हमने भोगा है, जो-जो जीया है, वह सब वहां संगृहीत है।

जिस व्यक्ति को यह पांच वर्ष तक स्मरण आने लगे वह पांच वर्ष के पीछे उतर सकता है। बहुत कठिनाई नहीं है, प्रयोग यही रहेगा पांच वर्ष के पीछे उतरने का। पांच वर्ष के पीछे फिर एक दरवाजा है, जो वहां तक ले जायेगा जहां तक जन्म हुआ, पृथ्वी पर आना हुआ। फिर एक कठिनाई मालूम होती है, क्योंकि मां के पेट की स्मृतियां हैं — वे भी मिटती नहीं हैं, उसमें भी प्रवेश किया जा सकता है। और तब उस क्षण तक पहुंचा जा सकता है। जिस क्षण कन्सेप्शन होता है— जिस क्षण मां और पिता के अणु मिलते हैं और आत्मा प्रवेश करती है। वहां तक पहुंच जाने के बाद ही पिछले जन्मों में उतरा जा सकता है; सीधे नहीं उतरा जा सकता है।

इतनी यात्रा पीछे करनी पड़े, तब पिछले जन्म में भी सरका जा सकता है। पिछले जन्म में सरकने पर पहला स्मरण जो आयेगा, वह अन्तिम घटना का आयेगा।

ध्यान रहे, जैसे कि हम किसी फिल्म को उलटा चलायें, तो समझ में नहीं आयेगी। या कोई आदमी किसी उपन्यास को उल्टा पढ़े, तो समझ में बिल्कुल नहीं आयेगा। बहुत मुश्किल में पड़ जायेगा। क्योंकि यह बिल्कुल उल्टा है— घटना घटने का जो क्रम था, उससे यह बिल्कुल उलटा क्रम है। अगर आप पीछे लौटेंगे, तो जन्म पहले आयेगा और पिछले जन्म की मृत्यु बाद में आयेगी; मृत्यु पहले आयेगी, बुढ़ापा पहले आयेगा — फिर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जवानी आयेगी, फिर बचपन आयेगा। तो उलटा क्रम होगा और उलटे क्रम में पहचानना बहुत मुश्किल होगा।

इसलिए पहली दफा स्मरण आ जाने पर बड़ी बेचैनी और तकलीफ शुरू होती है; क्योंकि पहचानना मुश्किल होता है कि यह क्या हो रहा है। पिछले जन्म की स्मृतियों का जो सबसे बड़ा कठिन श्रम है, वह यह है कि उलटे में उसको देखना पड़ेगा जो सीधे में घटा था। इसलिए पिछले जन्म की स्मृति आ जाने पर भी उसे व्यवस्थित करने में बहुत समय लग जाता है। साफ-साफ व्यवस्थित करने में कि कैसी घटना घटी होगी, उसका क्या तारतम्य रहा होगा।

अगर हम उलटा देख सकें, तो हम बहुत हैरान होंगे — क्योंकि तलाक अगर पहले घट जाये, फिर प्रेम हो, फिर विवाह हो, तो हमको चीजें पहली दफा दिखाई पड़ेंगी कि यह तो बहुत हैरानी की बात है। तब हमें दिखाई पड़ेगा कि तलाक घटना तो बहुत अनिवार्य था—

जिस तरह का प्रेम हुआ था, उसमें तलाक होने ही वाला था। और जिस तरह का विवाह हुआ था, उसकी तलाक ही परिणति थी। लेकिन जब हमने विवाह किया था, तब हमने सोचा भी नहीं था कि इसमें तलाक घट सकता है। लेकिन तलाक उसी विवाह का फल था।

अगर हम इस बात को पूरी तरह देख लेंगे, तो आज प्रेम करना बहुत कठिन हो जायेगा। क्योंकि उसमें तलाक हमें पहले से दिखाई पड़ सकता है; मित्रता करने से पहले शत्रुता का आगमन दिखाई पड़ सकता है।

पिछले जन्म की स्मृति इस जन्म को एकदम अस्त-व्यस्त कर देगी; क्योंकि आप फिर उसी तरह से नहीं जी सकेंगे, जैसा आप पिछले जन्म में जीये थे। उस बार ऐसा लगा था और अभी भी ऐसा लग रहा है कि धन इकट्ठा करते जा रहे हैं तो बड़ी सफलता मिल जायेगी, बड़ा आनन्द मिल जायेगा—पर उसमें दिखाई पड़ेगा कि दुख मिला और फिर धन इकट्ठा कर रहे हैं! दुख मिलना पहले दिखाई पड़ जायेगा—और धन इकट्ठा करना पीछे दिखाई पड़ेगा।

और तब यह साफ दिखाई पड़ेगा कि धन इकट्ठा करना सुख में ले जाने का आधार नहीं था, वह ले गया दुख में। मित्र बनाना शत्रु बनाने में ले गया। जिसे हम प्रेम करना कहते थे, वह घृणा में ले गया है। जिसे हम मिलन कहते थे, वह विरह में ले गया है। तब चीजें अपने पूरे अर्थ में प्रकट होंगी और वह अर्थ हमारे इस जीवन के जीने को एकदम बदल देगा; क्योंकि तब बड़ी अन्यथा बात हो जायेगी।

यह स्मरण सम्भव है, आवश्यक नहीं; सम्भव है अनिवार्य नहीं। और कभी-कभी तो ध्यान करते-करते आकस्मिक रूप से भी टूट पड़ता है। बिना कोई प्रयोग किये भी अगर ध्यान करते-करते पिछले जन्मों की स्मृतियां आकस्मिक रूप से प्रकट हो जायें, तो उनमें

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बहुत रस मत लेना। देख लेना और साक्षी-भाव ही रखना। क्योंकि साधारणतः चित्त की इतनी सामर्थ्य नहीं होती कि इतने अनन्त उपद्रवों को एक साथ झेल सके। उस झेलने में विक्षिप्त हो जाने की पूरी सम्भावना है।

लेकिन उस धारा को तोड़ने की दिशा में जाना बहुत आवश्यक नहीं है; किन्हीं को उसकी उत्सुकता हो तो प्रयोग कर सकते हैं। लेकिन उन प्रयोगों से पहले ध्यान में काफी गहरे प्रयोग जरूरी हैं—ताकि मन इतना शान्त और शक्ति-शाली हो जाये कि कोई भी चीज जब टूट पड़े, तो आप उसको साक्षी-भाव से देख सकें।

और अगर कोई व्यक्ति साक्षी-भाव में विकसित हो जाता है, तो पुराने जन्म देखे गये सपने से ज्यादा नही मालूम पड़ते हैं। तब उसे कोई पीड़ा नहीं होती। तब ऐसा लगता है, यह सपना हमने देखा था। सपने से ज्यादा उनका अर्थ नहीं रह जाता। जब हमें पुराने दो चार जन्म याद आ जाते हैं, और सपने की तरह मालूम पड़ने लगते हैं, तो यह जन्म भी तत्काल सपने की तरह मालूम पड़ने लगता है।

जिन लोगों ने इस जगत को माया कहा है, उनके जगत को माया कहने का और कोई बुनियादी कारण नहीं है; वह कोई दार्शनिक बात नहीं है; उसका बुनियादी कारण जाति-स्मरण ही है। जिन्होंने भी पिछले जन्म स्मरण किये हैं, उन्हें यह सब मामला माया हो गया है, एकदम सपना हो गया है। क्योंकि कहां हैं वे मित्र, जो पिछले जन्म में थे? कहां हैं वे मकान? कहां है वह पत्नी? कहां हैं वे बेटे? कहां गयी वह दुनिया? कहां गया है वह सब, जिसको हमने इतना सत्य मान रखा था कि वह है? कहां गयीं वे चिन्तायें, जिनके लिए हम रातभर नहीं सोये थे? कहां गये वे दुख— वे पीड़ायें— जिनको हमने पहाड़ समझ रखा था और ढोया था?

अगर पिछला जन्म याद आ जाये...और सत्तर वर्ष आप जीये थे— तो उन सत्तर वर्षों में जो देखा गया था, वह एक सपना मालूम पड़ेगा या सत्य? एक सपना ही मालूम पड़ेगा— जो आया और गया। अगर एक बार पिछले जन्मों का स्मरण हो जाये, तो आप बड़ी मुश्किल में पड़ जायेंगे कि जो अभी देख रहा हूं, वह सत्य है? क्योंकि ऐसा तो बहुत बार देखा है— लेकिन सब मिट गया है; सब खो गया है।

तो एक सवाल उठ जायेगा कि जो तुम देख रहे हो, वह भी उतना ही सच है जितना वह था? वह भी एक सपने की तरह दौड़ जायेगा और मिट जायेगा। जैसे सब सपने हम तक पहुंच गये, वैसे यह सपना भी हम तक पहुंच गया है— यह अगर बोध हो जाये, तो माया का अनुभव होगा लेकिन इसके साथ दूसरा अनुभव भी होगा— एक अनुभव...कि जगत् माया है, और दूसरा...कि द्रष्टा सत्य है; दृश्य तो रोज बदल जाते हैं, हर बार बदल गये हैं— लेकिन द्रष्टा, देखने वाला वही है।

और ध्यान रहे! जब तक दृश्य सत्य मालूम होते हैं, तब तक द्रष्टा पर ध्यान नहीं जाता है; जब दृश्य एकदम असत्य हो जाते हैं, तब द्रष्टा पर ध्यान जाता है। इसलिए मैं कहता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हूं कि जाति-स्मरण का प्रयोग उपयोगी तो है, लेकिन थोड़े ध्यान में गहरे जायें और प्रयोग करें— तब। ध्यान में गहरे उतरें तो फिर जीवन को सपने की तरह देखने की क्षमता आ जाये।

१६.प्राण साधना

लाओत्से की साधना-पद्धति में भीतर एक अद्वैत में आबद्ध होने के बड़े सुगम उपाय हैं। एक उपाय की बात हम पहले करें।

लाओत्से मानता था कि तुम जो भी करो—उठो, बैठो, भोजन करो, या सोओ— जो भी करो, उसमें पूरे संयुक्त और लीन हो जाओ। अगर रास्ते पर चल रहे हो, तो चलना ही बन जाओ— इतना भी फासला मत रखो कि 'मैं चल रहा हूं'। साक्षी की जिस साधना की चर्चा हम करते रहे हैं, या कृष्णमूर्ति जिस अवेयरनेस, जागरूकता की बात करते हैं, वे भी अद्वैत पर नहीं ले जा सकेंगे—एक जगह जाकर उन्हें भी छोड़ देना होगा।

लाओत्से कहता है कि न जागरूकता, न साक्षी— वरन् एकता, लीनता। तुम जो कर रहे हो वही हो जाओ, करने वाला कोई अलग न बचे; हर क्रिया में इतनी समग्रता से एक हो जाओ कि भीतर कोई फासला न रहे। अगर भीतर का यह फासला क्रियाओं में टूटता चला जाये, तो बुद्धि और वासना के बीच, इन्द्रियों और विवेक के बीच, आत्मा और शरीर के बीच एक सेतु निर्मित हो जाता है— वे दोनों आलिंगन में आबद्ध हो जाते हैं।

इस आलिंगन को ही तन्त्र ने 'आंतरिक मैथुन' कहा है; जब भीतर की चेतना भीतर की वासना से एक हो जाती है।

बुद्धि कहा है तन्त्र ने पुरुष को, और स्त्री कहा है शरीर की प्रकृति को और जब भीतर की स्त्री भीतर के पुरुष से एक हो जाती है, तो परम समाधि फलित होती है।

लेकिन, अभी हमारे भीतर, कुछ शारीरिक व्यवस्थागत अनिवार्य फासले हो गये हैं। और जब तक वे फासले न टूट जायें, तब तक इस लीनता की साधना को साधना मुश्किल है। ये फासले यांत्रिक, मेकेनिकल हो गये हैं। और जब तक हम इन यांत्रिक व्यवस्थाओं को न तोड़ दें, नया न कर लें, तब तक केवल लीनता के प्रयोग से कुछ न होगा। अतः इन यन्त्रवत भूलों को समझ लेना जरूरी है।

श्वास का जो प्राथमिक स्रोत है, उसे जापानी भाषा में 'तान्देन' कहते हैं। हमारी भाषा में तो कोई शब्द नहीं है। अगर ठीक श्वास चलती हो, तो नाभि से दो इंच नीचे, तान्देन से श्वास का सम्बन्ध होता है। व्यक्ति जितना अस्तित्व से विच्छिन्न होगा, तान्देन से श्वास-बिन्दु उतना ही दूर हटता जायेगा। तो जितने ऊपर से आप श्वास लेंगे, उतने ही तनाव से आप भरे होंगे; और जितने नीचे-ही-नीचे से श्वास लेंगे; उतने ही विश्राम को उपलब्ध होंगे। और अगर तान्देन से श्वास लेंगे, तो तनाव बिल्कुल नहीं होगा।

अधिक विस्तार से जानने के लिए भगवान श्री की पुस्तक 'मैं मृत्यु सिखाता हूं' देखें।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बच्चे के जीवन में तनाव न होने का जो व्यवस्थागत कारण है, वह तान्देन से श्वास का चलना है। लेकिन कुछ कारण है कि हम लोगों को शिक्षा देते हैं कि पेट से श्वास मत लेना। एक तो यह पागलपन का ख्याल सारी दुनिया में फैल गया है कि छाती चौड़ी होनी चाहिए। तो छाती जितनी बड़ी करनी हो, उतनी श्वास छाती में भरनी चाहिए; उसे नीचे नहीं जाने देना।

स्त्रियां नाभि से श्वास नहीं ले पाती हैं— उसका भी एक गहरा कारण है— उनके मन में एक गलत ख्याल बैठ गया है कि स्तन सुडौल और गोल होने चाहिए।

यह सब ख्याल भीतर एक खतरनाक स्थिति को पैदा करता है— वह है ऐन्द्रिक और बौद्धिक तलों का अलगाव।

एक दूसरा महत्त्वपूर्ण कारण भी है— बच्चों को अपने शरीर का बोध सबसे पहले तब होता हैं, जब वह अपनी कामेन्द्रिय को स्पर्श करता है। लेकिन तभी मां-बाप उसे रोकते हैं। अगर बच्चा अपनी आंख, नाक छुए, तो मां बहुत प्रसन्न होती है। लेकिन जब वह जननेन्द्रिय छूता है, तो मां बहुत परेशान और बेचैन हो जाती है! और तब बच्चे को पहली दफा पता चलता है कि शरीर में कोई हिस्सा है जो छूने योग्य नहीं है। यह मां और बाप की आंखें देख कर बच्चे को पता चलता है।

इससे बच्चे की शरीर में एक भेद शुरू हो जाता है। और उस भेद के साथ ही श्वास ऊपर से चलने लगती है। उसका कारण है— क्योंकि तान्देन का जो बिन्दु है अगर उस तक श्वास जाये तो जननेन्द्रिय पर उसका असर पड़ता है। इस लिए जैसे ही हमें यह ख्याल आ गया कि जननेन्द्रिय हमारा हिस्सा नहीं है, वैसे ही हमारा तान्देन सिकुड़ जाता है, सप्रेस्ड हो जाता है। और हम डरे हुए जीने लगते हैं कि कहीं जननेन्द्रिय तक श्वास न चली जाये।

क्या आपको पता है कि रात सोते समय हर पुरुष को कम-से-कम बारह से अठारह बार जननेन्द्रिय का 'इरेक्शन', उत्थान होता है— नियमित? उसका कारण कुल इतना है कि नींद में श्वास पूरी चलती है। और पूरी चलने से तान्देन पर चोट पड़ती है। तथा तान्देन का बिन्दु और वीर्य ऊर्जा का बिन्दु निकट है, सीमांत पर है। श्वास की चोट ही वीर्य को सक्रिय करती है। अगर तान्देन तक श्वास न पहुंचे, तो नपुंसकता तक फलित हो सकती है। ताओ को मानने वाले चिकित्सकों का ख्याल है कि अनेक पुरुषों की नपुंसकता केवल श्वास के तान्देन तक न पहुंचने की वजह से होती है। और इसीलिए अक्सर पहलवान नपुंसक हो जाते हैं।

तो तान्देन से श्वास तभी चल सकती है, जब आपने अपनी कामवासना को स्वीकार किया हो। असल में जब तक आपने अपनी पूरी वासनाओं को समग्र-रूप से अंगीकार, स्वीकार न कर लिया हो, तब तक आपके भीतर अद्वैत निर्मित नहीं हो सकता है।

और एक बहुत आनन्द की अद्भुत बात है कि जैसे ही कोई व्यक्ति अपनी वासना को

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उसकी समग्रता में स्वीकार कर लेता है, वैसे ही वह वासना से मुक्त हो जाता है।

तो, लाओत्से की साधना में जो उतरना चाहते हैं, उनका पहला काम यह है कि वे श्वास को फेफड़े से लेना बन्द कर दें और नाभि से लेना शुरू करें। इसका अर्थ हुआ कि श्वास के आने और जाने के साथ आपका पेट ऊपर और नीचे गिरे तथा सीना शिथिल रहे। आप तीन सप्ताह का प्रयोग करके भी दंग रह जायेंगे कि श्वास के नाभि से चलने पर न-मालूम आपका कितना क्रोध विलीन हो गया कितनी ईर्ष्या खो गयी, कितना तनाव विलीन हो गया है! आपकी नींद गहरी हो गयी है और आपका व्यक्तित्व सन्तुलित होने लगा है।

तो पहला सूत्र है, श्वास को धीरे-धीरे नाभि पर ले आना। दूसरा, ताओ की प्राण-साधना का हिस्सा है कि 'सदा श्वास बाहर जाये', इस पर ध्यान देना है; भीतर आते श्वास पर बिल्कुल ध्यान नहीं देना है। और जब श्वास बाहर जाये, तो जितने जोर से श्वास को उलीचा जा सके, उलीच देना है। और भीतर श्वास अपनी तरफ से नहीं लेनी है; सिर्फ जितनी जाये, जाने देनी है।

तो लाओत्से का दूसरा सूत्र है— सदा श्वास को फेंकिये, लेने को भूल ही जाइये। वह तो प्रकृति स्वयं ही कर लेती है। और तीसरा सूत्र है लाओत्से का...कि जो श्वास का आना-जाना है, उसे अपने से पृथक न समझें— जब श्वास बाहर जाये तो समझें कि 'मैं बाहर चला गया' और जब श्वास अन्दर आये तो समझें 'मैं भीतर आ गया'; प्राण के साथ एक हो जायें।

अगर यह धीरे-धीरे जप की भांति आपके भीतर गूंजने लगे...कि श्वास में मैं बाहर गया, श्वास में भीतर आया— श्वास की यह सतत् क्रिया यदि जप बन जाये, तो अद्वैत फलित होता है। तो अद्वैत का अनुभव होता है।

१७. अन्तर्प्रकाश साधना

प्रकाश दिखाई नहीं पड़ता; कभी किसी ने देखा नहीं है— लेकिन हम कहते हैं— मैं प्रकाश देखता हूं— और उससे हमारा मतलब होता है कि हम वस्तुओं को देखते हैं, जो प्रकाश के अभाव में दिखाई नहीं पड़तीं।

जब कोई भी चीज दिखाई नहीं पड़ती, तो यह हमारा अनुमान होता है कि अब प्रकाश नहीं है; और जब वस्तुएं दिखाई पड़ती हैं, तो हम अनुमान करते हैं कि अब प्रकाश है। इसलिए बाह्य जगत् में भी प्रकाश एक अनुमान है।

अतः, अन्तर्प्रकाश में प्रवेश के सम्बन्ध में प्रकाश का हम क्या अर्थ लेते हैं? अगर आप अपने को अनुभव कर सकते हैं, अगर आप अपने को देख सकते हैं, तो इसका अर्थ हुआ कि प्रकाश वहां है।

यह हैरानी की बात है, लेकिन हमने कभी इस ओर ध्यान नहीं दिया— कमरा बिल्कुल

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अन्धेरा है, तो आप यह नहीं कह सकते कि वहां कुछ भी है— पर इतना आप अवश्य कहेंगे कि 'मैं हूं'। कमरे में अन्धेरे के कारण कोई भी चीज दिखाई नहीं पड़ती, लेकिन एक चीज के बारे में आपका दृढ़-निश्चय होता है—और वह है आपके होने का भाव। उसके लिए किसी प्रमाण या किसी बाह्य-प्रकाश की जरूरत नहीं है। आप जानते हैं कि आप हैं; आप अनुभव करते हैं कि आप हैं। इसलिए एक सूक्ष्म प्रकाश वहां अवश्य होना चाहिए। उससे हम अवगत न हों, यह दूसरी बात है। हम उसके प्रति बेहोश हो सकते हैं, लेकिन वह है।

इसलिए अपनी दृष्टि को अन्दर की ओर मोड़ें; सभी इन्द्रियां को बन्द कर लें, ताकि बाह्य-प्रकाश का कोई अनुभव न हो। बिल्कुल अन्धेरे में चले जायें; आंखें बन्द कर कोशिश करें भीतर देखने की। शुरू में आप निपट अन्धेरा अनुभव करेंगे। इसका कारण यह है कि आप इसके लिए अभ्यस्त नहीं हैं। लेकिन आप भीतर प्रवेश करते चले जायें। भीतर जो अन्धेरा है, उसे मात्र देखते रहें। धीरे-धीरे भीतर बहुत सारी चीजें दिखाई पड़नी शुरू हो जायेंगी। भीतर एक अन्तर्प्रकाश कार्य करने लगता है।

प्रारम्भ में यह बहुत मन्द होगा। भीतर आप अपने विचारों को देखने लगेंगे, क्योंकि विचार वहां वस्तुयें हैं। आप लड़खड़ाने लगेंगे अपने मन के इन साज-सामानों से। ये साज-सामान भीतर बहुत बड़ी तादाद में हैं। अनेकों स्मृतियां, वासनाएं, अतृप्त वासनाएं, विषाद, विचार आदि भरे पड़े हैं।

तो पहले भीतर उन अन्धेरे में प्रवेश करने की कोशिश करें। तब एक धीमा प्रकाश अनुभव में आयेगा। और वहां बहुत सारी चीजें दिखाई पड़नी शुरू होंगी। यह ठीक वैसे ही है, जैसे कोई सूर्य की तेज रोशनी में चलकर कमरे में प्रवेश करे, तो शुरू में तो कमरे में बिल्कुल अन्धेरा लगेगा, लेकिन कुछ देर बाद— आंखों के समायोजित, एडजस्ट हो जाने पर— कमरे के अन्दर की चीजें दिखाई पड़ने लगेंगी।

आंखों को व्यवस्थित होने में थोड़ा समय लगता है। अगर कोई लगातार सिर्फ नजदीक की चीजों को ही देखने में अपनी आंखों को लगाये हुए हो— जैसे कि पढ़ने, लिखने आदि में— तो वह 'अल्प दृष्टिवाला'—'शार्ट साईटेड' हो जायेगा। कारण?...आंखों का सतत उपयोग सिर्फ निकट की चीजों को देखने में करने से आंखों की यान्त्रिक व्यवस्था उसी स्थिति में थिर हो जाती है।

और तब अगर वह दूर तारों को देखने कि जब कोशिश करता है तो वह देख नहीं सकता; क्योंकि निकट की चीजों को देखते रहने से उसकी आंखों की यान्त्रिक व्यवस्था सख्त हो जाती है, अपना लचीलापन खो बैठती है।

ठीक यही बात, भीतर जब हम अपने विचारों को देखने चलते हैं, तो होती है। हम जन्मों-जन्मों से लगातार बाहर ही देखते रहे हैं, इसलिए देखने की यान्त्रिक व्यवस्था उसी स्थिति में सख्त हो गयी है। इसलिए भीतर देखने में कठिनाई होती है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पर कोशिश करें, उस अन्धेरे में देखने का प्रयास करें और जल्दबाजी न करें, क्योंकि जन्मों-जन्मों से आंखें बाहर देखने में अभ्यस्त हो गयी हैं। वे बिल्कुल भूल ही गयी हैं कि अन्दर कैसे देखा जाता है। क्योंकि आपनें उसका वैसा कभी उपयोग ही नहीं किया है।

इसलिए भीतर अन्धेरे में देखने का प्रयास करें और धैर्य न खोएं। अन्धेरे में प्रवेश करते चले जायें। और तब तीन महीने के अन्दर आप भीतर बहुत सारी चीजों को— जिन्हें आपने कभी नहीं समझा था कि वहां अन्दर हो सकती हैं— देखने में सक्षम हो जायेंगे। और तब पहली बार आपको यह जाहिर होगा कि भीतर विचार, मात्र वस्तुएं हैं।

इतना ज्ञात हो जाने के बाद— आप किसी विचार को अपनी इच्छानुसार कहीं भी रख सकते हैं। अगर आप चाहें तो बाहर भी फेंक सकते हैं। लेकिन अभी आप जिस स्थिति में हैं, उसमें आप विचारों को बाहर नहीं फेंक सकते— क्योंकि आप उन्हें पकड़ ही नहीं पाते। आप यह भी नहीं जानते कि विचार वस्तुयें हैं— जिन्हें पकड़ा जा सकता है और बाहर फेंका जा सकता है। आप नहीं जानते कि ये विचार कहां पर स्थित हैं, कहां से आते हैं।

बहुत लोग कहते हैं, 'मैं भयभीत नहीं होना चाहता हूं; मैं क्रोध करना नहीं चाहता हूं'— पर वे कुछ कर नहीं सकते; क्योंकि वे नहीं जानते कि यह क्रोध कहां से आ रहा है; कहां पर संगृहीत है; कहां हैं इसकी जड़ें।

सभी विचार वस्तुमात्र हैं— एक संग्रह है। इसलिए, हल्के प्रकाश में जब आपको भीतर विचार, इच्छाएं,क्रोध, वासनायें, ईर्ष्या आदि दिखाई पड़नी शुरू हों, तो उनसे लड़ें मत, सिर्फ उन्हें देखते रहें। क्योंकि सिर्फ देखते रहने से आप और होश से भरेंगे। भीतर देखते रहें—और मात्र देखते रहने से भीतर प्रकाश बढ़ता चला जायेगा। प्रकाश भीतर मौजूद है, सिर्फ आपकी दृष्टि समायोजित होना है। और मात्र देखते रहने से ही यह दृष्टि समायोजित हो पायेगी— उस विशाल प्रकाश को देखने में समर्थ हो पायेगी।

और जब उस तीव्र प्रकाश में भीतर की सारी चीजें स्पष्ट हो जाती हैं, भीतर का जब कोई कोना अन्धेरा नहीं रहता है, तब आप अपने मन के मालिक हो जाते हैं। तब आप किसी चीज को भीतर से बाहर कर सकते हैं। और चीजों को अपने ढंग से सुव्यवस्थित कर सकते हैं। जब आप अपने मन के मालिक हो जायेंगे, तब आपको स्पष्ट होगा कि यह प्रकाश कहां से आ रहा है, इसका स्रोत कहां है।

सबसे पहले आपको प्रकाशित वस्तुओं का ज्ञान होगा और आप अपनी मनस-वस्तुओं के मालिक हो जायेंगे। और उसके बाद आपको प्रकाश के उद्गम का आभास मिलने लगेगा। अभी भी आप प्रकाश को नहीं देखेंगे, बल्कि उस सूर्य को देखेंगे जिससे प्रकाश आ रहा है। सर्वप्रथम आप मन की वस्तुओं से भिज्ञ होंगे और आपका मन उत्तरोत्तर साफ होता जायेगा। और तब आप प्रकाश के उद्गम को जान पायेंगे। ठीक मनस के केन्द्र में ही वह स्रोत है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

और तब इस स्रोत में प्रवेश कर जायें। अब आप अपने मन को भूल सकते हैं, अब आप इसके मालिक हैं। अब सिर्फ मन को कहें— 'रुक जाओ'— और मन ठहर जायेगा। इस मालकियत के लिए होश की आवश्यकता है। जब मन पर मालकियत हो गयी, तब आप उस प्रकाश-उद्गम तक जायें और उसमें प्रवेश कर जायें। इस प्रवेश से पूरे जीवन पर ही आपकी मालकियत हो जाती है। स्वयं चेतना पर ही आपकी मालकियत हो जाती है। जो इस प्रकाश-स्रोत में एक बार स्नान कर लेता है, वह अपनी शाश्वतता को देख पाता है। इस क्षण में आपका सम्पूर्ण भूत एवं भविष्य आपके सामने होता है। यह शाश्वत का क्षण है। यह अंतःप्रकाश में प्रवेश बड़ा घबराने वाला भी है; क्योंकि इसमें प्रवेश के साथ ही, जो भी आप अपने को अभी तक समझे हुए हैं, वह सब मिट जायेगा। आपका अहंकार, आपका व्यक्तित्त्व—सब मिटेगा क्योंकि वे सब आपके अस्तित्व पर गंदगियों के आवरण हैं। सिर्फ शुद्ध अस्तित्व— जिसका न कोई नाम है और न रूप— बचेगा।

इस प्रकाश में प्रवेश के बाद परमात्मा में प्रवेश है। इसी बिन्दु तक आपके प्रयास की आवश्यकता है। उसके बाद तो आप प्रभु-प्रसाद के क्षेत्र में प्रविष्ट होते हैं। और परमात्मा की कोशिश ही काम करने लगती है।

१८. अन्तर्वाणी साधना

स्वधर्म! ...कैसे पहचानें क्या है स्वधर्म? पहचान हो सकती है । सूक्ष्म होंगे पहचान के सूत्र।

पहली बात —

अगर आप दुखी हैं जीवन में, तो पक्का समझ लेना कि आप स्वधर्म से च्युत हुए हैं। स्वधर्म से च्युत हो रहे हैं — क्योंकि जहां स्वधर्म की यात्रा होती है, वहीं आनन्द फलित होता है, शान्ति फलित होती है। अशान्त हों यदि, जान लेना कि परधर्म के पीछे चल रहे हैं।

रुक जाना, पुनः सोच लेना — रि-कन्सिडर कर लेना कि जो यात्रा चुनी, जो कर रहे हैं, उससे दुःख, पीड़ा और अशान्ति बढ़ती है, तो निश्चित ही वह मार्ग मेरा नहीं है।

दूसरी बात —

अगर कोई स्वधर्म के साथ चल रहा हो, तो उसके जीवन में स्वीकार का भाव बढ़ता जायेगा; वह हर स्थिति में अपने को सन्तुष्ट पायेगा।

तीसरी बात—

दैनंदिन कामों में कभी पता नहीं चलता कि स्वधर्म क्या है, परधर्म क्या है। स्वधर्म का पता अंतःवाणी के अतिरिक्त और कहीं से नहीं चलता है।

विस्तार के लिए देखें—'दी अल्टीमेट एल्केमी, भाग-१

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पहले मैंने दो लक्षण की बातें कहीं कि इसे आप पता लगा लेना कि जिन्दगी ठीक मार्ग जा रही है या नहीं। और तीसरे से मैं आपके स्वधर्म के केन्द्र को ही छू लेने की सूचना देता हूं। आपको पता नहीं— लेकिन आपकी अंतरात्मा को पता है कि क्या है आपका स्वधर्म।

तो घन्टेभर के लिए, चौबीस घन्टे में बन्द कर लेना बाहर की दुनिया को — भूल जाना, छोड़ देना बाहर का बाहर, अपने भीतर डुबकी लगा लेना — मौन; सिर्फ भीतर ध्यान को मोड़कर सुनने की कोशिश करना कि भीतर कोई बोलता है? कोई आवाज है?

पहले बहुत-सी आवाजें सुनाई पड़ेंगी और पहचानने में कठिनाई न होगी कि बाहर की आवाजें हैं। मित्रों के शब्द याद आयेंगे, शत्रुओं के शब्द – दुकान, बाजार, मंदिर, शास्त्र — सब याद आयेंगे। ...पहचान सकेंगे भलीभांति कि बाहर के सुने हुए हैं। छोड़ दें, ... उन पर ध्यान न दें, .. और भीतर उतरें,... और प्रतीक्षा करते रहें।

अगर तीन महीने कोई सिर्फ एक घन्टा चुप बैठकर प्रतीक्षा कर सके धैर्य से, तो उसे भीतर की आवाज का पता चलना शुरू हो जायेगा। और एक बार भीतर का स्वर पकड़ लिया जाये, तो आपको फिर जिन्दगी में किसी से सलाह लेने की जरूरत नहीं पड़ेगी। जब भी जरूरत हो, आंखें बन्द करें और भीतर से सलाह ले लें। ...पूछ लें भीतर से कि क्या करना है। और स्वधर्म की यात्रा पर आप चल पड़ेंगे। क्योंकि भीतर से स्वधर्म की ही आवाज आती है; भीतर से कभी परधर्म की आवाज नहीं आती।

जो व्यक्ति अपने भीतर की इनर-वायस, अंतर्वाणी की नहीं सुन पाता, वह व्यक्ति कभी स्वधर्म के तप को पूरा नहीं कर पायेगा। लेकिन सब हो सकता है, सबके पास वह अन्तर्वाणी का स्रोत है, जन्म के साथ ही वह स्रोत है, बस हमें उसका स्मरण नहीं है। हमने कभी उसे जगाया नहीं। हमने कभी कानों को प्रशिक्षित नहीं किया कि उस सूक्ष्म आवाज को पकड़ लें। जीजस, बुद्ध या महावीर, भीतर की आवाज से जीते हैं।

इसमें एक बात और याद दिला दूं... कि भीतर की आवाज एक बार सुनाई पड़नी शुरू हो जाये, तो आपको अपना गुरु मिल गया। वह गुरु भीतर बैठा हुआ है। लेकिन हम सब बाहर गुरु को खोजते फिरते हैं और गुरु भीतर बैठा हुआ है। परमात्मा ने प्रत्येक को वह विवेक, वह अन्तकरण, वह कन्साइन्स, वह अन्तर की वाणी दी है, जिससे अगर हम पूछना शुरू कर दें, तो उत्तर मिलने शुरू हो जाते हैं। और वे उत्तर कभी गलत नहीं होते।

१९. संयम साधना—१

कृष्ण ने दो निष्ठाओं की बात कही है — एक वे हैं जो इन्द्रियों का संयम कर लेते हैं — विषयों की तरफ इन्द्रियों की जो यात्रा है, उसे विदा कर देते हैं। ... यात्रा ही विदा कर देते हैं। दूसरे वे हैं जो विषयों को भोगते रहते हैं, फिर भी लिप्त नहीं होते। इन दोनों की साधनायें अलग-अलग हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जो इन्द्रियों को विषयों तक जाने ही नहीं देते, वे इंद्रियों और विषयों के बीच में जो सेतु है, ब्रिज है, उसे ही तोड़ देते हैं। दूसरे इन्द्रियों को विषयों तक जाने देते हैं। इन दो सेतुओं का जो तोड़ना है, उसे ख्याल में ले लेना जरूरी है। दोनों ही स्थितियों से एक ही परम-अवस्था उपलब्ध होती है।

इन्द्रियां विषयों की तरफ भागती ही रहती हैं। रास्ते पर गुजरे हैं आप — सुन्दर भवन दिखाई पड़ गया है, सुन्दर चेहरा दिखाई पड़ गया है, सुन्दर कार दिखाई पड़ गयी है — आपको पता ही नहीं चलता कि जब आपने कहा 'सुन्दर है' — तभी इन्द्रियां दौड़ चुकीं।

ऐसा नहीं कि 'सुन्दर है' — ऐसा जानने के बाद इन्द्रियां दौड़ना शुरू करतीं हैं; इन्द्रियां दौड़ चुकी होती हैं । तब उनका निष्कर्ष, कन्क्लूजन है यह कि 'सुन्दर है'।

'सुन्दर' हमारी निष्पत्ति है, कारण नहीं। 'सुन्दर' की वजह से आकर्षित होता है — ऐसा नहीं, बल्कि आकर्षित होने की वजह से 'सुन्दर' का निष्कर्ष लेता है। यह हमारा बौद्धिक निष्कर्ष है। इन्द्रियों ने तो अनुभव किया है 'आकर्षण' का। बुद्धि ने निर्णय लिया है 'सुन्दर' का। इन्द्रियां पहुंच चुकीं, इन्द्रियों ने स्पर्श कर लिया।

इन्द्रियों की गति सूक्ष्म है। ऐसा नहीं कि जब आप किसी के शरीर को छूते हैं, तभी इन्द्रियां छूती हैं; इन्द्रियों के छूने के अलग-अलग मार्ग हैं। आंख देखती है और छू लेती है।

देखना आंख के छूने का ढंग है; सुनना कान के छूने का ढंग है। ये सब छूने के ढंग हैं; सब इन्द्रियां छूती हैं।

इन्द्रिय का अर्थ है, स्पर्श की व्यवस्था — उपकरण । सूक्ष्म स्पर्श दूर से हो जाते हैं, स्थूल स्पर्श पास से करने पड़ते हैं।

इससे विपरीत काम भी चलता है पूरे समय — शरीर से सबको नहीं छुआ जा सकता। लेकिन एक परफ्यूम डालकर, बड़े सूक्ष्म तल पर गन्ध से सब-कुछ छुआ जा सकता है।

आवाज, गन्ध, ध्वनि, दृश्य, दर्शन — वे सब छूते हैं। जब आप सज-संवर के घर से निकलते हैं, तब आप दूसरों की आंख से छुए जाने का निमंत्रण लेकर निकल रहे हैं। अगर कोई आंख से न छुए, तो आप बड़े उदास लौटेंगे। तो यह दोहरा काम चल रहा है, छूने का—,छुए जाने का। प्रतिपल इस काम में संलग्न हैं। आपको पता भी नहीं चलता है कि यह हो रहा है। यह ख्याल में भी नहीं आता।

इन्द्रियां पूरे समय स्पर्श को लालायित हैं, स्पर्श देने को और लेने को आतुर हैं।

तो जिस व्यक्ति को इन्द्रियों को विषयों तक जाने से रोकना है, उसे इन्द्रियों की इस सूक्ष्म स्पर्श-व्यवस्था के प्रति जागरूक होना पड़ेगा। यह अत्यन्त सूक्ष्म व्यवस्था है। इतनी शीघ्रता से घटित होता है इन्द्रियों का स्पर्श कि आपको पता ही तब चलता है, जब घटित होता है। इसके प्रति जागना पड़ेगा, इसे देखना पड़ेगा। इसको स्मरण रखना पड़ेगा पूरे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वक्त कि क्या हो रहा है। इसके प्रति होश से भरना पड़ेगा कि 'तुम्हारी आंख सिर्फ देख रही है या स्पर्श भी कर रही है?'

इन दोनों में फर्क है। अगर सिर्फ देखा हो, तो पीछे कोई लकीर नहीं छूटेगी; और अगर स्पर्श भी किया हो,तो पीछे लकीर छूटेगी। अगर सिर्फ देखा हो, तो लौटकर नहीं देखना पड़ेगा; तो स्मृति नहीं बनेगी; अगर स्पर्श भी किया हो, तो स्मृति बनेगी। अगर सिर्फ देखा हो, तो कल भी देखूं, ऐसी आकांक्षा नहीं जगेगी; अगर स्पर्श किया — फिर - फिर देखूं — ऐसी आकांक्षा जगेगी; अगर स्पर्श किया — फिर-फिर देखूं — ऐसी आकांक्षा जगेगी।

तो आंख से सिर्फ देखने का काम लें; कान से सिर्फ सुनने का; हाथ से सिर्फ छूने का — स्पर्श करने का नहीं।

जो योगी इन्द्रिय को विषय से तोड़ता है, वह विषय और इन्द्रिय के बीच स्पर्श को संस्पर्श तोड़ता है। देखना तो नहीं तोड़ा जा सकता, देखने को तोड़ने से कुछ फर्क नहीं पड़ता — आंख से स्पर्श विदा होना चाहिए।

...लेकिन कब होगा? जब आप जागेंगे तो स्पर्श विदा हो जायेगा।

क्या करेंगे? जब भी देखें, तब होश से यह भी देखें कि 'स्पर्श हो रहा है कि नहीं? सिर्फ देख रहे हैं? मैंने स्पर्श किया कि देखा?

और जब आप पायेंगे कि दिखाई पड़ने लगा 'स्पर्श किया', तभी आपको अनुभव हो जायेगा कि इन्द्रियां जहां-जहां स्पर्श करती हैं , वहीं-वहीं बन्धन को निर्मित करती हैं जहां-जहां स्पर्श नहीं करतीं, वहां-वहां बन्धन निर्मित नहीं होता। संयमी का अर्थ है, जो इन्द्रियों से उपकरण का काम लेता है — भोग का नहीं। संयमी का अर्थ है — जो इन्द्रियों से भोगता नहीं, केवल उपयोग लेता है। भोग बन्धन है उपयोग बन्धन नहीं है।

इसी स्पर्श की सूक्ष्म व्यवस्था को स्मरणपूर्वक देखने से व्यवस्था क्रमशः टूटती चली जाती है और इस तरह से पहली घटना घट सकती है संयम की — अर्थात् विषयों तक इन्द्रियों का रस तिरोहित हो जाता है। ऐसा संयमी व्यक्ति परम सत्ता को उपलब्ध हो जाता है।

२०. संयम साधना—२

कृष्ण कहते हैं — भोग करते हुए भी, भोग में होते हुए भी — स्पर्श करते हुए भी ज्ञानीजन बाहर हो जाते हैं।

इसकी प्रक्रिया और भी सूक्ष्म होगी क्योंकि यह एक प्रतिशत के लिए है। अभी जो मैंने कहा, वह निन्यानबे प्रतिशत के लिए है।

...फिर क्या करें ?... कैसे सेतु टूटेगा? जब भोग करते हुए भी — पूरा भोग करते हुए भी जो भोग के क्षण में जाग सकता है... भोग के क्षण में!

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भोजन कर रहे हैं, ...डूब रहे हैं, ...स्वाद की तरंगें बह रही हैं, स्वाद में उतर रहे हैं, ठीक उसी क्षण में स्वाद के प्रति जो जाग जाये — देखे वि डूब रहा है, उतर रहा है — भागे नहीं, तोड़े नहीं, स्वाद पूरी तरह लेते हुए सिर्फ होश से भर जाये — तो अचानक दिखाई पड़ेगा कि 'मैं भोक्ता नहीं हूं — भोग है, मैं द्रष्टा हूं।' द्रष्टा का भोक्ता-भाव गिर जाता है।

संगीत को सुनेगा, कान गद्गद् होंगे, आनन्दातिरेक में नाचने लगेंगे — कान पूरी तरह रसमग्न हो जायेगा, लेकिन भीतर जो चेतना है, वह जागकर देखेगी 'ऐसा हो रहा है' — 'दिस इज हैपनिंग'; और ऐसे स्मरण से कि 'ऐसा हो रहा है' —तत्काल कोई गहरा सेतु टूट जाता है, जहां से भीतर की चेतना भोक्ता नहीं रह जाती, सिर्फ द्रष्टा रहती है। इस मार्ग से भी ज्ञानीजन उस परात्पर सत्य को उपलब्ध हो जाते हैं।

इस दूसरी साधना में एक कठिनाई है। डर है कि कहीं हम अपने को धोखा दे लें; डिसेप्शन का डर है, आत्म-वंचना का डर है।

एक आदमी कह सकता है कि 'ठीक है,हम तो वेश्या के घर नृत्य देखते हैं साक्षी रहते हैं; रस लेते हैं पूरा, लेकिन ज्ञानीजन की तरह लेते हैं।'

परीक्षा बहुत कठिन है। लेकिन परीक्षायें भी निकाली गयी हैं; तन्त्र ने बहुत सी परीक्षायें निकालीं। एक अद्भुत परीक्षा तन्त्र ने निकाली है, वह मैं आपसे कहूं।

वह परीक्षा यह थी कि जो व्यक्ति कहता है कि मैं भोगते हुए भी तटस्थ होता हूं, द्रष्टा होता हूं —तन्त्र ने उसे कहा कि तुम शराब पियो और शराब पीते हुए तुम होश में रहो। और हम शराब पिलाए चले जायेंगे, तुम होश में रहो। अगर घटना घट गयी है साक्षी की, द्रष्टा की — भोगते हुए की अवस्था में — तो शराब में भी होश कायम रहना चाहिए। क्योंकि नशा करेंगी इन्द्रियां, तुम जागे रहना; तुम मत सो जाना।

तन्त्र ने अद्भुत प्रक्रिया निकाली नशे की जब गांजा, अफीम, शराब — इन सबका कोई असर नहीं हुआ साधक पर — वह जागा ही रहा उतने ही होश में, जितने होश में वह बिना नशे का था; तब सांप से भी जीभ पर काटने के प्रयोग किये गये और उसमें भी वह जागा रहा।

यह आमतौर पर हमें कठिन मालूम पड़ता है कि साधु संन्यासी गांजा पीये, शराब पीये, पर वह कभी गहरी परीक्षा थी। अब वह रोज सांझ को गांजा पी रहे हैं!

लेकिन यह दूसरे वर्ग की ही परीक्षा है, पहले वर्ग की नहीं।

२१. शान्ति-सूत्र—नियति की स्वीकृति

जीवन में छोटे-बड़े दुख के कारण कभी-कभी मन अशान्त, निराश और बेचैन बन जाता है। तो संसार में ही रहकर मन सदा शान्त, प्रसन्न और उत्साही कैसे रखें?

नियति की बात अगर ठीक-से समझ लें तो मन शान्त हो जायेगा। और कोई भी उपाय मन को शान्त करने का नहीं है; और सब उपाय ऊपरी-ऊपरी हैं। उनसे थोड़ी-बहुत राहत

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मिल सकती है, लेकिन मन शान्त नहीं हो सकता। लेकिन नियति की बात थोड़ी कठिन है, समझ में थोड़ी मुश्किल से पड़ती है।

मन अशान्त होता है, नियति का विचार कहेगा—उस अशान्ति को स्वीकार कर लें — उसके विपरीत शान्त होने की कोशिश मत करें । मन उदास है, नियति का विचार कहेगा — उदासी को स्वीकार कर लें, प्रफुल्लित होने की चेष्टा न करें। क्योंकि असली अशान्ति, अशान्ति के कारण नहीं, अशान्ति को दूर हटाने के विचार से पैदा होती है; असली उदासी, उदासी से नहीं — 'कैसे मैं प्रफुल्लित हो जाऊं' — इस धारणा से, इस विचार से, इस आकांक्षा से पैदा होती है।

उदासी को स्वीकार कर लें, और आप पायेंगे शीघ्र ही कि उदासी विलीन हो गयी है। उसकी स्वीकृति में ही उसका अन्त है।

'कैसे दुखी न हों' — यह न पूछें; दुखी हैं, दुख को स्वीकार कर लें । वह भाग्य, वह नियति, वह है।

उससे लड़ें मत, उससे सब लड़ाई छोड़ दें। उसके पार जाने की आकांक्षा भी छोड़ दें। उससे विपरीत की मांग भी छोड़ दें। उसे स्वीकार कर लें कि यह मेरी नियति, यह मेरा भाग्य है — मैं दुखी हूं, बात यहां पूरी हो गयी। दुख से राजी हो जायें और फिर देखें कि दुख कैसे टिक सकता है। अशान्ति को स्वीकार कर लें और आप शान्त हो जायेंगे।

हमारी अशान्ति अशान्ति नहीं है, हमारी अशान्ति शान्ति की चाह से पैदा होती है। इसलिए जो लोग शान्ति के लिए बहुत आकांक्षी हो जाते हैं, उनसे ज्यादा अशान्त कोई भी नहीं होता। जिस दिन से आपको ख्याल हो जाता है कि शान्त कैसे होऊं, उस दिन से आपकी अशान्ति और बढ़ जाती है। क्योंकि अशान्ति तो है ही, अब एक नयी अशान्ति भी शुरू हो गयी... कि शान्त कैसे हो जाऊं।

और अशान्त आदमी कैसे शान्त हो सकता है? और अशान्त आदमी पूजा भी करेगा तो उसकी अशान्ति ही उसकी पूजा से त्रकट होगी। और अशान्त आदमी ध्यान भी करेगा, तो उसका ध्यान भी उसकी अशान्ति से ही निकलेगा। अशान्त आदमी मन्दिर भी जायेगा तो अपनी बेचैनी को साथ ले जायेगा। अशान्त गीता भी पढ़ेगा, तो करेगा क्या? अशान्ति से अशान्ति ही निकल सकती है। इसलिए आप कुछ भी करें, करेगा कौन? वह जो अशान्त है, वही कुछ करेगा।

ध्यान रहे, एक बहुत मनोवैज्ञानिक आधारभूत नियम है... कि अगर आप अशान्त हैं, तो आप जो भी करेंगे, अशान्ति उससे बढ़ेगी। कौन करेगा?

अशान्त आदमी कुछ करेगा — वह और अशान्ति को दो-गुनी कर लेगा, तीन-गुनी कर लेगा।

ऐसा समझें कि एक लोभी आदमी है — और वह लोभ छोड़ने की कोशिश कर रहा है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

...वह करेगा क्या? यह लोभ छोड़ने की कोशिश भी लोभ से ही निकलेगी; वह लोभी आदमी है! तो अगर कोई उसको विश्वास दिला दे कि अगर वह इतना दान करता है, तो स्वर्ग में उसे भगवान के मकान के बिल्कुल पास मकान मिल जायेगा — अगर यह पक्का हो जाये, तो वह दान कर सकता है। मगर यह दान लोभ से निकलेगा, स्वर्ग में जगह बिल्कुल निश्चित हो जाये — यह लोभ — तो दान कर सकता है। मगर यह दान लोभ के विपरीत नहीं है, लोभ का हिस्सा है।

लोभी आदमी क्या करेगा? जो भी करेगा, वह लोभ के कारण ही कर सकता है। क्रोधी आदमी क्या करेगा? वह जो भी करेगा, क्रोध के कारण ही कर सकता है। आप जो हैं, उसके रहते आप जो भी करेंगे, वह आपसे ही निकलेगा। और अगर नीम से पत्ता निकलेगा, तो वह कड़वा होगा। और आपसे जो पत्ता निकलेगा वह आपके ही स्वाद वाला होगा।

नियति का विचार यह करता है कि आप कुछ करें मत — आप कर नहीं सकते कुछ; आप सिर्फ राजी हो जायें।

इसका प्रयोग करके देखें। अशान्ति आयी है बहुत बार — और आपने शान्त होने की कोशिश की और अब तक हो नहीं पाये; इस दूसरे प्रयोग को करके देखें — अशान्ति आये, स्वीकार कर लें कि 'मैं अशान्त हूं, मैं आदमी ऐसा हूं कि मुझे अशान्ति ही मिलेगी; मैंने ऐसा कर्म किया होगा कि मुझे अशान्ति मिल रही है; नियति में अशान्ति का ही पात्र हूं मैं' — इसे स्वीकार कर लें; इस अशान्ति से रत्ती-मात्र संघर्ष न करें।

...क्या होगा? जैसे ही आप स्वीकार करते हैं, अशान्ति तिरोहित होनी शुरू हो जाती है। क्योंकि स्वीकार का भाव ही उसकी मृत्यु बन जाता है। जिस चीज को हम स्वीकार कर लेते हैं, उसके हम पार हो जाते हैं। अशान्त हैं, अशान्ति को स्वीकार कर लें — लड़ें मत; फिर देखें क्या होता है। स्वीकृति क्रान्तिकारी तत्त्व है। और जिस बात को हम स्वीकार कर लेते हैं, उससे छुटकारा उसी क्षण शुरू हो जाता है।

हमारा उपद्रव क्या है? सुख को हम पकड़ते हैं, दुःख को हम पकड़ते नहीं हैं; दुःख से हम बचना चाहते हैं। ... सुख कहीं छूट न जाये, इस कोशिश में होते हैं। और हमें पता नहीं कि सुख और दुःख एक ही सिक्के के पहलू हैं।

तो जब हम सुख को पकड़ते हस, तब हमने दुःख को हम पकड़ लिया; वह उसी का छिपा हुआ पहलू है। तो हम उल्टा काम कर रहे हैं; सुख पकड़ना चाहते है, दुःख को हटाना चाहते है। यह नहीं होगा। या तो दोनों के लिए राजी हो जायें। दोनों हालत में आपके जीवन मे क्रांति हो जायेगी।

लेकिन सुख-दुःख तो हमारी समझ में आ जाते हैं, पर जब कोई आ जाता है — और कहता है — 'शान्ति-अशान्ति'? तो लगता है यह कोई दूसरी बात कर रहा है।

बात वही है; वही-के-वही सिक्के हैं, नाम बदल गये हैं। आप शान्ति चाहते हैं, इसलिए

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आपको अशान्त होना पड़ेगा; क्योंकि वह दूसरा हिस्सा कौन स्वीकार करेगा? आप शान्ति पा लेंगे तो अशान्ति कौन पायेगा? आधा हिस्सा कहां जायेगा? और सिक्के के दो पहलू अलग नहीं किये जा सकते। आप अशान्ति को भी राजी हो जायें, अगर शान्ति चाहते हैं, तो दोनों से राजी हो जायें।

दोनों के लिए राजी होने में ही क्रान्ति घट जाती है। क्योंकि साधारणतया मन दोनों के लिए राजी नहीं होता, एक के लिए राजी होता है। मन की तरकीब यह है कि आधे को पकड़ो, आधे को छोड़ो। यही मन का द्वन्द्व है; यही उसका कष्ट है। जब आप दोनों के लिए राजी हो गये, आप मन के पार हो गये। या दोनों को छोड़ दें या दोनों को पकड़ लें — दोनों एक ही बात है।

जगत में दो उपाय हैं, दो विधियां हैं — परम अनुभूति को पाने की दो विधियां है — दोनों को छोड़ दें— यह संन्यासी का मार्ग है। दोनों को पकड़ लें— यह गृहस्थ का मार्ग है। दोनों का परिणाम एक है, क्योंकि मन की तरकीब है एक को पकड़ना और एक को छोड़ना। दोनों को छोड़ें — तो भी मन छूट जाता है। क्योंकि मन आधे के साथ जी सकता है।

ये दो उपाय हैं—या तो दोनों छोड़ दें—सुख भी, दुःख भी; शान्ति भी, अशान्ति भी। फिर आपको कोई अशान्त न कर सकेगा; या दोनों पकड़ लें। दोनों पकड़ना 'सहज-योग' है। इन मित्र ने यही पूछा है कि घर में, संसार में रहते हुए कैसे शान्ति पाऊं?

पहली बात

शान्ति पाने की कोशिश मत करें, अशान्ति को स्वीकार कर लें—आप शान्त हो जायेंगे। फिर दुनिया में कोई आपको अशान्त नहीं कर सकता। अगर मैं अशान्ति के लिए राजी हूं,कौन मुझे अशान्त कर सकता है? अगर मैं गाली के लिए राजी हूं, तो कौन मेरा अपमान कर सकता है? मैं गाली के लिए राजी नहीं हूं, इसलिए कोई मेरा अपमान कर सकता है। मैं अशान्ति के लिए राजी नहीं हूं इसलिए कोई भी अशान्त कर सकता है।

अगर हम ठीक-से मन की प्रक्रिया को समझ लें, तो मन की प्रक्रिया को समझकर जीवन बदल जाता है। प्रक्रिया यह है कि मन हमेशा चीजों को दो में तोड़ लेता है—मान-अपमान, सुख-दुःख, शान्ति-अशान्ति, संसार-मोक्ष—दो में तोड़ लेता है और कहता है—एक नहीं चाहिए, अरुचिकर है; और एक चाहिए, वह रुचिकर है—बस, यह मन का खेल है।

इस मन से बचने के दो उपाय हैं—या तो दोनों के लिए राजी हो जायें—मन मर जायेगा, या दोनों को छोड़ दें—तो भी मन मर जायेगा। जो आपके लिए अनुकूल पड़े, वैसा कर लें—अन्यथा आपके शान्त होने का फिर कोई उपाय नहीं है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जब तक आप शान्त होना चाहते हैं, तब तक शान्त न हो सकेंगे। जब तक आप सुखी होना चाहते हैं, दुःख आपका भाग्य होगा;और जब तक मोक्ष के लिए पागल हैं, संसार आपकी परिक्रमा होगी। दोनों के लिए राजी हो जायें—मांग ही छोड़ दें,—कह दें, 'जो होता है, मैं राजी हूं'।

इसका थोड़ा प्रयोग करके देखें—चौबीस घन्टे, ज्यादा नहीं। लड़ने का प्रयोग तो आप हजारों जन्मों से कर रहे हैं, एक चौबीस घण्टे तय कर लें कि आज सुबह छह बजे से कल सुबह छह बजे तक जो भी होगा, उसको मैं स्वीकार कर लूंगा; जहां भी हो विरोध, द्वन्द्व खड़ा नहीं करूंगा।

करके देखें, चौबीस घण्टे में आपको जिन्दगी में एक नयी हवा का प्रवेश हो जायेगा। जैसे कोई झरोखा अचानक खुल गया और ताजी हवा आपकी जिन्दगी में आनी शुरू हो गयी। फिर ये चौबीस घण्टे कभी खत्म न होंगे। एक दफा इसका अनुभव हो जाये, फिर आप इसमें गहरे उतर जायेंगे।

कोई विधि नहीं है शांत होने की, शांत होना जीवन-दृष्टि है। कोई मेथड नहीं होता कि भगवान का नाम जप लिया और शांत हो गये। अशांति को स्वीकार कर लें, दुःख को स्वीकार कर लें, मृत्यु को स्वीकार कर लें, फिर आपकी कोई मृत्यु नहीं है।

जिसे हम स्वीकार कर लेते हैं, उसके हम पार हो जाते हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. साधना सूत्र

भगवान श्री रजनीश के साधकों को लिखे गये ध्यान-साधना-संबंधी २१ पत्र

१. तीन सूत्र—साक्षी साधना के
२. चेतना के प्रतिक्रमण का रहस्यसूत्र
३. निद्रा में जागरण की विधि— जागृति में जागना
४. ब्रह्म का मौन संगीत
५. सुनने की कला
६. शरीर में घनिष्टता से जीने का आनंद
७. सजग होकर स्वप्न देखना—एक ध्यान
८. स्मरण रखो एक का
९. ध्यान—मृत्यु पर
१०. स्वयं को पाना हो तो दूसरों पर ज्यादा ध्यान मत देना
११. अदृश्य के दृश्य और अज्ञात के ज्ञात होने का उपाय—ध्यान
१२. जीवन नृत्य है
१३. स्वयं की कील
१४. स्वीकार से दुख का विसर्जन
१५. अवलोकन—वृत्तियों की उत्पत्ति, विकास व विसर्जन का
१६. क्रोध के दर्शन से क्रोध की ऊर्जा का रूपांतरण
१७. काम-ऊर्जा का रूपांतरण—संभोग में साक्षीत्व से
१८. काम-वृत्ति पर ध्यान
१९. विचारों के पतझड़
२०. आनंदातिरेक और भगवत्-मादकता का मार्ग
२१. संवेदनशीलता बढ़ाने का प्रयोग

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

साधना सूत्र

यहा प्रस्तुत हैं भगवान श्री के विभिन्न साधकों को संकेत कर व्यक्तिगत रूप से लिखे गये साधना-सम्बन्धी इक्कीस पत्र।

ये पत्र "प्रेम के फूल, ढाई आखर प्रेम का, अन्तर्वीणा, पद घुंघरू बांध, तत्वमसि तथा टरनिंग इन, गेटलेस गेट, दी साइलेंट म्यूजिक, व्हाट इज मेडीटेशन" आदि विविध पत्र-संकलनों से चुने गये हैं।

इन पत्रों में साधना सूत्रों की ओर सूक्ष्म इशारे हैं।

१. तीन सूत्र—साक्षी-साधना के

साक्षी-भाव की साधना के लिए इन तीन सूत्रों पर ध्यान दो—

१. संसार के कार्य में लगे हुए श्वास के आवागमन के प्रति जागे हुए रहो। शीघ्र ही साक्षी का जन्म हो जाता है।

२. भोजन करते समय स्वाद के प्रति होश रखो। शीघ्र ही साक्षी का आविर्भाव होता है।

३. निद्रा के पूर्व जब कि नींद आ नहीं गयी है और जागरण जा रहा है—सम्हलो और देखो। शीघ्र ही साक्षी पा लिया जाता है।

२. चेतना के प्रतिक्रमण का रहस्य-सूत्र

अंधकार बाहर ही है। भीतर तो सदा ही आलोक है। ध्यान बहिर्गामी है तो रात्रि है। ध्यान अन्तर्गामी बने तो रात्रि दूर हो जाती है, और सुबह का जन्म हो जाता है। बाहर से हटाएं मन को। मुड़ें भीतर की ओर। शब्द से न रहें—मौन हो। विचार से विश्राम लें—शून्य हो। बाह्य को भूलें—और स्मरण करें उसका जो भीतर है। जब भी समय मिले — चेतना की धारा को भीतर की ओर ले चलें। सोते समय—सोने के पूर्व आंखें बन्द करें और भीतर देखें। जागते समय—ज्ञात हो कि नींद टूट गयी है तो आंखें न खोलें—पहले देखें भीतर। और धीरे-धीरे चेतना के क्षितिज पर सूर्योदय हो जायेगा। और जिसके भीतर प्रकाश है, फिर उसके बाहर भी अन्धकार नहीं रह जाता है।

३. निद्रा में जागरण की विधि : जागृति में जागना

जागृति में ही जागें। निद्रा या स्वप्न में जागने का प्रयास न करें। जाग्रत में जागने के परिणाम स्वरूप ही अनायास निद्रा या स्वप्न से भी जागरण उपलब्ध होता है। लेकिन उसके लिए करना कुछ भी नहीं है। कुछ करने से उसमें बाधायें ही पैदा हो सकती हैं। निद्रा तो जागरण का प्रतिफलन,है। जो हम जागते में हैं, वही हम सोते में हैं। यदि हम जागते में

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ही सोये हुए हैं, तो निद्रा भी निद्रा है। जागते में विचारों का प्रवाह ही सोते में स्वप्नों का जाल है। जागने में जागते ही निद्रा में भी जागरण का प्रतिफलन शुरू हो जाता है। जागते में विचार नहीं तो फिर सोते में स्वप्न भी मिट जाते हैं।

४. ब्रह्म का मौन-संगीत

ध्वनि से ध्वनिशून्यता में जाना मार्ग है। धीरे-धीरे 'ओऽम्-जैसी' ध्वनि का सुर उच्चार करो। और जैसे ध्वनिशून्यता में प्रवेश करे वैसे ही तुम भी कर जाओ, या किन्हीं दो ध्वनियों के अन्तराल में ठहरो। और तुम स्वयं ध्वनिशून्यता हो जाओगे। या, एक झरने की अनवरत ध्वनि में नहाओ—या किसी अन्य की। या, कानों में अंगुलियां डालकर सब ध्वनियों की उद्‌गम ध्वनि को सुनो। और तब अकस्मात् तुम्हारे ऊपर ब्रह्म के मौन-संगीत का विस्फोट हो जायेगा। किसी भी ढंग से ध्वनि-शून्यता के खड्ड में गिर जाओ—और तुम प्रभु को पा लोगे।

५. सुनने की कला

जो भी मैं कहता हूं, उसमें नया कुछ नहीं है। न ही उसमें कुछ भी पुराना है। या वह दोनों है—पुराने-से-पुराना और नये-से-नया। और यह जानने के लिए तुम्हें मुझे सुनने की जरूरत नहीं। ओह! सुनो प्रातः पक्षियों के कलरव को—या फूलों को और धूप में चमकती घास की बालियों को—और तुम उसे सुन लोगे। और यदि तुम्हें सुनना नहीं आता, तो तुम मुझसे भी न जान सकोगे। इसलिए वास्तविक बात यह नहीं है कि तुम क्या सुनते हो—वरन् तुम कैसे सुनते हो। क्योंकि सन्देशा तो सब जगह है—सब जगह—सब जगह। अब मैं तुम्हें सुनने की कला बतलाता हूं—

घूमते रहो जब तक कि प्रायः निढाल न हो जाओ। या नाचो—या तीव्रता से श्वास लो और तब जमीन पर गिरकर सुनो। अथवा, जोर-जोर से अपना नाम दोहराओ जब तक कि थक न जाओ। और तब अचानक रुको और सुनो। अथवा, नींद-प्रवेश के बिन्दु पर, जब कि नींद अभी भी नहीं आयी हो और बाह्य-जागरण चला गया हो—अचानक सतर्क हो जाओ और सुनो। और, तब तुम मुझे सुन लोगे।

६. शरीर में घनिष्ठता से जीने का आनन्द

शरीर में आत्मीयता से जियो। और, घनिष्ठता से। शरीर को अधिक अनुभव करो। और शरीर को अधिक अनुभव करने दो। यह आश्चर्यजनक है कि कितने ही लोग स्वयं की शारीरिक सत्ता के प्रति प्रायः अनभिज्ञ हैं! शरीर को अत्यधिक दबाया गया है और जीवन को नकारा गया है। इसी कारण यह मात्र एक मृत बोझ है,एक जीवन्त आह्लाद नहीं। इसी कारण मैं जोर देता हूं कि शरीर में वापिस लौट जाओ और उसकी गतिविधियों

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

में अश्चर्यजनक उल्लास को पुनः प्राप्त करो। विशुद्ध गतिविधियों में इसे ध्यान ही बना लो और तुम्हें बहुत लाभ होगा। इतना कि समझ के बाहर हो।

७. सजग होकर स्वप्न देखना—एक ध्यान

स्वप्न देखने को सचेतन रूप से ध्यान बनाओ। और, भलिभांति जानो कि सजग होकर स्वप्न देखना अवलोकन के नये द्वार खोलता है। लेट जाओ, विश्राम करो और स्वप्न देखो। पर सो नहीं जाना। भीतर सजग बने रहो। प्रतीक्षा करो और सतर्क रहो। मन में जो भी स्वप्न आये उसे देखो — क्योंकि स्वप्न में सारा संसार तुम्हारा है। जैसा तुम्हें भाये स्वयं को स्वप्न में देखो। स्वप्न देखो और संतुष्ट हो जाओ। संतुष्ट अपने स्वप्नों से—क्योंकि वे तुम्हारे हैं और स्मरण रखो कि तुम्हारे स्वप्नों की भांति कुछ भी तुम्हारा नहीं हो सकता है—क्योंकि तुम स्वयं भी एक स्वप्न-सत्ता हो। और इसलिए भी, क्योंकि तुम्हारे स्वप्न में ही तुम्हारी इच्छाएं वास्तविक होती हैं—सिर्फ तुम्हारे स्वप्नों में। लेकिन उनसे तादात्म्य मत करो। उनके साक्षी बनो। सजग रहो। और, तब, अचानक स्वप्न विलीन हो जायेगा। और, केवल तुम्हीं होओगे। और प्रकाश होगा।

८. स्मरण — एक का

सदैव एक का स्मरण रखो जो कि शरीर के भीतर है। चलते हुए, बैठे हुए, खाते हुए—या कुछ भी करते हुए एक का स्मरण रखो, जो कि न तो चल रहा है, न ही बैठा है, न ही खा रहा है। सब करना ऊपर सतह पर है। और सब करने के पार हमारा होना है। इसलिए सब करने में 'अकर्ता' के प्रति, चलने में 'अचल' के प्रति सजग रहो।

एक दिन मुल्ला नसरुद्दीन की पत्नी अपने कमरे की ओर भागी—जब उसने एक धम्म की आवाज सुनी। 'घबरानेवाली कोई बात नहीं'—मुल्ला ने कहा—'मेरा यह चोगा जमीन पर गिर गया था।' 'क्या?....और इतने जोर का धमाका हुआ?'—उसकी बीवी ने पूछा। 'हां, उस समय मैं उसके भीतर जो था'—मुल्ला ने कहा।

९. ध्यान—मृत्यु पर

मृत्यु के सीधे साक्षात से जीवन अधिक प्रामाणिक हो जाता है। लेकिन हम सदा मृत्यु के तथ्य से बचने की कोशिश करते हैं। और इससे जीवन मिथ्या और कृत्रिम बन जाता है। और मृत्यु से भी बदतर। क्योंकि प्रामाणिक मृत्यु का भी अपना एक सौन्दर्य है। जब कि मिथ्या जीवन मात्र कुरूप है। मृत्यु पर ध्यान करो—क्योंकि मृत्यु का साक्षात किये बिना जीवन को जानने का उपाय नहीं है। और वह सब कहीं है। जहां कहीं जीवन है मृत्यु भी है। वे, वास्तव में, उसी एक घटना के दो पहलू हैं। और जब कोई यह जानता है—वह दोनों का अतिक्रमण कर जाता है। और केवल उसी अतिक्रमण में चेतना समग्ररूपेण खिलती है। और होता है सत्ता का आनन्द।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१०. स्वयं को पाना हो तो दूसरों पर ज्यादा ध्यान मत देना

फकीर झुगान सुबह होते ही जोर से पुकारता—'झुगान! झुगान!' सूना होता उसका कक्ष। उसके सिवाय और कोई भी नहीं। सूने कक्ष में स्वयं की ही गूंजती आवाज को वह सुनता—'झुगान! झुगान!' उसकी आवाज को आसपास के सोये वृक्ष भी सुनते। वृक्ष पर सोये पक्षी भी सुनते। निकट ही सोया सरोवर भी सुनता। और फिर वह स्वयं ही उत्तर देता—'जी, गुरुदेव! आज्ञा, गुरुदेव!' उसके इस प्रत्युत्तर पर वृक्ष हंसते। पक्षी हंसते। सरोवर हंसता। और फिर वह कहता—'ईमानदार बनो, झुगान! स्वयं के प्रति ईमानदार बनो!' वृक्ष भी गम्भीर हो जाते। पक्षी भी। और वह कहता 'जी, गुरुदेव!' और फिर कहता—'स्वयं को पाना है तो दूसरों पर ज्यादा ध्यान मत देना' वृक्ष भी चौंककर स्वयं का ध्यान करते। पक्षी भी। सरोवर भी।

और झुगान कहता—'जी, हां! जी, हां!' और फिर इस एकालाप के बाद झुगान बाहर निकलता तो वृक्षों से कहता—'सुना?' पक्षियों से कहता—'सुना?' सरोवर से कहता—'सुना?' और फिर हंसता। कहकहे लगाता।

कहते हैं वृक्षों को, पक्षियों को, सरोवरों को उसके कहकहे अभी भी याद हैं। लेकिन, मनुष्यों को? नहीं—मनुष्यों को कुछ भी याद नहीं है। यह मोनो-नाटक (मोनो-ड्रामा) तुम्हारे बड़े काम का है। इसका तुम रोज अभ्यास करना। सुबह उठकर—उठते ही बुलाना जोर से। ध्यान रहे कि धीरे नहीं — बुलाना है जोर से। इतने जोर से कि पास-पड़ोस सुने—'......' फिर कहना—'जी, गुरुदेव!' फिर कहना—'स्वयं को पाना है तो दूसरों पर ज्यादा ध्यान मत देना।' और फिर कहना—'जी,हां! जी, हां!' और यह सब इतने जोर से कहना कि तुम्हें ही नहीं, औरों को भी इसका लाभ हो। फिर हंसते हुए बाहर आना। कहकहे लगाना। और हवाओं से पूछना—'सुना?' बादलों से पूछना—'सुना?'

११. अदृश्य के दृश्य और अज्ञात के ज्ञात होने का उपाय—ध्यान

अदृश्य को दृश्य करने का उपाय पूछते हैं? दृश्य पर ध्यान दें। मात्र देखें नहीं, ध्यान दें। अर्थात् जब फूल को देखें तो स्वयं का सारा अस्तित्व आंख बन जाये। पक्षियों को सुनें तो सारा तन प्राण कान बन जाये। फूल देखें तो सोचें नहीं। पक्षियों को सुनें तो विचारें नहीं। समग्र चेतना (टोटल कॉन्शसनेस) से देखें या सुनें या सूंघे या स्वाद लें या स्पर्श करें। क्योंकि, संवेदनशीलता (संसटिविटी) के उथलेपन के कारण ही अदृश्य दृश्य नहीं हो पाता है और अज्ञात अज्ञात ही रह जाता है। संवेदना को गहरावें। संवेदना में तैरें नहीं, डूबें। इसे ही मैं ध्यान (मेडीटेशन) कहता हूं। और ध्यान में दृश्य भी खो जाता है और अन्ततः दृश्य होता है और अज्ञात ज्ञात होता है। यही नहीं—अज्ञेय (अननोएबल) भी ज्ञेय हो जाता है। और ध्यान रखें कि जो भी मैं लिख रहा हूं—उसे भी सोचें न, वरन् करें। 'कागज लेखी' से न कभी कुछ हुआ है, न हो ही सकता है। 'आंखन देखी' के अतिरिक्त

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कोई और द्वार नहीं है।

१२. जीवन नृत्य है

आकाश से थोड़ा तालमेल बढ़ाएं। आंखों को विराट को पीने दें। दिन हो या रात—जब भी मौका मिले आकाश पर ध्यान करें, आकाश को उतरने दें हृदय में। शीघ्र ही बीच से परदा उठने लगेगा। भीतर और बाहर का आकाश आलिंगन करने लगेगा। स्वयं के मिटने में इससे सहायता मिलेगी। अहं के विसर्जन में इससे मार्ग बनेगा। और यदि अनायास ही आकाश पर ध्यान करते-करते तन-मन नृत्य को आतुर हो उठें तो स्वयं को रोकना नहीं—नाचना। हृदयपूर्वक नाचना। पागल होकर नाचना। उस नृत्य से जीवन रूपांतरण की अनूठी कुंजी हाथ लग जाती है। क्योंकि नृत्य ही है अस्तित्व। अस्तित्व के होने का ढंग ही नृत्यमय है। अणु-परमाणु नृत्य में लीन हैं—ऊर्जा अनन्त रूपों में नृत्य कर रही है। जीवन नृत्य है।

१३. स्वयं की कील

संसार का चक्र घूम रहा है, लेकिन उसके साथ तुम क्यों घूम रहे हो? शरीर और मन के भीतर जो है, उसे देखो। वह तो न कभी घूमा है, न घूम रहा है, न घूम सकता है। वही तुम हो। 'तत्वमसि, श्वेतकेतु'। सागर को सतह पर लहरें हैं, पर गहराई में? वहां क्या है? सागर को उसकी सतह ही समझ लें तो बहुत भूल हो जाती है। बैलगाड़ी के चाक को देखना। चाक घूमता है, क्योंकि कील नहीं घूमती है। स्वयं की कील का स्मरण रखो। उठते, बैठते, सोते, जागते उसकी स्मृति को जगाये रखो। धीरे-धीरे सारे परिवर्तन के पीछे उसके दर्शन होने लगते हैं जो कि परिवर्तन नहीं है।

१४. स्वीकार से दुख का विसर्जन

दुख को स्वीकार करें। दुख से भागें नहीं। जो दुख से भागता है, दुख उससे कभी नहीं भागता। जो दुख से नहीं भागता है, दुख उससे भाग जाता है। यही शाश्वत नियम है। दुख से बचने के लिए ध्यान न करें। ध्यान करें—ध्यान के लिए ही। ध्यान के आनन्द के लिए ही ध्यान करें। और दुख फिर खोजे से भी नहीं मिलेगा।

१५. अवलोकन—वृत्तियों की उत्पत्ति, विकास व विसर्जन का

भीतर की आवाज पर ज्यादा से ज्यादा ध्यान दो। उसे सुनो एकाग्र होकर। उसके द्वारा साक्षी जन्म लेना चाह रहा है। क्रोध हो कि प्रेम—जैसे ही भीतर से कोई कहे—'देख ले! यह है तेरा क्रोध!—वैसे ही शांत-एकाग्रता से देखने में लग जाना। निश्चय ही, देखते ही वृत्ति विलीन हो जायगी। तब वृत्ति को विलीन होते देखना। विलीन हो गया देखना।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वृत्ति का उठना, फैलना, विलीन होना, विलीन हो जाना—जब चारों स्थितियां समग्ररूपेण देख ली जाती हैं तब ही वृत्तियों का रूपांतरण (ट्रांसफोर्मेशन) होता है। और चित्तवृत्तियों का रूपांतरण ही निरोध है। और ऐसे निरोध को ही पतंजलि ने योग कहा है। योग द्वार है उसका जो कि चित्त के पार है। और जो चित्त के पार है वही शाश्वत है, वही सत्य है।

१६. क्रोध के दर्शन से क्रोध की उर्जा का रूपांतरण

जब क्रोध आये तो दो-चार गहरी सांसें लेना और क्रोध के साक्षी बनना। क्रोध न तो करना ही और न क्रोध से लड़ना ही। क्रोध को देखना। क्रोध के दर्शन से क्रोध की उर्जा (इनर्जी) क्षमा में रूपांतरित हो जाती है। पूछोगे—क्यों? ऐसे ही जैसे १०० डिग्री तापमान पर पानी वाष्पीभूत हो जाता है। या, ऐसे ही जैसे हाइड्रोजन और आक्सीजन के मिलने से जल निर्मित हो जाता है।

१७. काम-ऊर्जा का रूपांतरण—संभोग में साक्षित्व से

काम-वासना स्वाभाविक है। उससे लड़ना नहीं; अन्यथा उसके विकृत-रूप चित्त को घेर लेंगे। काम (सेक्स) को समझो और काम-कृत्य (सेक्स-ऐक्ट) को भी ध्यान का विषय बनाओ। काम में, सम्भोग में भी साक्षी (विटनेस) बनो। सम्भोग में साक्षी-भाव के जुड़ते ही काम-उर्जा (सेक्स इनर्जी) का रूपांतरण प्रारम्भ हो जाता है। वह रूपांतरण ही ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य काम का विरोध नहीं—काम-उर्जा का ही ऊर्ध्वगमन है। जीवन में जो भी है उसे मित्रता से और अनुग्रह से स्वीकार करो। शत्रुता का भाव अधार्मिक है। स्वीकार से परिवर्तन का मार्ग सहज ही खुलता है। शक्ति तो सदा ही तटस्थ है। वह न बुरी है, न अच्छी। शुभ या अशुभ उससे सीधे नहीं—वरन् उसके उपयोग से ही जुड़े हैं।

१८. काम-वृत्ति पर ध्यान

काम-वासना से भयभीत न हों। क्योंकि भय हार की शुरुआत है। उसे भी स्वीकार करें। वह भी है और अनिवार्य है। हां—उसे जानें जरूर—पहचानें। उसके प्रति जागें। उसे अचेतन (अनकॉन्शस) से चेतन (कान्शस) बनावें। निंदा से यह कभी भी नहीं हो सकता है। क्योंकि, निंदा दमन (रिप्रेशन) है। और दमन की वृत्तियों को अचेतन में ढकेल देता है। वस्तुतः तो दमन के कारण ही चेतना चेतन और अचेतन में विभाजित हो गई है। और यह विभाजन समस्त द्वन्द्व (कान्फलिक्ट) का मूल है। यह विभाजन ही व्यक्ति को अखण्ड नहीं बनने देता है। और अखण्ड बने बिना शांति का, आनन्द का, मुक्ति का कोई मार्ग नहीं है। इसलिए काम-वासना पर ध्यान करो। जब वह वृत्ति उठे तो ध्यानपूर्वक (माइंडफुली) उसे देखो। न उसे हटाओ, न स्वयं उससे भागो। उसका दर्शन अभूतपूर्व अनुभूति में उतार देता है। और ब्रह्मचर्य इत्यादि के सम्बन्ध में जो भी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri
सीखा-सुना हो, उसे एक-बारगी कचरे की टोकरी में फेंक दो। क्योंकि, इसके अतिरिक्त ब्रह्मचर्य को उपलब्ध होने का कोई मार्ग नहीं है।

१९. विचारों के पतझड़

विचारों के प्रवाह में बहना भर नहीं। बस जागे रहना। जानना स्वयं को पृथक और अन्य। दूर और मात्र द्रष्टा। जैसे राह पर चलते लोगों की भीड़ देखते हैं, ऐसे ही विचारों की भीड़ को देखना। जैसे पतझड़ में सूखे पत्तों को चारों ओर उड़ते देखते हैं, वैसे ही विचारों के पत्तों को उड़ते देखना। न उनके कर्ता बनना। न उनके भोक्ता। फिर शेष सब अपने-आप हो जायेगा। उस शेष को ही मैं ध्यान (मेडीटेशन) कहता हूं।

२०. आनन्दातिरेक और भगवत्-मादकता का मार्ग

कल से निम्नलिखित ध्यान प्रारम्भ करो। और जानो कि यह आदेश है। अब तुम मेरे इतने अपने हो कि सिवाय आदेश देने के मैं और कुछ नहीं कर सकता।

पूर्व-आवश्यकतायें—

१. प्रफुल्लता से करो, २. शिथिलता में करो, और, ३. आनन्दित होओ। ४. प्रातःस्नान करने के बाद इसे करो।

ध्यान के चरण—

१. पहला चरण—लयबद्धता से गहरी श्वास लो। तेज नहीं, बल्कि धीमी गति से। दस मिनट के लिए।

२. मन्द गति से लय में नाचो। आनन्दित होओ। जैसे कि उसमें बह रहे हो। दस मिनट के लिए।

३. तीसरा चरण—महामंत्र हू-हू का उपयोग करो। हू—दस मिनट के लिए। नाचना व हिलना-डोलना चलता रहे। गम्भीर मत होना।

४. चौथा चरण—आंखें बन्द कर लो और मौन हो जाओ। अब नाचना, या हिलना-डोलना नहीं करो। खड़े रहो, बैठ जाओ या लेट जाओ—जैसा भी तुम्हें ठीक लगे। पर ऐसे हो रहो, जैसे मर ही गये हो। गहरे डूबने का अनुभव करो। समर्पित हो जाओ और स्वयं को समग्र के हाथों में छोड़ दो। दस मिनट के लिए।

बाद की आवश्यकतायें—

१. पूरे दिन आनन्दातिरेक में जियो—भगवत्-मादकता में। उसमें बहो और खिलो। जब कभी मन डूबता-सा लगे—भीतर कहो—हू-हू-हू और बाहर हंसो। हंसो बिना किसी कारण के। और, इस पागलपन को स्वीकार करो।

२. सोने के पहले, महामंत्र हू-हू-हू का उच्चार करो। दस मिनट के लिए। और तब स्वयं पर हंसो।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

३. प्रातः जब तुम्हें लगे कि जाग खुल गयी है, पुनः महामंत्र हू-हू-हू का उच्चार करो। दस मिनट के लिए। और तब हृदयपूर्वक हंसते हुए दिन का प्रारम्भ करो।

४. और, सदैव स्मरण रखो कि मैं तुम्हारे साथ हूं।

२१. संवेदनशीलता बढ़ाने का प्रयोग

कभी आरामकुर्सी पर बैठकर ही अनुभव करें कि कितनी संवेदनायें घट रही हैं—कुर्सी पर आपके शरीर का दवाव। कुर्सी से आपका स्पर्श। जमीन पर रखे आपके पैर। हवा का झोंका जो आपको छू रहा है। फूलों की गन्ध जो खिड़की से भीतर आ गई है। रसोई में बर्तनों की आवाज। बनते हुए भोजन की गन्ध जो आपके नासापुटों में भर गयी है। छोटे बच्चे की किलकारी छूती है और आह्लादित कर जाती है। किसी का चीत्कार, किसी का रोना जो आपको कम्पित कर जाता है। ....अगर कोई रोज पन्द्रह मिनट चुप बैठकर अपने चारों तरफ की संवेदनाओं का अनुभव करे, तो भी बड़े गहरे ध्यान को उपलब्ध होने लगेगा।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

२. ध्यानोपलब्धि

ध्यान में घटने वाली घटनाओं, बाधाओं, अनुभूतियों, उपलब्धियों, सावधानियों, सुझावों तथा निर्देशों सम्बन्धी साधकों को लिखे गये भगवान श्री रजनीश के २१ पत्र

१. अन्ततः सब खो जाता है
२. मौन के तारों से भर उठेगा हृदयाकाश
३. ऊर्जा-जागरण से देह-शून्यता
४. ध्यान—अशरीरी-भाव और ब्रह्म-भाव
५. कुण्डलिनी ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन
६. अलौकिक अनुभवों की वर्षा—कुण्डलिनी-जागरण पर
७. तैयारी विस्फोट को झेलने की
८. अहिंसा—अनिवार्य छाया ध्यान की
९. गहरे ध्यान के बाद ही जाति-स्मरण का प्रयोग
१०. सिद्धियों में रस न लेना
११. विचारों का विसर्जन
१२. चक्रों के खुलते समय पीड़ा स्वाभाविक
१३. कुछ भी हो ध्यान को नहीं रोकना
१४. मन का रेचन ध्यान में
१५. छलांग—बाहर—शरीर के, संसार के, समय के
१६. समय के पूर्व शक्ति का जागरण हानिप्रद.
१७. पूर्व-जन्मों के बन्द द्वारों का खुलना
१८. साधना में धैर्य
१९. ध्यान में पूरा डूबना ही फल का जन्म है
२०. अनुभूति में बुद्धि के प्रयास बाधक
२१. समष्टि को बांट दिया ध्यान ही समाधि बन जाता है

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. अन्ततः सब खो जाता है

सुबह सूर्योदय के स्वागत में जैसे पक्षी गीत गाते हैं—ऐसे ही ध्यानोदय के पूर्व भी मन-प्राण में अनेक गीतों का जन्म होता है। वसन्त में जैसे फूल खिलते हैं, ऐसे ही ध्यान के आगमन पर अनेक-अनेक सुगन्धें आत्मा को घेर लेती हैं। और वर्षा में जैसे सब ओर हरियाली छा जाती है, ऐसे ही ध्यान वर्षा में भी चेतना नाना रंगों से भर उठती है, यह सब और बहुत-कुछ भी होता है। लेकिन, यह अन्त नहीं, बस आरम्भ ही है। अन्ततः तो सब खो जाता है। रंग, गन्ध, आलोक, नाद—सभी विलीन हो जाते हैं। आकाश जैसा अन्तर्आकाश (इनर स्पेस) उदित होता है। शून्य, निर्गुण, निराकार। उसकी करो प्रतीक्षा। उसकी करो अभीप्सा। लक्षण शुभ हैं, इसीलिए एक क्षण भी व्यर्थ न खोओ और आगे बढ़ो। मैं तो साथ हूं ही।

२. मौन के तारों से भर उठेगा हृदयाकाश

जब पहले-पहले चेतना पर मौन का अवतरण होता है, तो सन्ध्या की भांति सब फीका-फीका और उदास हो जाता है—जैसे सूर्य ढल गया हो रात्रि का अन्धेरा धीरे-धीरे उतरता हो और आकाश थका-थका हो दिन भर के श्रम से। लेकिन, फिर आहिस्ता-आहिस्ता तारे उगने लगते हैं और रात्रि के सौन्दर्य का जन्म होता है। ऐसा ही होता है मौन में भी। विचार जाते हैं, तो उनके साथ ही एक दुनिया अस्त हो जाती है। फिर मौन आता है, तो उसके पीछे ही एक नयी दुनिया का उदय भी होता है। इसलिए, जल्दी न करना। घबड़ाना भी मत। धैर्य न खोना। जल्दी ही मौन के तारों से हृदयाकाश भर उठेगा। प्रतीक्षा करो और प्रार्थना करो।

३. ऊर्जा-जागरण से देह-शून्यता

ध्यान शरीर की विद्युत-ऊर्जा (बॉडी इलेक्ट्रिसिटी) को जगाता है—सक्रिय करता है—प्रवाह मान करता है। तू भय न करना। न ही ऊर्जा-गतियों को रोकने की चेष्टा करना। वरन्, गति के साथ गतिमान होना—गति के साथ सहयोग करना। धीरे-धीरे तेरा शरीर-भान, भौतिक-भाव (मैटेरियल-सेन्स) कम होता जायेगा और अभौतिक, ऊर्जा-भाव (नॉन मैटिरियल इनर्जी-सेन्स) बढ़ेगा। शरीर नहीं—ऊर्ज़ा— शक्ति ही अनुभव में आयेगी। शरीर की सीमा है—शक्ति की नहीं। शक्ति के पूर्णानुभव में अस्तित्व (एग्जिस्टेन्स) में तादात्म्य होता है। सम्यक् है तेरी स्थिति—अब सहजता से लेकिन दृढ़ता से आगे बढ़। जल्दी ही सफलता मिलेगी। सफलता सुनिश्चित है।

४. ध्यान—अशरीरी-भाव—और ब्रह्म-भाव

ध्यान में शरीर-भाव खोयेगा। अशरीरी दशा निर्मित होगी शून्य का अवतरण होगा। इससे भय न लें—वरन् प्रसन्न हों, आनन्दित हों। क्योंकि यह बड़ी उपलब्धि है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

धीरे-धीरे ध्यान के बाहर भी अशरीरी भाव फैलेगा और प्रतिष्ठित होगा। यह आधा काम है। शेष आधे में ब्रह्म-भाव का जन्म होता है। पूर्वार्ध है—अशरीरी-भाव। उत्तरार्ध है—ब्रह्म-भाव। और श्रम में लगें। स्रोत बहुत निकट है। और संकल्प करें। विस्फोट शीघ्र ही होगा। और समर्पण करें। और, स्मरण रखें कि मैं सदा साथ हूं; क्योंकि अब बड़ा निर्जन पथ सामने है। मन्जिल के निकट ही मार्ग सर्वाधिक कठिन होता है। सुबह के करीब ही रात और गहरी हो जाती है।

५. कुण्डलिनी-ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन

शरीर में विद्युत-ऊर्जा-जैसा संचार शुभ है। धीरे-धीरे शरीर-भाव मिट जायेगा—और ऊर्जा का बोध ही बचेगा। भौतिक (मैटेरियल) शरीर एक भ्रांति है। वस्तुतः तो है, वह ऊर्जा (एनर्जी) ही है। ऊर्जा (लाइफ एनर्जी) ही अज्ञान में शरीर और ज्ञान में आत्मा प्रतीत होती है। मस्तिष्क में धक्के लगेंगे। लगेगा कि जैसे अब फटा अब फटा। लेकिन भय न लाना। जीवन-ऊर्जा के हाथों में स्वयं को छोड़ दो। यही भगवत-समर्पण है। ऐसे ही ब्रह्मरन्ध्र को छोड़ दो। ऐसे ही सहस्त्र पंखुड़ियों वाले कमल की कली टूटेगी और फूल बनेगी। नाभि-केंद्र पर अपूर्व शान्ति का जो अनुभव हो रहा है, उसमें रमण करो। उसमें डूबो—उससे एक हो जाओ। जीवन-ऊर्जा का मूल-स्रोत ध्यान में आ रहा है—उसे पहचानो। और, अब किसी भी अनुभव के सम्बंन्ध में सोच-विचार मत करो! अनुभव करो और अनुगृहीत होओ।

६. अलौकिक अनुभवों की वर्षा—
कुण्डलिनी - जागरण पर

कुण्डलिनी जागती है, तो ऐसा ही होता है। विद्युत दौड़ती है शरीर में। मूलाधार पर आघात लगते हैं। शरीर गुरुत्वाकर्षण (ग्रेविटेशन) खोता मालूम पड़ता है। और अलौकिक अनुभवों की वर्षा शुरू हो जाती है। प्राण अनसुने नाद से आपूरित हो उठते हैं। रोआं-रोआं आनन्द की पुलक में कांपने लगता है। जगत् प्रकाश-पुंज मात्र प्रतीत होता है। इन्द्रियों के लिए बिल्कुल अबूझ अनुभूतियों के द्वार खुल जाते हैं। प्रकाश में सुगन्ध आती है। सुगन्ध में संगीत सुनाई पड़ता है। संगीत में स्वाद आता है। स्वाद में स्पर्श मालूम होता है। तर्क की सभी कोटियां (कैटेगोरीस) टूट जाती हैं। और बेचारे अरस्तू के सभी नियम उलट-पुलट हो जाते हैं। कुछ भी समझ में नहीं आता है और फिर भी सर्व सदा से जाना हुआ मालूम होता है। कुछ भी कहा नहीं जाता है और फिर भी सब जीभ पर रखा प्रतीत होता है। 'गूंगे के गुड़' का अर्थ पहली बार समझ में आता है। आनन्दित होओ कि ऐसा हुआ है। अनुगृहीत होओ कि प्रभु की अनुकम्पा है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

७. तैयारी—विस्फोट को झेलने की

कुछ करो नहीं, वस देखो। नाटक के एक दर्शक की भांति। नाट्यगृह में—पर नाटक में नहीं। शरीर नाट्यगृह है और तुम दर्शक हो। ऊर्जा उठती है—ऊर्ध्वगामी होती है तो ऐसे ही आघातों से तन-तन्तु कांप-कांप उठते हैं। ऊर्जा अपना नया यात्रा-पथ निर्माण करती है तो आंधी में सूखे पत्तों की भांति शरीर आन्दोलित होता है। फिर जैसे-जैसे नये प्रवाह-पथ निर्मित हो जाऐंगे वैसे-वैसे ही शरीर की पीड़ा खो जाएगी। फिर आज जो आघात-जैसा प्रतीत होता है, वही आनन्द की पुलक बन जाता है। ऐसे आनन्द की जो कि शरीर में घटित होता है, पर शरीर का नहीं है। और निकट है वह क्षण। पर उसके पूर्व बहुत बार तूफान आयेगा ऊर्जा का और चला जायेगा। तूफान उठेगा और शान्त हो जायेगा। इससे चिन्तित मत होना। क्योंकि, ऐसे ही विस्फोट (एक्सप्लोजन) की तैयारी होती है। गौरीशंकर के शिखर-अनुभव (पीक-एक्सपीरियेंसेज़) के पूर्व अनेक छोटे-छोटे शिखरों के अनुभव से गुजरना पड़ता है। उससे ही विराट को बूंद में झेलने की क्षमता निर्मित होती है।

८. अहिंसा—अनिवार्य छाया ध्यान की।

ध्यान से मांसाहार तो कठिनाई में पड़ेगा ही। अपने तथाकथित सुख के लिए अब दुख किसी को भी न दे सकोगे। अहिंसा ध्यान की अनिवार्य छाया है। और, उस ध्यान में कुछ चूक है, जिससे कि अहिंसा सहज ही फलित नहीं होती है। अहिंसा को प्रयास से लाना पड़े, तो भी ध्यान में भूल है। अहिंसा को भी जो साधते हैं, उन्हें वास्तविक अहिंसा का कोई पता ही नहीं है। अहिंसा तो आती है सहज ध्यान के साथ-साथ, बस, ऐसे ही जैसे सूर्य के साथ प्रकाश । आनन्द मनाओ और प्रभु को धन्यवाद दो कि ऐसी ही अहिंसा का पदार्पण तुम्हारे जीवन में हो रहा हो।

९. गहरे ध्यान के बाद जाति-स्मरण का प्रयोग

विगत जन्म की स्मृति में उतर सकते हो। लेकिन, उसके पूर्व गहरे ध्यान (डीप मेडिटेशन) का प्रयोग अति आवश्यक है। उसके बिना चेतना को पीछे लौटाना अत्यन्त कठिन है। और यदि किसी भांति सम्भव भी हो तो खतरनाक भी। इसलिए, गहरे ध्यान के पूर्व मैं कोई सुझाव नहीं दे सकता हूं उसे कठोरता मत समझ लेना। ऐसा मैं करुणावश ही लिख रहा हूं। साधारण चित्त अतीत-जन्म की स्मृतियों की बाढ़ को झेलने में समर्थ नहीं है। इसलिए, प्रकृति उस द्वार को बन्द कर देती है। और पूर्ण तैयारी के बिना प्रकृति के नियमों से खेल खेलना महंगा सिद्ध होता है।

१०. सिद्धियों में रस न लेना

योग से बहुत-कुछ सम्भव है—अतीन्द्रिय, अलौकिक। लेकिन, नियमातीत कुछ भी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

घटित नहीं होता है। अतीन्द्रिय—अनुभवों और सिद्धियों के भी अपने नियम हैं। चमत्कार भी, जो नहीं जानते उन्हीं के लिए चमत्कार हैं। या फिर, अस्तित्व ही चमत्कार है। पर, जहां तक बने, सिद्धियों में रस न लेना। साधक के लिए उससे अकारण ही व्यवधान निर्मित होता है।

११. विचारों का विसर्जन

ध्यान में प्रकाश के साथ-साथ बीच-बीच में विचार आते हैं, तो उन्हें देखना—तीव्रता से पूरी चेतना से—समग्र एकाग्रता से। और, कुछ भी न करना—बस,द्रष्टा बनना। पर, दृष्टि प्रगाढ़ हो और पैनी। और, विचार खो जावेंगे! बड़े कमजोर हैं बेचारे। लेकिन, हमारी दृष्टि उनसे भी ज्यादा वेजान है—इसलिए कठिनाई है। अन्यथा, विचार से ज्यादा हवाई चीज और क्या हो सकती है?

१२. चक्रों के खुलते समय पीड़ा स्वाभाविक

पीड़ा थोड़ी बढ़े, तो चिन्तित मत होना। चक्र सक्रिय होते हैं, तो पीड़ा होती है। पीड़ा के कारण ध्यान को शिथिल न करना। वस्तुतः तो, चक्रों पर पीड़ा शुभ-लक्षण है। और, जैसे ही अनादि-क़ाल से सुप्त चक्र पूर्णरूपेण सक्रिय हो उठेंगे, वैसे ही पीड़ा हो जायेगी। चक्रों की पीड़ा—प्रसव पीड़ा है। तेरा ही नया जन्म शान्त होने को है। सौभाग्य मान और अनुगृहीत हो—क्योंकि स्वयं के जन्म को देखने से बड़ा और सद्भाग्य नहीं है।

१३. कुछ भी हो ध्यान को नहीं रोकना

ध्यान में और भी शक्ति लगाओ। ध्यान के अतिरिक्त शेष समय में ध्यान की स्मृति (रिमेंबरिंग) बनाये रखो। जब भी स्मरण आये—क्षण भर को तत्काल भीतर डुबकी ले लो। मस्तिष्क में शीतलता और भी बढ़ेगी। उससे घबराना मत—बिल्कुल बर्फ जमी हुई मालूम होने लगे तो भी नहीं! रीढ़ में संवेदना गहरी होगी और कभी-कभी अनायास कहीं-कहीं दर्द भी उभरेगा। उसे साक्षी-भाव से देखते रहना है। वह आयेगा और अपना काम करके विदा हो जायेगा। नये चक्र सक्रिय होते हैं तो दर्द होता ही है। और कुछ भी हो तो ध्यान को नहीं रोकना है। जो भी ध्यान से पैदा होता है, वह ध्यान से ही विदा हो जाता है।

१४. मन का रेचन ध्यान में

भय न करो। ध्यान में जो भी हो होने दो। मन रेचन (केथारसिस) में है तो उसे रोको मत। चित्त-शुद्धि का यही मार्ग है। अचेतन (अनकॉन्शस) में जो भी दबा है, वह उभरेगा। उसे मार्ग दो ताकि उससे मुक्ति हो सके। उसे दबाया कि ध्यान व्यर्थ हुआ और उससे मुक्ति हुई नहीं कि ध्यान सार्थक हुआ। इसलिए, समस्त उभार का स्वागत करो।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

और उसे सहयोग भी दो। क्योंकि, अपने-आप जो कार्य बहुत समय लेगा, वह सहयोग से अल्पकाल में ही हो जाता है।

१५. छलांग—बाहर—शरीर के, संसार के, समय के

ध्यान में शरीर झूमता है तो भय न करना। वरन् उसे आनन्द से सहयोग देना। शरीर के साथ झूमो। मन को भी झूमने दो। और आत्मा को भी। झूमना नृत्य बन जायेगा। और नृत्य की अति में ही छलांग है। शरीर के बाहर—संसार के बाहर—समय के बाहर।

१६. समय के पूर्व शक्ति का जागरण हानिप्रद

तृतीय नेत्र (थर्ड आई) की चिंता में तू न पड़। आवश्यक होगा तो मैं तुझसे उस दिशा में कार्य करने को कहूंगा। वह तेरी सम्भावना के भीतर है और बिना ज्यादा श्रम के ही सक्रिय भी हो सकती है। लेकिन, तू स्वयं उत्सुकता न ले। समय के पूर्व शक्ति का जागरण बाधा भी बन सकता है। और मूल-साधना से भटकाव भी। फिर सत्य के साक्षात्कार के लिए वह आवश्यक भी नहीं है। और अनिवार्य तो बिल्कुल ही नहीं। कभी-कभी कुछ शक्तियां अनचाहे भी सक्रिय हो जाती हैं; लेकिन उनके प्रति भी उपेक्षा (इनडिफरेंस) आवश्यक है। और नये सोपान पर गतिमय होने में सहयोगी भी। अब जब मैं तेरी चिंता करता हूं तो तू सब चिंताओं से सहज ही विश्राम ले सकती है।

१७. पूर्व-जन्मों के बन्द द्वारों का खुलना

हां—तुम विगत किसी जन्म में योग विवेक से सम्बन्धित थीं। अब, बहुत-सी बातें शीघ्र ही तुम्हें याद आ जायेंगी। क्योंकि, चाबी तुम्हारे हाथ में है। परन्तु उनके बारे में कुछ भी सोचो। अन्यथा तुम्हारी कल्पना तुम्हारी स्मृतियों के साथ घुलमिल जायेगी और तब यह जानना बहुत मुश्किल होगा कि क्या वास्तविक है और क्या नहीं। इसलिए अब सतत् जागरूक रहो कि तुम्हें पूर्व-जन्मों के बारे में नहीं सोचना है। स्मृतियों को अपने से आने दो। तुम्हारी ओर से किसी सचेतन प्रयास की आवश्यकता नहीं है। इसके विपरीत वह एक बड़ी बाधा ही बनेगा। अचेतन को अपना कार्य करने दो! तुम मात्र साक्षी रहो। और जैसे-जैसे ध्यान गहरा होगा, बहुत से बन्द द्वार तुम्हारे समक्ष खुलेंगे। लेकिन प्रतीक्षा करना न भूलो और रहस्यों को स्वयं प्रकट होने दो। बीज टूट चुका है और बहुत-कुछ होने को है। तुम मात्र प्रतीक्षा करो और साक्षी रहो।

१८. साधना में धैर्य

साधना के जीवन में धैर्य सबसे बड़ी बात है। बीज को बोकर कितनी प्रतीक्षा करनी होती है। पहले तो श्रम व्यर्थ ही गया दिखता है। कुछ भी परिणाम आता हुआ प्रतीत नहीं होता। पर एक दिन प्रतीक्षा प्राप्ति में बदलती है। बीज फटकर पौधे के रूप में भूमि के

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बाहर आ जाता है। पर स्मरण रहे, जब कोई परिणाम नहीं दिख रहा था, तब भी भूमि के नीचे विकास हो रहा था। ठीक ऐसा ही साधक का जीवन है। जब कुछ भी नहीं दिख रहा होता, तब भी बहुत कुछ होता है। सच तो यह है कि—जीवन-शक्ति के समस्त विकास अदृश्य और अज्ञात होते हैं। विकास नहीं, केवल परिणाम दिखाई पड़ते हैं। साध्य की चिंता छोड़कर साधना करते चलें, फिर साध्य तो अपने-आप आता चला जाता है। एक दिन आश्चर्य से भरकर ही देखना होता है कि यह क्या हो गया है। मैं क्या था और क्या हो गया हूं। तब जो मिलता है उसके समक्ष उसे पाने के लिए किया गया श्रम नाकुछ मालूम होता है।

१९. ध्यान में पूरा डूबना ही फल का जन्म है

जल्दी न करें। धैर्य रखें। धैर्य ध्यान के लिए खाद है। ध्यान को संभालते रहें। फल आयेगा ही। आता ही है। लेकिन फल के लिए चिंतित न हों। क्योंकि वैसी चिंता ही फल के आने में बाधा बन जाती है। क्योंकि वैसी चिंता ही ध्यान से ध्यान को बंटा लेती है। ध्यान (मेडीटेशन) पूरा ध्यान (अटैनशन) मांगता है। बंटाव नहीं चलेगा। आंशिकता नहीं चलेगी। ध्यान तुम्हारी समग्रता (टोटलिटी) के बिना सम्भव नहीं है। इसलिए, ध्यान के कर्म पर ही लगो और ध्यान के फल को प्रभु पर छोड़ो। और फल आ जाता है। क्योंकि ध्यान में पूरा डूबना ही फल का जन्म है।

२०. अनुभूति में बुद्धि के प्रयास बाधक

ध्यान तेरा रोज गहरा हो रहा है, यह जानकर अति आनन्दित हूं। बहुत-से अनुभव होंगे—लेकिन उन्हें बुद्धि से समझने के प्रयास में मत पड़ना। बुद्धि के प्रयास बाधा बन जाते हैं। और न ही कोई अनुभव पुनरुक्त हो ऐसी वासना ही करना। क्योंकि, ऐसी वासना भी बाधा बन जाती है। जो हो उसके लिए बस प्रभु को धन्यवाद दे आगे बढ़ जाना है।

२१. समिष्टि को बांट दिया ध्यान ही समाधि बन जाता है

ध्यान के बाद प्रार्थना किया कर कि ध्यान में मिली शांति और आनन्द सब ओर बिखर जाए—सबको मिल जाए। ध्यान करना है तुझे, लेकिन फल समष्टि को बांट देना है। तभी ध्यान समाधि बनता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

३. जिज्ञासा समाधान

साधकों के संग भगवान श्री की ध्यान व साधना सम्बन्धी २१प्रश्नोत्तर चर्चायें

१. क्या तुम ध्यान करना चाहते हो
२. ध्यान कैसे करें
३. मौन कैसे हों
४. स्वप्न में कैसे जागें
५. विचारों से कैसे मुक्त हों
६. शून्य कैसे हों
७. ध्यान की परिभाषा
८. निराकार के ध्यान की विधि
९. स्वाध्याय और ध्यान का अन्तर
१०. ध्यान को अन्तिम अवस्था तथा दिन-प्रतिदिन वृद्धि
११. निर्विचार हो जाने पर मन की परिस्थिति
१२. मन स्थिर करने का उपाय
१३. मन में उठते बुरे भावों का निराकरण
१४. ध्यानपूर्वक किये गये जाप का फल
१५. ध्यान का रूप ले लेने वाले जप
१६. कल्पना से कल्पना कटती है
१७. सजग जीने की विधि और सजगता से तात्पर्य
१८. साक्षित्व की प्रक्रिया
१९. सजगता और साक्षीत्व का फर्क
२०. साक्षी और तथाता में भेद
२१. केवल होश और तथाता में साम्य

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. क्या तुम ध्यान करना चाहते हो

क्या तुम ध्यान करना चाहते हो? तो ध्यान रखना कि ध्यान में न तो तुम्हारे सामने कुछ हो, न पीछे कुछ हो। अतीत को मिट जाने दो और भविष्य को भी। स्मृति और कल्पना—दोनों को शून्य होने दो। फिर न तो समय होगा और न आकाश ही होगा। उस क्षण जब कुछ भी नहीं होता है—तभी जानना कि तुम ध्यान में हो।

२. ध्यान कैसे करें

ध्यान के लिए पूछते हो कि कैसे करें? कुछ भी न करो। बस, शान्ति से श्वास-प्रश्वास के प्रति जागो। होशपूर्वक श्वास-पथ को देखो। श्वास के आने-जाने के साक्षी रहो। यह कोई श्रमपूर्ण चेष्टा न हो, वरन् शान्त और शिथिल विश्रामपूर्ण बोध-मात्र हो। और फिर तुम्हारे अनजाने ही, सहज और स्वाभाविक रूप से एक अत्यन्त प्रसादपूर्ण स्थिति में तुम्हारा प्रवेश होगा। इसका भी पता नहीं चलेगा तुम कब प्रविष्ट हो गये हो। अचानक ही तुम अनुभव करोगे कि तुम वहां हो, जहां कि कभी नहीं थे।

३. मौन कैसे हों

पूछते हो, मौन कैसे हों? बस हो जाओ। बहुत विधि और व्यवस्था की बात नहीं है। चारों ओर जो हो रहा है, उसे सजग होकर देखो। और जो सुनाई पड़ रहा है, उसे साक्षी-भाव से सुनो। संवेदनाओं के प्रति होश तो पूरा हो, पर प्रतिक्रिया न हो। प्रतिक्रिया शून्य सजगता से मौन सहज ही निष्पन्न होता है।

४. स्वप्न में कैसे जागें

स्वप्न में—'जो हम देख रहे हैं वह सत्य नहीं है, स्वप्न है'—इसे स्मरण रखने का उपाय है?

जो व्यक्ति जाग्रत अवस्था में यह स्मरण रखता है कि वह जो भी देख रहा है वह सब स्वप्न है, तब वह धीरे-धीरे स्वप्न में भी जानने लगता है कि जो वह देख रहा है, वह सत्य नहीं है। जाग्रत को क्योंकि हम सत्य मानते हैं, इसलिए स्वप्न भी सत्य मालूम होते हैं। जाग्रत में जो हमारे चित्त की आदत है, स्वप्न में उसी का प्रतिफलन होता है।

५. विचारों से कैसे मुक्त हों

विचारों से मुक्ति का क्या उपाय है?

साधारणतः जब तक मनुष्य प्रत्येक विचार की गति के साथ गतिमय होता रहता है, तब तक उसे विचारों से पैदा हो रही अशान्ति का अनुभव ही नहीं होता है। लेकिन जब वह रुककर—ठहरकर विचारों को देखता है, तभी उसे उनकी सतत् दौड़ और अशान्ति का प्रत्यक्ष होता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विचारों से मुक्ति की दिशा में यह आवश्यक अनुभूति है। हम खड़े होकर देखें तभी विचारों की व्यर्थ भागदौड़ का पता चल सकता है। निश्चय ही, जो उनके साथ ही दौड़ता रहता है, वह इसे कैसे जान सकता है।

विचारों की प्रक्रिया के प्रति एक निर्वैयक्तिक भाव को अपनायें—एकमात्र दर्शक का भाव। जैसे देखने-मात्र से ज्यादा आपका उनसे और कोई सम्बन्ध नहीं। और जब विचारों के बादल मन के आकाश को घेरें, और गति करें, तो उनसे पूछें—'विचारो! तुम किसके हो? ...क्या तुम मेरे हो?' और आपको स्पष्ट उत्तर मिलेगा—'नहीं, तुम्हारे नहीं।'

निश्चय ही यह उत्तर मिलेगा, क्योंकि विचार आपके नहीं हैं। वे आपके अतिथि हैं।आपको सराय बनाया हुआ है। उन्हें अपना मानना भूल है। और वही भूल उनसे मुक्त नहीं होने देती है। उन्हें अपना मानने से जो तादात्म्य पैदा होता है, वही न विसर्जित नहीं होने देता है। ऐसे, जो मात्र अतिथि हैं, वे ही स्थायी निवासी बन जाते हैं।

विचारों को निर्वैयक्तिक भाव से देखने से क्रमशः उनसे सम्बन्ध टूटता है। जब कोई वासना उठे या विचार, तब, ध्यान दें कि यह वासना उठ रही है—या कि विचार उठ रहा है। फिर देखें और जानें कि अब विलीन हो रहा है—अब विलीन हो चुका है। अब दूसरा विचार उठ रहा है...विलीन हो गया है।

और इस भांति शान्ति से, अनुद्विग्न भाव से दर्शक की भांति साक्षी बनकर विचारों की सतत् धारा का निरीक्षण करें। इस भांति शान्त चुनावरहित निरीक्षण से विचारों की गति क्षीण होती जाती है और अन्ततः निर्विचार-समाधि उपलब्ध होती है।

निर्विचार-समाधि में विचार तो विलीन हो जाते हैं और विचारशक्ति का उद्भव होता है। उस विचारशक्ति को ही मैं प्रज्ञा कहता हूं।

विचारशक्ति के जागरण के लिए विचारों से मुक्त होना अत्यन्त आवश्यक है।

६. शून्य कैसे हों?

शून्य से पूर्ण का दर्शन होता है। और शून्य आता है विचार-प्रक्रिया के तटस्थ, चुनावरहित साक्षी-भाव से। विचार में शुभाशुभ का निर्णय नहीं करना है। वह निर्णय राग या विराम लाता है। किसी को रोक रखने और किसी को परित्याग करने का भाव उससे पैदा होता है। वह भाव ही विचार-बन्धन है। वह भाव ही चित्त का जीवन और प्राण है। उस भाव के आधार पर ही विचार की शृंखला अनवरत चलती जाती है।

विचार के प्रति कोई भी भाव हमें विचार से बांध देता है। उसके तटस्थ साक्षी का अर्थ है, विचार को निर्भाव के बिन्दु से देखना। विचार को निर्भाव के बिन्दु से देखना ध्यान है। बस, देखना है (जस्ट सीइंग) और चुनाव नहीं करना है। और निर्णय नहीं लेना है।

यह — 'बस देखना' — बहुत श्रमसाध्य है। यद्यपि कुछ करना नहीं है, पर कुछ न कुछ करते रहने की हमारी इतनी आदत बनी है कि कुछ 'न करने जैसा' सरल और सहज

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कार्य भी बहुत कठिन हो गया है। बस, देखने-मात्र के बिन्दु पर स्थिर होने से क्रमशः विचार विलीन होने लगते हैं। वैसे ही, जैसे प्रभात में सूर्य के उत्ताप में दूब पर जमे ओसकण वाष्पीभूत हो जाते हैं।

बस देखने का उत्ताप विचारों के वाष्पीभूत हो जाने के लिए पर्याप्त है। वह राह है जहां से शून्य उद्घाटित होता है और मनुष्य को आंख मिलती है — और आत्मा मिलती है।

७. ध्यान की परिभाषा

ध्यान किसे कहते हैं, और उसे करने की क्या विधि है?

निर्विचार-चेतना ध्यान है। और निर्विचारणा के लिए विचारों के प्रति जागना ही विधि है।

विचारों का सतत प्रवाह है मन । इसी प्रवाह के प्रति मूर्च्छित होना— सोये होना— अजाग्रत होना साधारणतः हमारी स्थिति है।

इस मूर्च्छा से पैदा होता है तादात्म्य। मैं मन ही मालूम होने लगता हूं। जागें और विचारों को देखें।

जैसे कोई राह चलते लोगों को किनारे खड़े होकर देखे। बस, इसे जागकर देखने से क्रांति घटित होती है। विचारों से स्वयं का तादात्म्य टूटता है — इस तादात्म्य -भंग के अन्तिम छोर पर ही निर्विचार - चेतना का जन्म होता है। ऐसे ही, जैसे आकाश में बादल हट जायें तो आकाश दिखाई पड़ता है। विचारों से रिक्त चित्ताकाश ही स्वयं की मौलिक स्थिति है। वही समाधि है।

ध्यान है विधि। समाधि है उपलब्धि।

लेकिन, ध्यान के सम्बन्ध में सोचें मत। ध्यान के सम्बन्ध में विचारना भी विचार है है। उसमें तो जायें। डूबें। ध्यान को सोचें मत — चखें।

मन का काम है सोना और सोचना। जागने में उसकी मृत्यु है। और ध्यान है जागना। इसीलिए मन कहता है— चलो, ध्यान के सम्बन्ध में ही सोचें। यह उसकी आत्म-रक्षा का अन्तिम उपाय है।

इससे सावधान होना। सोचने की जगह, देखने पर बल देना। विचार नहीं, दर्शन— बस यही मूलभूत सूत्र है। दर्शन बढ़ता है, तो विचार क्षीण होते हैं। साक्षी जागता है, तो स्वप्न विलीन होता है।

ध्यान आता है, तो मन जाता है। मन है द्वार, संसार का। ध्यान है द्वार, मोक्ष का। मन से जिसे पाया है, ध्यान में वह खो जाता है। मन से जिसे खोया है, ध्यान में वह मिल जाता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

८. निराकार के ध्यान की विधि

क्या निराकार वस्तु का ध्यान हो सकता है? और यदि हो सकता है, तो क्या निराकार, निराकार ही बना रहेगा?

ध्यान का साकार या निराकार से कोई भी सम्बन्ध नहीं है। और न ध्यान का विषय-वस्तु से ही कोई सम्बन्ध है। ध्यान है विषय-वस्तु-रहितता— प्रगाढ़ निद्रा की भांति । लेकिन, निद्रा में चेतना नहीं है — और ध्यान में चेतना पूर्णरूपेण है। अर्थात निद्रा अचेतन-ध्यान है। या, ध्यान सचेतन-निद्रा है। प्रगाढ़ निद्रा में भी हम वहीं होते हैं, जहां ध्यान में होते हैं— लेकिन, मूर्च्छित। ध्यान में भी हम वहीं होते हैं, जहां निद्रा में होते हैं— लेकिन, जाग्रत।

जागते हुए सोना ध्यान है। या सोते हुए जागना ध्यान है। फिर जो जाना जाता है, वह न आकार है, न निराकार है। वह है आकार में निराकार, या निराकार में आकार। असल में वहां द्वंद्व नहीं है, द्वैत नहीं है। और, इसलिए हमारे सब शब्द व्यर्थ हो जाते हैं। वहां न ज्ञाता है, न ज्ञेय है; न दृश्य है,न द्रष्टा है। इसलिए, वहां जो है, उसे कहना असम्भव है। कठिन नहीं, असम्भव है।

ध्यान है मन की मृत्यु और भाषा है मन की अर्धांगिनी। वह मन के साथ ही सती हो जाती है। वह विधवा होकर जीना नहीं जानती है। जाने, तो जी नहीं सकती है। और उसका पुनर्विवाह भी नहीं हो सकता है। क्योंकि, मन के पार जो है, वह उससे विवाह के लिए चिर-अनुत्सुक है। उसका विवाह हो ही चुका है — शून्यता से।

९. स्वाध्याय और ध्यान का अन्तर

स्वाध्याय और ध्यान में क्या अन्तर है?

स्वाध्याय, अर्थात स्वयं का अध्ययन। और स्वयं का अध्ययन विचार के बिना सम्भव नहीं है। इसलिए, स्वाध्याय विचार की ही प्रक्रिया है जबकि ध्यान है विचारातीत। वह है विचारों के प्रति जागना। स्वाध्याय है सोचना।

ध्यान है जागना। सोचने में जागना नहीं है। क्योंकि जागे और सोचना गया। सोच-विचार में होने के लिए निद्रा आवश्यक है।

सोच-विचार, आंखें खोलकर स्वप्न देखना है। स्वप्न, आदिम सोच-विचार है। स्वप्न चित्रों की भाषा में सोचते हैं। सोचना स्वप्न का सभ्य रूप है। सोचने में चित्रों की जगह शब्द और प्रत्यय ले लेते हैं। लेकिन, ध्यान एक अलग ही आयाम है। वह स्वप्न-मात्र से मुक्ति है। वह विचार-मात्र के पार जाना है। स्वप्न अचेतन मन का चिंतन है। विचार चेतन मन का चिंतन है। ध्यान मनातीत है।

चेतन मन जब अन्य को विषय बनाता है, तो भी वह विचार है, और जब स्वयं को विषय बनाता है, तो भी। ध्यान में विषय से ऊपर उठना है— विषय मात्र से।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इससे कोई मौलिक भेद नहीं पड़ता है कि विषय क्या है। धन है या धर्म? पर है या स्व? मौलिक भेद — रूपान्तरण — या क्रान्ति तो तभी घटित है, जब चेतना विषय के बाहर हो जाती है। क्योंकि, तभी 'स्व' को जाना जा सकता है। जब चेतना के पास जानने को कुछ भी शेष नहीं बचता है, तभी वह स्वयं को जान पाती है। ज्ञेय जब कोई भी नहीं है, तभी आत्मज्ञान होता है। अर्थात्, स्वाध्याय है स्वयं के सम्बन्ध में सोच -विचार, और ध्यान है स्वयं को जानना। और निश्चय ही, जिसे जानते ही नहीं, उसके सम्बन्धों में सोचेंगे-विचारेंगे क्या? और जिसे जान ही लिया, उसके सम्बन्ध में सोच-विचार का प्रश्न ही कहां है?

इसलिए, स्वाध्याय से बचें तो अच्छा है। क्योंकि, वह भी ध्यान में बाधा है — और सर्वाधिक सबल। क्योंकि, वह ध्यान का नाटक बन जाती है। मन तो उससे बहुत प्रसन्न होता है, क्योंकि इस भांति वह पुनः स्वयं को बचा लेता है। लेकिन, साधक भटक जाता है। वह फिर विषय में उलझ जाता है।

मन है विषय-उन्मुखता। उसे चाहिए विषय। यह विषय फिर चाहे कोई भी हो — काम हो या राम, वह विषय मात्र से राजी है। इसीलिए, ध्यान के लिए काम और राम दोनों से ऊपर उठना आवश्यक है। 'पर' और 'स्व' दोनों को सम-भाव से विदा देनी है। तभी वह प्रकट होता है, जो कि 'स्व' है — और जो कि 'पर' भी है। या कि जो न 'स्व' है न 'पर' है, वरन् 'बस है'।

१०. ध्यान की अन्तिम अवस्था तथा दिन-प्रतिदिन वृद्धि

ध्यान की गहराई में उतरने से उसकी दिन-प्रतिदिन वृद्धि किस प्रकार से होगी, और ध्यान की अन्तिम अवस्था क्या है?

आप भोजन कर लेते हैं, फिर उसे पचाना नहीं होता है, वह पचता है। ऐसे ही आप जागें विचारों के प्रति। विचारों के प्रति मूर्च्छा न रहे — इतना आप करें। यह है ध्यान का भोजन। फिर पचना अपने आप होता है। पचना याने ध्यान का खून बनना — ध्यान की गहराई। भोजन आप करें — और पचना परमात्मा पर छोड़ दें। वह काम सदा से ही उसने स्वयं के हाथों में ही रखा हुआ है।

लेकिन, यद्यपि आप भोजन पचा नहीं सकते हैं, फिर भी उसके पचने में बाधा जरूर डाल सकते हैं। ध्यान के सम्बन्ध में भी यही सत्य है। आप ध्यान के गहरे होने में बाधा जरूर डाल सकते हैं। विचारों के प्रति सूक्ष्मतम चुनाव और झुकाव ही बाधा है।

शुभ या अशुभ में चुनाव न करें। निंदा या स्तुति, दोनों से बचें। न कोई विचार अच्छा है, न बुरा। विचार सिर्फ विचार है। और आपको विचार के प्रति जागना है। सूक्ष्मतम चुनाव भी बाधा है जागने में। तराजू के दोनों पलड़े सम हों, तभी ध्यान का कांटा स्थिर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होता है। और ध्यान का कांटा स्थिर हुआ कि तराजू, पलड़े और कांटा — सब तिरोहित हो जाते हैं। फिर जो शेष रह जाता है, वही समाधि है; वही ध्यान की अन्तिम अवस्था है।

११. निर्विचार हो जाने पर मन की परिस्थिति

साक्षीभाव से मन को देखने से जब मन निर्विचार हो जाता है, उसके बाद क्या परिस्थिति होती है?

परिस्थिति? परिस्थिति वहां कहां? बस, सब परिस्थितियां मिट जाती हैं और वही शेष रह जाता है जो है। और जो है, वह सदा से है। परिस्थिति प्रतिपल बदलती है, वह कभी नहीं बदलता है। परिस्थिति परिवर्तन है और वह सनातन। परिस्थिति में सुख है, दुख है। सुख दुख में बदलता है, दुख सुख में बदलता है। बदलता है तो और कोई राह भी नहीं है। और वहां न सुख है, न दुख है, क्योंकि वहां परिवर्तन नहीं है। फिर वहां जो है उसी का नाम आनन्द है।

ध्यान रहे कि आनन्द सुख नहीं है। क्योंकि सुख वही है, जो दुख में बदल सकता है। और आनंद दुख में नहीं बदलता है। आनन्द बदलता ही नहीं है। इसीलिए आनन्द से विपरीत कोई स्थिति नहीं है, आनन्द अकेला है। आनन्द अद्वैत है।

ऐसे ही, परिस्थिति में ही जन्म है, मृत्यु है। जहां जन्म है, वहां मृत्यु होगी ही। वे एक-ही पेन्डुलम की दो परिवर्तन स्थितियां हैं। जन्म मृत्यु बनता रहता है। फिर मृत्यु जन्म बनती रहती है। परिस्थिति इसी चक्र का नाम है। और वहां— सत्य में — न जन्म है, न मृत्यु।

कहें कि वहां जीवन है। जन्म की उल्टी परिस्थिति मृत्यु है। जीवन से उल्टा कुछ भी नहीं है। वहां जीवन है, जीवन है, और जीवन है। रस , आनन्द, जीवन का नाम ही ब्रह्म है।

१२. मन स्थिर करने का उपाय

मन को स्थिर कैसे करें? उसका उपाय क्या है?

मन स्थिर होता ही नहीं। वस्तुतः, अस्थिरता, चंचलता का नाम ही मन है। इसीलिए मन या तो होता है, या नहीं होता है। मन या अ-मन, बस ऐसी ही दो स्थितियां हैं। मन से सत्य संसार की भांति दीखता है। संसार अर्थात् चंचलता के द्वार से देखा गया ब्रह्म। और अ-मन से, जो है, वह वैसा ही दीखता है, जैसा है।

सत्य जैसा है, उसे वैसा ही जानना ब्रह्म है। इसलिए मन को स्थिर करने की बात ही न पूछें। मन को स्थिर नहीं करना है, बल्कि मिटाना है। शान्त-तूफान-जैसी कोई चीज देखी-सुनी है? ऐसे ही शान्त-मन-जैसी कोई चीज नहीं है। मन अशान्ति का ही पर्याय

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। और तब उपाय का तो सवाल ही नहीं उठता है। सब उपाय मन के ही हैं। मन मिटाना है तो उपाय करने में नहीं, निरुपाय में जाना पड़ता है। उपाय करने से मन घटता नहीं बढ़ता है। क्योंकि, उपाय वही तो करता है। और मन ही जो करता है, उससे मन कैसे मिट सकता है?

फिर क्या करें? नहीं, करें कुछ भी नहीं— बस, जागें — देखें,सारी बातें। मन को ही देखें; मन के प्रति होशपूर्ण हों। और फिर धीरे धीरे मन गलता है, पिघलता है, मिटता है। साक्षी-भाव सूर्योदय की भांति मन की ओस को वाष्पीभूत कर देता है। चाहें तो कहें कि यही उपाय है।

१३. मन में उठते बुरे भावों का निराकरण

मन में उठते बुरे भावों को किस प्रकार रोका जाये?

यदि रोकना है तो रोकना ही नहीं। रोका, कि वे आये। उनके लिए निषेध सदा निमंत्रण है। और दमन से उनकी शक्ति कम नहीं होती, वरन् बढ़ती है। क्योंकि दमन से वे मन की और भी गहराइयों में चले जाते हैं। और न ही उन भावों को बुरा कहना। क्योंकि बुरा कहते ही उनसे शत्रुता और संघर्ष शुरू हो जाता है। और स्वयं में स्वयं से संघर्ष सन्ताप का जनक है। ऐसे संघर्ष से शक्ति का अकारण अपव्यय होता है और व्यक्ति निर्बल होता जाता है। जीतने का नहीं, हारने का ही यह मार्ग है।

फिर क्या करें?

पहली बात — जानें कि न कुछ बुरा है, न भला है— बस भाव हैं। उन पर मूल्यांकन न जड़ें; क्योंकि तभी तटस्थता सम्भव है।

दूसरी बात — रोकें नहीं, देखें। कर्ता नहीं,. द्रष्टा बनें। क्योंकि, तभी संघर्ष से विरत हो सकते हैं।

तीसरी बात — जो है, उसे बदलना नहीं है, स्वीकार करना है। जो है, सब परमात्मा का है। इसलिए आप बीच में न आयें तो अच्छा है।

आपके बीच में आने से ही अशांन्ति है। और अशान्ति में कोई भी रूपान्तरण सम्भव नहीं है। समग्र-स्वीकृति का अर्थ है कि आप बीच से हट गये हैं। और आपके हटते ही क्रान्ति है। क्योंकि जिन्हें आप बुरे भाव कह रहे हैं, उनके प्राणों का केन्द्र अहंकार है। अहंकार है तो वे हैं। अहंकार गया कि वे गये। आपके हटते ही वह सब हट जाता है, जिसे कि आप जन्मों-जन्मों से हटाना चाहते थे और नहीं हटा पाये थे। क्योंकि, उन सबों की जड़ें आपमें ही छिपी थीं।

लेकिन, लगता है कि आप सोच में पड़ गये!

सोचिये नहीं, हटिये। बस हट ही जाइये और देखिये। जैसे अन्धे को अनायास आंखें मिल जायें, बस ऐसे ही सब कुछ बदल जाता है। जैसे अन्धेरे में अचानक दीया जल उठे,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बस ऐसे ही सब कुछ बदल जाता है।

कृपा करिये और हटिये!

१४. ध्यानपूर्वक किये गये जाप का फल

ध्यानपूर्वक किया हुआ जाप क्या फलीभूत नहीं हो सकता है?

जब ध्यान ही करना है, तो जाप अनावश्यक है। जपादि ध्यान से बचने की विधियां हैं। वे विचार को ही पीछे के द्वार से भीतर लाने के उपाय हैं।

ध्यान है जागरण-सजगता-साक्षीभाव। और जपादि हैं ज्यादा-से-ज्यादा आत्मसम्मोहन। स्वयं को सुलाने के उपाय। नींद न आती हो तो उपयोगी हैं। शान्तिदायी भी हैं — वैसे ही, जैसे नींद है। शब्द की पुनरुक्ति आत्मसम्मोहन बन जाती है — किसी भी शब्द की। फिर वह चाहे हो 'ओम्' चाहे हो 'कोका-कोला'।

अशांत मन स्वयं को भूलने के लिए तो सदा ही तैयार है। इसीलिए तो मादक द्रव्यों का इतना आकर्षण है, जपादि अरासायनिक मादकतायें हैं।

लेकिन भूलने से क्या होगा? विस्मरण विमुक्ति तो नहीं है? जो है, वह फिर लौटेगा; फिर फिर लौटेगा। बेहोश कितनी देर रहियेगा?

नहीं, ऐसे नहीं चलेगा। स्वयं को बदलना ही होगा। विस्मरण नहीं, रूपांतरण ही चाहिए। ध्यान रूपांतरण है। और जाप से, इसीलिए, वह आमूल भिन्न है। ध्यान है, स्मृतिपूर्वक होना।

जो है, बाहर या भीतर, उसके प्रति जागते हुए होने का नाम ध्यान है। जाप है क्रिया; ध्यान है अक्रिया। जाप में कुछ करना होगा। इसीलिए वह मानसिक है। और मन की कोई भी क्रिया कभी-भी मन से बाहर नहीं ले जा सकती है।

ध्यान है जागना — देखना — साक्षित्व। यह क्रिया नहीं हैं। यह समस्त क्रियाओं का विश्राम है। इसलिए, ध्यान मन के पार है ... और जो सजातीय है, उसे जानने का द्वार है।

१५. ध्यान का रूप ले लेने वाले जप

क्या ऐसे भी कोई जाप हैं जो सहज जप व ध्यान का रूप ले लें?

नहीं! क्योंकि, असहज सहज कैसे हो सकता है? असहज सहज नहीं बनता है। असहज से मुक्ति ही सहज में ले जाती है। प्रयास अप्रयास का द्वार नहीं है। प्रयास से मुक्ति ही अप्रयास का द्वार बनती है। और सत्य को प्रयास से नहीं पाया जा सकता है। क्योंकि, वह तो है ही — और मिला ही हुआ है। प्रयास में हैं हम, इसीलिए उससे चूके हुए हैं। वह है निकट और सदा से उपस्थित। लेकिन, हम हैं व्यस्त — अर्थात् — उसके प्रति अनुपस्थित। पर अनुपस्थिति तो समान ही है। कोई धन पाने में व्यस्त है, कोई धर्म पाने में। कोई फिल्मी गीत गाने में व्यस्त है, कोई जपजाप में। कोई माला फेरने में

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

व्यस्त है, कोई धूम्रपान में। कोई कागज के शास्त्रों में उलझा है, कोई कागज के पत्तों में लीन है। लेकिन, सभी उसके प्रति अनुपस्थित हैं, जो कि है — सभी ओर — सदा से। एक व्यस्तता से ऊब जाता है मन, तो तत्काल दूसरी व्यस्तता का आविष्कार कर लेता है। धूम्रपान से ऊब जाता है, तो माला फेरता है। दुकान से ऊबता है, तो मन्दिर खोज लेता है — लेकिन, अव्यस्त नहीं होता है। जबकि, जो है, वह अव्यस्त क्षणों के अन्तराल में ही जाना और जिया जाता है।

उसे खोजो मत, वह तो यह रहा; उसके लिए दौड़ें मत, वह तो यहीं है। उसके लिए प्रयास मत करें, क्योंकि उसका निर्माण नहीं करना है, वह तो है ही। केवल, बस आप ही हों — 'अभी और यहीं — और वह प्रकट हो जाता है।

१६. कल्पना से कल्पना कटती है

क्या कल्पना से कल्पना नहीं कटती है?

कल्पना से कल्पना कटती है। लेकिन, कल्पना करने वाला मन नहीं कटता है। और काटना कल्पना को नहीं, मन को ही है। कल्पना करें, या कल्पना न करें, मन दोनों ही स्थितियों में सबल होता है। क्योंकि, दोनों में ही उसकी शक्ति काम आती है।

जाना है मन के बाहर। और यह उसे सबल करके नहीं हो सकता है। इसीलिए ऐसा कुछ करें, जो मन को निर्बल करे; निर्वीर्य करे, मृत करे। लेकिन कुछ भी क्यों न करें, वह सबल ही होगा। क्योंकि, सब करना उसी का करना है। तब न करने — अक्रिया के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है। न करना — अर्थात — बस होना। अब हैं मात्र और कुछ भी नहीं कर रहे हैं। तभी यह जागरण आता है, जो कि ध्यान है। और ध्यान मन से मुक्ति है। ध्यान, अर्थात अ-मन।

मन संसार में वाहन है। अ-मन सत्य में। संसार का वाहन सत्य के आयाम में साधक तो है ही नहीं, बाधक भी है। जमीन पर चलें बैलगाड़ी से ।। लेकिन, आकाश में बैलगाड़ी से न उड़ें तो अच्छा है। यह आपके भी हित में है, और बैलों के भी हित में। लेकिन बैलगाड़ी से परिचित होने के कारण ख्याल आता है कि जो जमीन पर चलती थी, वह आकाश में क्यों न चलेगी?

इससे बैलगाड़ी की कोई भूल नहीं है। भूल है तो आकाश की ही है कि वह पृथ्वी नहीं है।

लेकिन, यह तो कभी हो भी सकता है कि बैलगाड़ी आकाश में भी उड़ सके। क्योंकि पृथ्वी और आकाश भिन्न हैं, लेकिन विपरीत नहीं। पर मन की सत्य में कभी कोई गति नहीं हो सकता है। क्योंकि संसार और सत्य के आयाम ही विपरीत हैं। जैसे स्वप्न में जागना सम्भव नहीं है। क्योंकि, जब तक स्वप्न है, तब तक जागरण नहीं हैं और जब जागरण है, तब स्वप्न नहीं है। स्वप्न के अस्तित्व की मूलभूत शर्त ही निद्रा है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऐसी ही स्थिति मन और सत्य की हैं। जब तक मन है, तब तक सत्य नहीं है। और जब सत्य है, तो मन खोजे से भी नहीं मिलता है। सत्य को आने देना है, तो मन को जाने दें। उसके रिक्त स्थान में ही सत्य का सिंहासन निर्मित होता है।

१७. सजग जीने की विधि और सजगता से तात्पर्य

सजग से आपका क्या तात्पर्य है? पल-पल सजग जीवन कैसे जीया जाता है?

सजगता से तात्पर्य है, बस सजगता। साधारणतः मनुष्य सोया-सोया जीता है। स्वयं की विस्मृति निद्रा है। और स्वयं का स्मरण जागृति। ऐसे जियें कि कोई भी स्थिति स्वयं को न भुला सके। उठते-बैठते, चलते-फिरते —सब में — विश्राम में 'स्व' न भूलें। 'मैं हूं' इसकी सतत् चेतना बनी रहे। फिर धीरे-धीरे 'मैं' मिट जाता है और मात्र 'हूं' रह जाता है। क्रोध आये, तो जानें कि 'मैं हूं' — और क्रोध नहीं आयेगा। क्योंकि क्रोध केवल निद्रा में ही प्रवेश करता है। विचार घेरें, तो जानें कि 'मैं हूं' — और विचार विदा होने लगेंगे। क्योंकि वे केवल निद्रा के ही संगी-साथी भर हैं। और जब चित्त से काम, क्रोध, लोभ, मोह सब विदा हो जायेंगे, तब अन्त में विदा होगा 'मैं' और जहां मैं नहीं वही वह है, जो ब्रह्म है।

१८. साक्षीत्व की प्रक्रिया

हमारा जो मन है वह एक तीर की तरह है जिसमें एक तरफ फल लगा हुआ है। तीर को आपने देखा है, तीर दो तरफ नहीं चल सकता? अगर आप तीर को चला दें, तो एक ही तरफ जायेगा। या कि आप सोचते हैं, दो तरफ भी जा सकता है? तीर दो तरफ जाने का कोई उपाय नहीं है। तीर जायेगा अपने निशाने की तरफ — एक तरफ।

तो जब प्रत्यंचा पर कोई तीर चढ़ता है, और प्रत्यंचा से तीर छूटता है, तो दो बातें ख्याल में ले लें — प्रत्यंचा, चढ़ा था, वहां से छूट जाता है, दूर हटने लगता है; और जहां वह नहीं था — साध्य, लक्ष्य— उस तरफ बढ़ने लगता है। एक स्थिति यह थी कि प्रत्यंचा पर चढ़ा था तीर, दूर बैठा था पक्षी वृक्ष पर, उसकी छाती में नहीं चुभा था तीर, तीर था प्रत्यंचा पर — पक्षी पर नहीं था; फिर छूटा तीर, प्रत्यंचा से दूर होने लगा — और पक्षी के पास होने लगा। फिर एक स्थिति आयी, तीर पक्षी की छाती में चुभ गया — प्रत्यंचा खाली रह गयी और तीर पक्षी की छाती में हो गया।

ध्यान में पूरे समय हम यही कर रहे हैं — कि जब भी हमारे ध्यान का तीर छूटता है तो हमारी प्रत्यंचा से खाली हो जाता है — भीतर· और जिसकी तरफ जाता है, उस पर जाकर टिक जाता है।

कोई चेहरा आपको सुन्दर लगा, तीर छूट गया ध्यान का। भीतर नहीं है अब तीर।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अब ध्यान भीतर नहीं है। अब ध्यान भागा और दौड़ा और सुन्दर चेहरे से जाकर लग गया। सड़क पर ही हीरा पड़ा है; तीर छूट गया प्रत्यंचा से।

अब ध्यान भीतर नहीं है। अब ध्यान भागा, दौड़ा और जाकर चुभ गया हीरे की छाती में। अब ध्यान हीरे में है, अब आप में नहीं है — या अब ध्यान कहीं और है।

तो आपके सब ध्यान के तीर कहीं... कहीं... कहीं जाकर छिद गये हैं। आपके पास भीतर कोई ध्यान नहीं है; हमेशा बाहर जा रहा है।

तीर तो एक-तरफा ही हो सकते हैं, लेकिन ध्यान दो-तरफ हो सकता है। और वही हो जाये तो साक्षी का अनुभव होता है। ध्यान का तीर दो-तरफा हो सकता है; उसमें दो फल हो सकते हैं। और जब आपका ध्यान किसी की तरफ जाये, तो अगर आप इतना कर पाएं, तो आपको साक्षी का अनुभव किसी-न-किसी दिन हो जायेगा।

जब आपका ध्यान किसी पर जाये, ... रास्ते से गुजरी कोई सुन्दर युवती, कोई सुन्दर युवक — आपका ध्यान अटक गया! अब आप अपने को बिल्कुल भूल गये! यहां भीतर ध्यान न रहा । अब आप होश में नहीं हैं; अब आप बेहोश हैं। क्योंकि आपका होश तो किसी और के पास चला गया। अब आपका होश तो उसकी छाया बन गया। अब आप होश में नहीं हैं!

अगर आप यह काम कर सकें कि कोई आपको सुन्दर दिखाई पड़ा, ध्यान उस पर गया, उस समय इस पर भी भीतर ध्यान जाये, जहां से प्रत्यंचा से तीर छूट रहा है; उसकी तरफ भी हम एक साथ ही अगर देख पायें — जहां ध्यान जा रहा है, वह स्रोत — और जिसकी तरफ ध्यान जा रहा है, वह लक्ष्य — अगर दोनों हमारे ध्यान में एक साथ आ जायें, तो आपको पहली दफा पता चलेगा कि साक्षी का क्या अर्थ है। कहां से ध्यान जा रहा है, उस स्रोत का अनुभव होना चाहिए; कहां से ध्यान पैदा हो रहा है?

वृक्ष हमें दिखायी पड़ता है; शाखायें दिखायी पड़ती हैं; फूल-पत्ते दिखायी पड़ते हैं; फल लग जाते हैं, वे दिखायी पड़ते हैं — जड़ें हमें नहीं दिखाई पड़तीं! जड़ें अन्धेरे में छिपी हैं। लेकिन वहीं से वृक्ष रस ले रहा है। आपका ध्यान फैलता है चारों तरफ, जगत् का बड़ा वृक्ष निर्मित हो जाता है। लेकिन जहां से ध्यान निकलता है — जिस स्रोत से, जिस चैतन्य के सागर से निकलता है,उसका कोई भी पता नहीं चलता। उन जड़ों का भी बोध साथ-साथ होने लगे, एक साथ आपको दोनों बात दिखायी पड़ने लगें,...

...इसे ऐसा समझें — मैं बोल रहा हूं तो आपका ध्यान मेरे बोलने पर लगा है। इसको दोहरा तीर बना लें। यह दोहरा तीर अभी — इसी वक्त भी बन सकता है। जब मैं बोल रहा हूं, तो आप केवल — मैं जो बोल रहा हूं वही न सुनें, आपको यह भी स्मरण रहे कि मैं सुन रहा हूं। बोलने वाला कोई और है, वह बोल रहा है; मैं सुनने वाला हूं,मैं सुन रहा हूं। अगर आप एक क्षण को भी — 'अभी—यहीं' — ये दोनों बातें एक साथ कर लें — सुनें भी और सुनने वाले का स्मरण भी, रिमेम्बरिंग भी भीतर बनी रहे कि मैं सुन रहा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हूं...

...शब्द दोहराने की जरूरत नहीं है। अगर आप कहें कि 'मैं सुन रहा हूं'। तो उतनी देर में आप सुन न पायेंगे; जो मैंने कहा वह चूक जायेगा।

भीतर शब्द बनाने की जरूरत नहीं कि ... 'मैं सुन रहा हूं' ...'मैं सुन रहा हूं'। अगर आपने ऐसा किया तो उतनी देर आप बहरे हो जायेंगे। उस सेकेन्ड आप अपनी भीतर की आवाज सुनेंगे कि 'मैं सुन रहा हूं', लेकिन जो मैं बोल रहा हूं यहां से वह आपको सुनाई नहीं पड़ेगा...।

मैं जो बोल रहा हूं वह सुनाई पड़ता रहे, और साथ ही आपको यह भी — सुनना भी सुनाई पड़ता रहे। आप सुननेवाले हैं — ऐसी भी आपको प्रतीति हुई, एहसास हुआ, अनुभव हुआ — यह दूसरा बिन्दु हो गया।

यह दूसरा बिन्दु पाना बहुत कठिन है। अगर यह दूसरा बिन्दु आपको मिल जाये तो तीसरा बिन्दु पाना बहुत सरल है। वह तीसरा बिन्दु यह है कि बोलने वाला है 'अ', सुनने वाला है 'ब', फिर आप कौन हैं भीतर जो कि दोनों को अनुभव कर रहे हैं — बोलने वाले को भी और सुनने वाले को भी? आप तीसरे हो गये — दि थर्ड प्वाइन्ट। जह जो तीसरा बिन्दु है, वही साक्षी है। इस तीसरे के पार नहीं जाया जा सकता। यह तीसरा आखिरी बिन्दु है। और यह है त्रिकोण जीवन का — दो बिन्दुं — विषय और विषयी; और तीसरा बिन्दु दोनों का — साक्षी। दोनों को अनुभव करने वाला। दोनों को भी देख लेने वाला। दोनों का गवाह।

१९. सजगता और साक्षित्व का फर्क

सजगता और साक्षित्व दोनों एक हैं, या उनमें भेद है?

सजगता और साक्षित्व दोनों एक नहीं हैं, लेकिन एक ही वस्तु के दो छोर अवश्य हैं। वे चेतना के दो अनुभव हैं।

चेतना को ऐसा तीर समझें, जिसमें कि दोनों ओर फल हैं। इस तीर का एक फल उस ओर है, जिस के प्रति कि चेतना चेतन है। और दूसरा फल उस ओर है, जहां से कि चेतना चेतन है। सजगता में पहली बात की ओर इशारा है। साक्षित्व में दूसरी बात की ओर।

ध्यान इन दोनों में से किसी भी छोर से शुरू किया जा सकता है। क्योंकि, एक छोर अनिवार्यतः दूसरे छोर को भी अपने साथ ही लपेट पाता है। सजग हों, तो साक्षी आ जायेगा। साक्षी हों, तो सजगता आ जायेगी। जहां चेतना है, वहां दोनों हैं। जहां अचेतना है, वहां दोनों नहीं हैं।

और जहां एक है, वहां अर्धचेतना, अर्धमूर्च्छा है। साधारणतः मनुष्य अर्धचेतना — अर्धमूर्च्छा की अवस्था में है। वह अर्धसजग, अर्ध-साक्षी है। उसका होने का बोध अति धूमिल है। जैसे कुहासा घिरा हो चारों तरफ, ऐसे कुछ दिखाई भी पड़ता है, कुछ नहीं भी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दिखाई पड़ता है। जो देखता है, उसकी भी झलक कभी मिलती है, कभी नहीं मिलती है। ध्यान इस अर्ध-स्थिति को तोड़ने का प्रयास है। निद्रा में, गहरी निद्रा में, स्वप्न-तुल्य निद्रा में, सजगता और साक्षित्व दोनों सो जाते हैं। ध्यान की पूर्णता में दोनों खो जाते हैं।

इसीलिए , समाधि और सुषुप्ति विपरीत होकर भी एक अर्थ में समान हैं। सुषुप्ति में न सजगता है, न साक्षी है; क्योंकि दोनों ही सो गये हैं। समाधि में भी दोनों नहीं हैं, क्योंकि दोनों खो गये हैं। सुषुप्ति में मूर्च्छा पूर्ण है, इसलिए द्वैत नहीं है। समाधि में प्रज्ञा पूर्ण है, इसलिए द्वैत नहीं है। पूर्ण सदा अद्वैत है। लेकिन, सुषुप्ति के गर्भ में द्वैत है। जबकि, समाधि में द्वैत की मृत्यु हो गयी है।

ध्यान है प्रक्रिया, मूर्च्छा से प्रज्ञा की ओर। उसके प्राथमिक प्रारम्भ ध्रुव दो हैं — सजगता और साक्षित्व। बहिर्मुखी व्यक्तित्व के लिए सजगता से प्रारम्भ करना आसान है — क्योंकि सजगता बाहर से प्रारम्भ होती है। अन्तर्मुखी व्यक्तित्व के लिए साक्षित्व से प्रारम्भ करना आसान है — क्योंकि साक्षित्व भीतरी ध्रुव से शुरू होता है।

ध्यान के ये प्रस्थान बिन्दु भिन्न हैं, लेकिन उपलब्धि एक ही है। जैसे ही ध्यान में एक ध्रुव स्पष्ट होता है, वैसे ही दूसरा ध्रुव अनिवार्यतः प्रकट हो जाता है। और जैसे ही दोनों ध्रुव पूर्णरूपेण प्रकट होते हैं, वैसे ही दोनों का अतिक्रमण हो जाता है। यह अतिक्रमण ही समाधि बन जाता है। फिर दो नहीं हैं। फिर तो जो है, वह है।

२०. साक्षी और तथाता में भेद

साक्षी और तथाता में भेद बताने की कृपा करें?

साक्षी में द्वैत मौजूद है। साक्षी अपने को अलग और जिसे जान रहा है उसे अलग मानता है। अगर उसके पैर में कांटा गड़ा है, तो साक्षी कहता है — मुझे नहीं गड़ा, मैं जानने वाला हूं, कांटा शरीर को गड़ा है। गड़ना कहीं और है, जानना कहीं और है।

'जानने' और 'होने' में द्वैत है साक्षी की साधना में। इसलिए जो साधक साक्षी पर रुक जायेंगे, वे एक तरह के ड्यूअलिजम, एक तरह के द्वैत से घिर जायेंगे। अन्ततः वे जगत को दो हिस्से में तोड़ देंगे — चेतन और जड़। चेतन — वह जो जानना है; जड़ — वह जो जाना जाता है। अन्ततः इस जगत् को दो हिस्सों में तोड़े बिना वे नहीं मानेंगे — पुरुष और प्रकृति में।

साक्षी प्रकृति और पुरुष तक जायेगा। वह तोड़ देगा — वह रही प्रकृति — जड़, और यह रहा पुरुष — चेतन। जानने वाला (नोअर) और जाना गया (नोन) में फासला खड़ा हो जायेगा।

तथाता और भी बड़ी बात है। तथाता का मतलब है, कोई द्वैत नहीं है; न कोई जानने वाला है, न कुछ जानने को है — या जो जानने वाला है, वही जाना भी जा रहा है। द नोअर इज द नोन।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अब ऐसा नहीं है कि कांटा अलग है और मैं अलग हूं। अब ऐसा भी नहीं है कि कांटा न गड़ा होता, तो अच्छा होता। अब ऐसा भी नहीं है कि कांटा निकल जाये, तो अच्छा हो। नहीं, अब ऐसा कुछ भी नहीं है। कांटे का होना, गड़ने का होना, गड़ने का पता चलना, पीड़ा का होना — सब हों सकता है। और सब एक ही चीज के छोर हैं।

तो कांटा भी मैं हूं। गड़ना भी मैं हूं। जानना भी मैं हूं। पहचानना भी मैं हूं। सब मैं हूं। इसलिए इस मैं के बाहर कोई जाना नहीं है। न तो ऐसा सोच सकता हूं कि कांटा न गड़ता— क्योंकि कैसे सोच सकता हूं! क्योंकि कांटा भी मैं हूं, जानना भी मैं हूं। न मैं ऐसा सोच सकता हूं कि कांटा न गड़े तो अच्छा; क्योंकि अपने ही को कहीं काटकर अलग करूंगा।

तथाता जो है, वह परम स्थिति है। वह, 'जो है,' वह है। 'जो है' उसकी परम स्वीकृति। उसमें कोई भेद नहीं है। लेकिन साक्षी हुए बिना तथाता तक नहीं पहुंचा जा सकता। हालांकि कोई चाहे तो साक्षी पर रुक सकता है और तथाता पर न पहुंचे। संकल्प के बिना कोई साक्षी तक पहुंच सकता है। हालांकि कोई चाहे तो संकल्प पर रुक जाये और साक्षी पर न पहुंचे।

जो आदमी संकल्प पर रुक जायेगा, वह आदमी शक्तिशाली तो बहुत हो जायेगा, लेकिन ज्ञानवान न हो पायेगा। इसीलिए संकल्प के दुरुपयोग भी हो सकते हैं, क्योंकि वहां ज्ञान अनिवार्य नहीं है। शक्ति तो बहुत आ जायेगी, इसलिए उससे दुरुपयोग हो सकते हैं।

सारा ब्लैक मैजिक जो है, वह संकल्प की ही शक्ति से पैदा हुआ है। क्योंकि ज्ञान तो कुछ भी नहीं है, शक्ति बहुत आ गयी है। उसका कुछ भी उपयोग हो सकता है। संकल्पवान व्यक्ति शक्ति से भर गया है। वह शक्ति का क्या उपयोग करेगा, यह कहना अभी मुश्किल है। वह बुरा उपयोग भी कर सकता है।

शक्ति तटस्थ है लेकिन शक्ति होनी तो चाहिए ही। बुरा करने के लिए भी होनी चाहिए, भला करने के लिए भी होनी चाहिए। और मेरा मानना है कि शक्तिहीन होने से शक्तिवान होना बेहतर है। चाहे बुरा भी करो तो ठीक है क्योंकि जो बुरा करता है, वह कभी अच्छा भी कर सकता है लेकिन, जो बुरा नहीं कर सकता, वह तो अच्छा भी नहीं कर सकता। इसलिए निर्वीर्य, शक्तिहीन होने से शक्तिवान होना बेहतर है।

शक्तिवान होने में भी शुभ और अशुभ की यात्रायें हैं। शक्तिवान होकर शुभ की यात्रा पर होना बेहतर है। शक्ति की शुभ की यात्रा अगर ठीक से चले, तो साक्षी पर नहीं पहुंचा देगी। अगर अशुभ की यात्रा चले, तो साक्षी पर पहुंचायेगी; साधक संकल्प की शक्ति में ही भटक कर रह जायेगा। तब मेस्मेरिज्म होगा; हिप्नोटिज्म होगा, तंत्र होगा, मंत्र होगा, जादू-टोना होगा; सब तरह की चीजें पैदा हो जायेंगी। लेकिन इससे कोई आत्मा की यात्रा नहीं होगी। वह भटकाव हो गया। शक्ति तो हुई, लेकिन भटक गयी।

अगर शक्ति शुभ की यात्रा पर चले, तो साक्षी का जन्म हो जायेगा। क्योंकि, अन्ततः

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जब शक्ति पैदा होगी, तो आदमी शक्ति का इसलिए उपयोग करेगा कि स्वयं को जान सके और पा सके।

यह मेरी शुभ यात्रा हो गयी। शक्ति की अशुभ यात्रा का मतलब है कि दूसरे को दबाऊं; दूसरे का मालिक हो जाऊं, दूसरे को कस लूं। तो अशुभ यात्रा शुरू हो गयी। वह ब्लैक मैजिक है। शक्ति से अपने को पाऊं, पहचानूं, जान लूं कौन हूं, क्या हूं — यह शुभ यात्रा हो गयी।

अगर शक्ति शुभ यात्रा पर होगी, तो साक्षी बन जायेगी। अगर साक्षी का भाव, सिर्फ मैं स्वयं को जान लूं, इतने पर तृप्त हो जाये, तो पांचवे शरीर तक बात पहुंचेगी और खतम हो जायेगी। लेकिन साक्षी का भाव अगर और गहरा हो ... और इसका भी पता लगाया जाये कि मैं तो नहीं हूं, मेरे होने में चांद-तारे भी सम्मिलित हैं, सूरज भी सम्मिलित हैं, ...मेरे होने में पत्थर, मिट्टी, फूल, पौधे सब सम्मिलित हैं, ... मेरे होने में दूसरों का होना भी सम्मिलित है, ... मेरा होना सम्मिलित होता है — अगर इस ख्याल से यात्रा शुरू हो, तो तथाता तक पहुंच जायेगा।

तथाता धर्म की परम उपलब्धि है, जहां सब स्वीकार है, टोटल ऐक्सेप्टीबिलिटी है। जैसा हो रहा है, वह सबके लिए राजी है, जो आदमी, जैसा हो रहा है, सबके लिए पूरा राजी है, ऐसा आदमी ही पूर्ण शान्त हो सकता है। क्योंकि जो जरा भी शिकायत से भरा है, उसकी अशान्ति जारी रहेगी। जिसके मन में जरा भी ऐसा है कि 'ऐसा होना था' और 'ऐसा नहीं हुआ', तो उसके मन में तनाव जारी रहेगा। परम शान्ति परम तनावमुक्तता, परम मुक्ति तथाता में ही सम्भव है।

पर संकल्प हो, तो साक्षी तक जाया जा सकता है; साक्षीभाव हो, तो तथाता तक जाया जा सकता है। क्योंकि जिस व्यक्ति ने अभी साक्षी होना ही नहीं जाना, वह सर्व-स्वीकार नहीं जान सकता। जिसने अभी यही नहीं जाना कि मैं कांटे से अलग हूं, वह कभी यह नहीं जान सकता कि मैं कांटे से एक हूं। असल में कांटे से अलग होना जो जान ले, वह दूसरा कदम उठा सकता है — कांटे से एक होने का। तथाता को समझने में वह सहयोगी होगा।

बुद्ध खुद अपने लिए भी 'तथागत' शब्द का उपयोग करते हैं। बुद्ध खुद कहते हैं कि तथागत ने ऐसा कहा। 'तथागत' का मतलब है — 'दस केम, दस गॉन; ऐसे आये और ऐसे गये'। जैसे हवा का झोंका आये और चला जाये। न कोई प्रयोजन न कोई अर्थ। बस हवा का झोंका जैसे आये भीतर और चला जाये — जो ऐसे ही आये और गये। जिनका आना जाना ऐसा निष्प्रयोजन, निष्काम है — जैसा हवा का झोंका हो। ऐसे व्यक्तित्व को कहते हैं, तथागत।

लेकिन हवा के झोंके की तरह कौन आयेगा और कौन जायेगा? हवा के झोंके की तरह वही आ और जा सकता है, जो तथाता को उपलब्ध है। जिसको न आने से कोई फर्क

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पड़ता है, न जाने से कोई फर्क पड़ता है — आये तो आये, गये तो गये।

संकल्प से साक्षी, साक्षी से तथाता — ऐसी यात्रा है।

२१. केवल होश और तथाता में साम्य

जस्ट अवेयरनेस, केवल होश और तथाता क्या एक ही बात है?

असल में जब हम कहते हैं 'जस्ट अवेयरनेस, बस होश मात्र', तो इसमें और तथाता में थोड़ा-सा फर्क है। इसमें और साक्षी में थोड़ा-सा फर्क है। ऐसा समझें कि यह साक्षी और तथाता के बीच की कड़ी है। जब तुम साक्षी से गुजरोगे तथाता तक, तब यह बीच की कड़ी होगी — जस्ट अवेयरनेस।

साक्षी होने में 'मैं हूं' और 'तू है' का भाव पक्का है। जस्ट अवेयरनेस में 'मैं' और 'तू' का भाव भूल गया है, सिर्फ होने का भाव रह गया है; तथाता में सिर्फ होने का भाव ही नहीं है, तथाता में यह ' मेरा होना' और 'तेरा होना' एक ही होना है। क्योंकि जब तक 'जस्ट अवेयरनेस' ही है, तब तक सिर्फ होने का भाव भी है। तब तक होने के भाव के बाहर एक सीमा होगी, जो मैं नहीं हूं।

अगर तथाता कहें, 'जस्ट बीइंग' ठीक है, जस्ट अवेयरनेस नहीं। 'बीइंग' बड़ा शब्द है। जैसे ही तुम कहते हो 'जस्ट अवेयरनेस — होश मात्र', उसमें कुछ को छोड़ दिया । वह 'जस्ट' शब्द जो है, वह छोड़ने वाला है। जब हम कहते हैं 'बस चेतना', तो बस के बाहर हमने कुछ छोड़ दिया । नहीं तो 'बस' क्यों लाते हैं हम? जब हम कहते हैं 'सिर्फ चेतना', तो 'सिर्फ' बाहर कुछ को इन्कार कर दिया। नहीं तो 'सिर्फ' क्यों लगाते?

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

४. ध्यान मन्दिर

ध्यान-मन्दिरों की आवश्यकताओं पर भगवान श्री रजनीश के दो पूरे प्रवचन

१. ध्यान-मन्दिर

२. ध्यान-केन्द्र

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. ध्यान मन्दिर

ध्यान-मन्दिर से एक ऐसे स्थान का प्रयोजन है जहां किसी भी धर्म का, किसी भी मार्ग का और किसी भी तरह से सोचने वाला व्यक्ति वैज्ञानिक रूप से, साइन्टिफिक विधि से ध्यान से परिचित हो सके और ध्यान में प्रवेश कर सके।

इतना ही नहीं, ध्यान के मार्ग पर जो बाधायें हैं — उनसे परिचित हो सकें वैज्ञानिक ढंग से। और ध्यान रहे! मैं जोर देकर कह रहा हूं, 'वैज्ञानिक ढंग से, — क्योंकि मंदिरों की कोई कमी नहीं है, मस्जिदों की कोई कमी नहीं है, गुरुद्वारे बहुत हैं — लेकिन गुरुद्वारों की, मस्जिदों की, मन्दिरों की भाषा और आज के आदमी के बीच कोई सम्बन्ध नहीं रह गया।

ऐसा नहीं है कि मन्दिर जो बोलते हैं, वह गलत बोलते हैं। और ऐसा भी नहीं है कि मस्जिद में जो कहा जाता है, वह गलत है। और ऐसा भी नहीं कि गुरुद्वारा जो सन्देश लिए बैठा है, वह गलत है। वे सन्देश सब ठीक हैं, लेकिन भाषा उनकी इतनी पुरानी पड़ गयी है कि उससे आज के आदमी का कोई संबंध नहीं है। अब कोई सम्बन्ध हो भी नहीं सकता; आज के आदमी की सारी शिक्षण की व्यवस्था वैज्ञानिक है — और मन्दिर और मस्जिद, और गुरुद्वारे के सोचने के सारे ढंग पूर्व-वैज्ञानिक हैं — प्रि-साइन्टिफिक हैं। उनसे आज के आदमी का कहीं भी कोई तालमेल नहीं हो पाता।

ध्यान-केन्द्र से या ध्यान-मन्दिर से मेरा प्रयोजन है — वैज्ञानिक विधियों से, वैज्ञानिक व्यवस्था से, आधुनिक आदमी के मन को ध्यान से न केवल बौद्धिक रूप से परिचित कराया जा सके, बल्कि प्रयोगात्मक, एक्स्पेरिमेन्टली भी उसे ध्यान में प्रवेश दिया जा सके। और बौद्धिक रूप से ध्यान से परिचित होना बहुत कठिन है, प्रयोगात्मक रूप से परिचित होना बहुत सरल। कुछ चीजें हैं जिन्हें हम करके ही जान सकते हैं, जिन्हें हम जानकर कभी नहीं कर सकते। असल में उन्हें हम जान ही नहीं सकते, जब तक कि हम कर न लें।

ध्यान मंदिर में एक ऐसी वैज्ञानिक व्यवस्था हो, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति आज की आधुनिक भाषा एवं प्रतीकों में ध्यान को समझ सके— न केवल समझ सकें, बल्कि कर भी सके— ध्यान से परिचित भी हो सके।

इसमें दो-तीन बातें ख्याल में लेने जैसी हैं। कई बार बहुत छोटी-सी चीजें हमारे ख्याल में नहीं होतीं। डाक्टर पर्ल्स एक अमेरिकन मनोवैज्ञानिक है। उसने एक बहुत छोटी-सी बात पर जिन्दगी भर प्रयोग किया — एक बहुत छोटी बात, जिसका हमें ख्याल भी नहीं हो सकता। उसका कहना है कि जो आदमी भोजन ठीक से चबा के नहीं करता, उस आदमी की जिन्दगी में हिंसा ज्यादा होगी, वह ज्यादा वायलेन्ट होगा। जो आदमी भोजन

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ठीक से चबा के करता है, उसकी जिन्दगी में हिंसा कम हो जायेगी।

यह बहुत अजीब-सी बात मालूम पड़ती है — चबाने से और हिंसा का क्या संबंध हो सकता है? लेकिन पर्ल्स की तीस साल की खोज यही है..कि सभी जनावरों की हिंसा उनके दांतों से बंधी होती है; सभी जानवर दांत से हिंसा करते हैं — जब भी हिंसा करते हैं तो दांत से ही करते हैं। आदमी की हिंसा भी उसके दांतों में केन्द्रित है। लेकिन आदमी ने जो भोजन विकसित किये हैं, उनमें उतनी हिंसा नहीं हो पाती; इसलिए उसके दांत की हिंसा उसके पूरे शरीर में फैल जाती है।

पर्ल्स ने पिछले दस वर्षों में अनेक लोग — जो वायलेन्ट थे, पागल थे; जो हिंसा बिना किये रह नहीं सकते थे, उनको सिर्फ भोजन ठीक-से चबाने का प्रयोग करवाया और पाया कि तीन महीने के प्रयोग में जो आदमी चीजों को बिना तोड़े-फोड़े नहीं रह सकता था, जो आदमी किसी-न-किसी को मारे बिना नहीं रह सकता था, उस आदमी की हिंसा तिरोहित हो गयी । फिर उसने दांतों और हिंसा और मनुष्य के व्यक्तित्व की वैज्ञानिक आधारों पर खोजबीन की और उसकी बात बहुत दूर तक सच साबित हुई।

आप प्रयोग करके देखें तो ख्याल में आयेगा। यह पन्द्रह दिन भोजन को इतना चबायें कि जब तक वह लिक्विड़ न हो जाये, तब तक उसको भीतर न ले जायें, और चौबीस घन्टे आप स्मरण करें कि आपकी हिंसा में रोज फर्क पड़ता है, या नहीं पड़ता है? और आप इक्कीस दिन के प्रयोग के बाद दंग हो जायेंगे कि आपके क्रोध में फर्क हो गया है। और क्रोध के लिए कुछ भी नहीं करना पड़ा, करना पड़ा कहीं कुछ और। और अगर आप सीधे क्रोध के लिए कुछ करेंगे, तो कोई फर्क नहीं पड़ेगा; क्रोध दब जायेगा एक तरफ से और दूसरी तरफ से निकलना शुरू हो जायेगा।

आपको क्रोध आ जाये जोर से, तो अपनी टेबल के नीचे दोनों हाथ बांध के नाखूनों को अपनी ही गद्दी में जोर से गड़ा लें, फिर तीन बार मुट्ठी जोर से भीचें और खोलें, और फिर क्रोध करके देखें। तो आप बहुत हैरान हो जायेंगे — तीन बार मुट्ठी को खोलने और बन्द करने में वह ताकत खो गयी जिससे आप क्रोध कर सकते थे।

असल में नाखून और दांत हिंसा के केन्द्र हैं। सारे जानवर नाखून और दांतों से हिंसा कर रहे हैं। और चूंकि आदमी के पास दांत कमजोर थे, और नाखून कमजोर थे,इसीलिए उसने हथियार बनाये, जिनसे उसने दांतों और नाखूनों का काम लिया है। अगर हम आदमी के सारे हथियारों को देखें तो पायेंगे — या तो वे दांत का विस्तार हैं, या नाखून का।

ध्यान-केन्द्र पर मैं इस तरह की सारी-की-सारी वैज्ञानिक व्यवस्था करना चाहता हूं, जहां आपकी हिंसा, आपका क्रोध, आपकी चिन्ता, आपका तनाव, आपकी अनिद्रा, इन्सोमेनिया, आपके चित्त पर आने वाले सारे विकार क्यों पैदा होते हैं, कैसे पैदा होते हैं — वे आपको पैदा करके भी बताये जा सकें और वे कैसे विदा होते हैं, वह आपसे ही विदा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बताया के भी बताया जा सके।

यह नकारात्मक हिस्सा होगा ध्यान का, कि आप में जो व्यर्थ का कचरा इकट्ठा है, वह कैसे अलग हो सके। और फिर विधायक रूप से ये मैंने चार सीढ़ियां कहीं — 'बैखरी, मध्यमा ,पश्यन्ति, परा' — इन चार सीढ़ियों में आपको भीतर कैसे उतारा जा सके, आप इनमें भीतर कैसे उतर जायें...

एक बार बाहर का कचरा फिंक जाये, तो भीतर उतर जाना बड़ी ही सरल बात है; बहुत कठिन नहीं। शायद इस जिन्दगी में हम बहुत-सी फिजूल की बातें सीखने में जितना समय नष्ट करते हैं, उससे बहुत कम समय में ध्यान में गति शुरू हो जाती है। मीटरनिक ने कहीं लिखा है कि एक आदमी नरक जाने के लिए जितनी मेहनत उठाता है, उससे बहुत कम मेहनत में स्वर्ग पहुंच सकता है।

हम क्रोध के लिए जितना श्रम करते हैं, उससे बहुत कम श्रम में हम ध्यान में उतर सकते हैं। हम दूसरे के साथ लड़ने में जितना श्रम करते हैं, उतना अगर अपने को बदलने के लिए करें, तो हम कभी के परमात्मा की प्रतिमा को अपने भीतर खोजने में सफल हो जायें। हम बाहर के रास्तों पर जितना दौड़ते हैं, अगर उससे सौवां हिस्सा भी हम भीतर के रास्ते पर जायें, तो हम अपने पास पहुंच जायें।

और जो आदमी अपने पास नहीं पहुंचता, वह बाहर कितना ही दौड़े, वह कहीं भी नहीं पहुंचेगा। जो अपने तक ही नहीं पहुंच पाया, वह कहीं और नहीं पहुंच सकता है। और जिसे अपने भीतर कोई शान्ति का संगीत नहीं मिला, उसे बाहर — वह जगत के कोने-कोने में घूम आये — नरक के अतिरिक्त कुछ भी मिलने वाला नहीं है। हम अपना नरक या अपना स्वर्ग अपने साथ लेकर चलते हैं।

इस ध्यान-मन्दिर को एक वैज्ञानिक व्यवस्था — साम्प्रदायिक जरा भी नहीं, किसी धर्म से बंधी हुई जरा भी नहीं —- और सब धर्मों के लिए खुला हुआ, और प्रत्येक धर्म ने भी जो ध्यान के अलग-अलग प्रयोग खोजे हैं, उनकी भी क्या वैज्ञानिकता है, उस पर भी प्रयोग करने का उस केन्द्र में ख्याल है।

कोई एक सौ बारह विधियां हैं सारे जगत में ध्यान की। और प्रत्येक विधि अद्भुत है। और एक सौ बारह विधियों से आदमी परमात्मा तक पहुंच सकता है। उसमें एक-दूसरे से बिल्कुल विपरीत विधियां भी हैं। इसलिए एक विधि को मानने वाला दूसरी विधि को बिल्कुल गलत कहता है। लेकिन वे एक सौ बारह विधियां सभी व्यक्तियों को ध्यान और शान्ति और आनन्द और सत्य तक ले जाने का मार्ग बन जाती हैं।

इसी ध्यान-केन्द्र पर पूरी एक सौ बारह विधियों का प्रयोग करने का ख्याल है। और तब पहली बार पृथ्वी पर उस तरह का प्रयोग होगा, जिसमें आज तक पृथ्वी पर आविष्कृत ध्यान की सारी प्रक्रियाओं को एक साथ, एक जगह पर...

...हम एक भी व्यक्ति को वहां खोना न चाहेंगे— वह किसी भी मार्ग से जा सके, उस

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मार्ग पर ही उसे सुझाव दिये जा सकेंगे।

इन सारी एक सौ बारह विधियों पर विस्तृत वैज्ञानिक व्यवस्था इस ध्यान-केन्द्र में देना चाहता हूं। और न केवल आपको समझाया जा सके, बल्कि आपको करवाया जा सके। अगर एक विधि से न हो सके तो दूसरी विधि से करवाया जा सके, लेकिन हम आपको उस मन्दिर से निराश न लौटने दें; क्योंकि एक सौ बारह ये चरम विधियां हैं, इनसे ज्यादा हो नहीं सकतीं। अगर एक विधि काम नहीं करती, दूसरी करेगी — दूसरी नहीं करती तीसरी करेगी — और आपकी विधि तत्काल खोज ली जा सकती है...कि कौन-सी विधि आप पर काम करेगी।

आप पर कौन-सी विधि काम करेगी, इसको खोजने का भी विज्ञान है। और यदि हम इस समय देश के बड़े-बड़े नगरों में — और देश के बाहर भी— ध्यान के ऐसे विज्ञान मन्दिर निर्मित कर सकें, तो मनुष्य-जाति के लिए — जो आज सर्वाधिक पीड़ा और संताप से गुजरती है — गुजर रही है, और जिसे कोई मार्ग नहीं दिखाई पड़ता — क्योंकि जो-जो हमने सोचा था कि इससे सब ठीक हो जायेगा; उससे कुछ भी ठीक नहीं हुआ। सोचा था कि लोगों के पास भोजन ठीक होगा, तो सब ठीक हो जायेगा; आज आधी दुनिया के पास भोजन बिल्कुल ठीक है! सोचा था कि लोगों के पास कपड़े होंगे, मकान होंगे, अच्छे रास्ते होंगे, दवा होगी, चिकित्सा होगी, बीमारियां कम होंगी...आज आधी दुनिया के पास सब है।

एक बड़ी अद्भुत घटना घटी है कि जिनके पास आज सब है, वे ही सर्वाधिक अशांत, बेचैन और परेशान हो गये हैं। गरीब मुल्क एक अर्थ में सौभाग्यशाली हैं; भूखे मरते हुए एक अर्थ में सौभाग्यशाली हैं; क्योंकि अभी इनकी आशा जीवित है; उन्हें ख्याल है कि समाजवाद आयेगा, धन बढ़ेगा, धन बंटेगा — सब ठीक हो जायेगा। यह आशा भी उन मुल्कों की टूट गयी, जहां यह सब ठीक हो गया। अब वे बड़ी निराशा में, गहन निराशा में खड़े हो गये हैं। इतनी होपलेसनेस, इतनी आशारहितता कभी मनुष्य के इतिहास में पहले नहीं हुई थी।

आज अमेरिका जितना आशाहीन है, उतना पृथ्वी पर कोई भी नहीं है। और आज अमेरिका मनुष्य के इतिहास में पृथ्वी का सर्वाधिक सम्पन्न, सर्वाधिक सुखी — हमारे अर्थों में; सब कुछ जिसके पास है — और फिर भी अचानक अनुभव हो रहा है कि कुछ भी पास नहीं है। इतनी आशाहीन स्थिति का कारण एक है — हमने सोचा था जिन बातों से मिलेगा सब, वे सब डिसल्युजन्मेन्ट, वे सब भ्रम टूट गये। और अब हमें वापस लौटकर सुनना पड़ेगा — बुद्ध को, कृष्ण को,क्राइस्ट को, मुहम्मद को, क्योंकि उन्होंने बहुत-बहुत बार, बहुत पहले यह कहा था कि अगर सब भी मिल जाये मनुष्य को, लेकिन अगर स्वयं का अनुभव न मिले, तो कुछ भी मिलता नहीं।

लेकिन हमें उनकी बात ख्याल में नहीं आ सकी। नहीं आ सकती थी, क्योंकि बात बड़ी काल्पनिक मालूम पड़ती थी, बहुत यूटोपियन मालूम पड़ती थी।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

और जो लोग कहते थे 'धन मिल जाये, मकान मिल जाये', उनकी बात बड़ी प्रैक्टिकल और व्यावहारिक मालूम पड़ती थी। इतिहास का मजाक ... कि जो लोग बहुत प्रैक्टिकल थे, वे बहुत यूटोपियन सिद्ध हुए — और बहुत युटोपियन थे, आज पृथ्वी पर वे ही सबसे ज्यादा प्रैक्टिकल सिद्ध होने के करीब हैं।

लेकिन धर्म अब पुराने रास्तों में नहीं लौटाया जा सकता; अब धर्म नये ही रास्तों में प्रवेश करेगा। उसके नये रास्ते वैज्ञानिक और तकनीकी होंगे।

अब जैसे एक आदमी हिमालय जाता था। आज भी हम सोचते हैं 'एक आदमी हिमालय जाये, तो ध्यान में जा सकता है', लेकिन कभी हमने सोचा नहीं कि हिमालय किसलिएं जाता था। जितना ताप कम हो जाये वातावरण में, उतना भीतर प्रवेश आसान हो जाता है; लेकिन कितने लोग हिमालय जा सकते हैं? लेकिन बम्बई में एक एयरकन्डिशन्ड मेडिटेशन हॉल हो सकता है, कोई हिमालय जाने की जरूरत नहीं। क्योंकि हिमालय पर जो ठण्डक मिल सकती है, वह बम्बई में भी उपलब्ध हो सकती है अब। अब हिमालय पर जाने की व्यर्थ की दौड़धूप है। अब तो बम्बई के बीच बाजार में भी उतनी शीतलता उपलब्ध हो सकती है, जितनी एक योगी को हिमालय की चोटी पर उपलब्ध होती थी। उसके आसपास भी बर्फ फैलाया जा सकता है। अगर बर्फ से ही कुछ लाभ होता है, तो बर्फ फैलाया जा सकता है। अगर ऊंचाई से कुछ लाभ होता है, जमीन के ग्रेविटेशन के कम होने से कुछ लाभ होता है, तो बम्बई में भी ग्रेविटेशन कम किया जा सकता है।

अगर मौन से लाभ हो सकता है, तो बम्बई में भी साउन्डप्रूफ इन्तजाम किये जा सकते हैं।

और अधिकतम लोगों के लिए हिमालय की चोटी सम्भव नहीं है। और अगर अधिक लोग पहुंच जायें, तो हिमालय की बर्फ भी पिघल जायेगी। वह भी अधिक लोग नहीं पहुंचे हैं, तभी तक है। अधिक लोग वहां पहुंच जायें, तो वहां भी इतना ही उत्ताप पहुंच जायेगा, इतनी ही गर्मी पहुंच जायेगी। एवरेस्ट पर जिस दिन जाने का रास्ता सीधा होगा, उस दिन हम बस्तियां वहां भी बसा लेंगे।

आने वाले भविष्य में मनुष्य जहां है, वहीं सारी टेक्नोलॉजी और साइन्स का उपयोग किया जा सकता है — और वहीं सारी व्यवस्था की जा सकती है, जो कि एक योगी को बड़ी तकलीफें उठाकर करनी पड़ती थी। वह अब विज्ञान के द्वारा सम्भव हो गयी है; वह अब एक सामान्य आदमी के लिए भी सुलभ हो सकती है।

विज्ञान और टेक्नोलॉजी का पूरा उपयोग करके ही इस ध्यान के मन्दिर को निर्मित करना है। यह ध्यान का मन्दिर — मन्दिर सिर्फ इसी अर्थों में होगा कि वह ध्यान का है, अन्यथा वह एक वैज्ञानिक प्रयोगशाला होगी। इस वैज्ञानिक प्रयोगशाला में मनुष्य ने जो-जो खोज की है आदमी के सम्बन्ध में, उसका पूरा उपयोग किया जाना चाहिए।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एक आदमी ध्यान करने आता है, लेकिन उसका ब्लडप्रेशर बढ़ा हुआ है। इस आदमी को ध्यान में ले जाना आसान नहीं है, इस आदमी को ध्यान में ले जाना कठिन है। इसके रक्तचाप की जो अधिकता है,वह इसके ध्यान में बाधा बनेगी। पुराने आदमी के पास रक्तचाप को नापने का कोई माध्यम नहीं था, लेकिन आज के ध्यान के मन्दिर में रक्तचाप नापने का माध्यम हो सकता है; रक्तचाप को कम करने की व्यवस्था हो सकती है। एक बार आदमी को ध्यान में ले जाने की सुविधा बनाई जा सकती है। एक बार आदमी ध्यान में चला जाये, तो रक्तचाप में जाना मुश्किल हो जायेगा; लेकिन रक्तचाप में डूबे हुए आदमी को ध्यान में जाना मुश्किल हो जाता है।

सारी दुनिया के योगियों ने अल्प-आहार पर जोर पर दिया है, कम खाने पर जोर दिया है; उपवास पर, अल्प-आहार पर, कम भोजन पर, सम्यक आहार पर, सारी दुनिया के योगियों ने जोर दिया है। फिर भी उनके पास अल्प-आहार क्या है, इसकी ठीक-ठीक जांच की कोई व्यवस्था नहीं थी, सिवाय अनुमान के। न उन्हें कैलरीज का कुछ पता था, न उन्हें भोजन के तत्वों का कुछ पता था।

इसलिए कई बार ऐसा हुआ कि अल्प-आहार के नाम पर जो चला, उससे नुकसान हुं पहुंचा। आज हमारे पास बहुत वैज्ञानिक व्यवस्था है...कि एक आदमी को कितनी कैलेरी भोजन की जरूरत है। और हम यह तय कर सकते हैं कि उसकी कितनी कैलेरी कम हो जाये, तो उसे ध्यान में आसानी हो जायेगी— और कितनी कैलेरी ज्यादा हो जाये, तो कठिनाई हो जायेगी अगर ज्यादा भोजन है तो ध्यान में कठिनाई हो जाएगी; क्योंकि भोजन ज्यादा नींद मांगता है। उसे पचाने के लिए उतनी ज्यादा नींद चाहिए। कम भोजन कम नींद मांगता है। और जितनी भीतर निद्रा कम पैदा होती हो, उतना ध्यान का जागरण पैदा हो सकता है।

ध्यान तो जागरण है। एक आदमी ध्यान करने बैठता है और ज्यादा भोजन करके बैठ जाता है, तो फिर कठिनाई होगी। लेकिन ज्यादा भोजन से मतलब सिर्फ पेट में ज्यादा चीजें चली जायें, इससे नहीं है; क्योंकि हो सकता है, एक आदमी ने बहुत शाक-सब्जी खा ली हो— पेट पर तो वजन ज्यादा हो, लेकिन भोजन ज्यादा न हुआ हो; और एक आदमी ने थोड़ी-सी ही मिठाई खाई हो— पेट पर तो वजन कम हो, लेकिन भोजन ज्यादा हो गया हो। और आमतौर से साधु-संन्यासी मिठाई खाते रहे, दूध पीते रहे, रबड़ी लेते रहे— इस बात का बिना ख्याल किये...।

...लेकिन उसका कोई उपाय नहीं था, उसका कोई साफ ख्याल नहीं था; आज हमारे पास उपाय है।

एक आदमी कितना सोये, इस पर निर्भर करेगा कि उसकी ध्यान में गति कैसी हो सकेगी, दोनों बातें सम्बन्धित हैं। अगर ध्यान ठीक हो जाये, तो नींद ठीक हो जायेगी। लेकिन ध्यान को ठीक करना उतना आसान नहीं, जितना नींद को ठीक कर लेना आसान

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। पहले नींद ठीक कर ली जाये, तो ध्यान में गति बहुत आसान हो जाये। अब लोगों के पास नींद ही नहीं है; वे रातभर सोये नहीं...सुबह ध्यान करने बैठ गये हैं। जो आदमी रातभर सोया नहीं, वह ध्यान में सिर्फ सोयेगा। इसलिए मन्दिरों में पूजा करते हुए—साधु को सुनते हुए लोग अगर सो जाते हैं, तो बहुत हैरानी नहीं है। मैंने तो सुना है, कुछ डॉक्टर सलाह देते हैं कि धर्म-सभा में चले जाना चाहिए, अगर नींद न आती हो।

मैंने सुना है, एक बहुत बड़ा पादरी अपने एक मित्र को बार-बार कहता था कि तुम कभी मेरा व्याख्यान सुनने आओ। पादरी नहीं माना तो एक दिन वह मित्र सुनने गया।

पादरी अच्छे-से-अच्छा जो बोल सकता था, बोला। बाहर जब दोनों निकलने लगे तो उसने अपने मित्र से पूछा कि व्याख्यान कैसा लगा? मित्र ने कहा—'बहुत ही ताजगी देनेवाला—रिफ्रेशिंग।'

पादरी के हृदय की धड़कन खुशी से बढ़ गयी, उसने कहा—'कौन-सी बात तुम्हें इतनी ताजगी देने वाली लगी?'

उसने कहा कि 'जब मेरी नींद खुली, तो मन बड़ा ताजा था। इतनी ताजगी तो मुझे घर भी जब नींद आती है, तब भी नहीं मिलती। ...मैं जरूर आया करूंगा; भाषण बहुत रिफ्रेशिंग था।'

...क्यों—आखिर मन्दिर में, धर्म-कथा में आदमी को नींद क्यों आ जाती है? ...बात क्या है?

...बोर्डम ऊब पैदा हो जाये, नींद आ जाती; कोई चीज उबाने लगे, नींद आ जाती—और नींद की कमी हो, तो जल्दी ही कोई चीज उबाने लगती है।

जिनको नींद नहीं आती, वे मेरे पास आते हैं। वे कहते हैं 'हमें नींद नहीं आती; ध्यान से शायद नींद आ जाये?' उन्हें पता नहीं, ध्यान से नींद जरूर ठीक हो जायेगी, लेकिन नींद का ठीक होना ध्यान में जाने के पहले बहुत जरूरी है। अन्यथा ध्यान में जाना मुश्किल हो जायेगा, कठिन हो जायेगा। कठिन इसलिए हो जायेगा कि चित्त की पहली जरूरत नींद की है। और जैसे ही विश्राम मिला, चित्त सो जायेगा। और ध्यान में जरूरत है विश्राम में भी जागे हुए होने की; रिलेक्स एण्ड अवेयर। एक तरफ सब विश्राम है और एक तरफ सब जागा हुआ है, तभी कोई ध्यान में प्रवेश कर सकता है।

और नींद का नियम यह है कि यहां हम विश्राम में हुए बाहर कि भीतर नींद आ गयी—रिलेक्स हुए कि नींद आ गयी।

तो ध्यान में अक्सर लोग सो जायेंगे। अब यह सारी व्यवस्था आज की जा सकती है—नींद नापी जा सकती है, उनके सपने नापे जा सकते हैं—कि कितने सपने आपको आ रहे हैं। आपको भी नहीं पता होता—कितने सपने आ रहे हैं, कैसे सपने आ रहे हैं?

कल ही एक साधिका मेरे पास थी। ध्यान करना है उसे। मैंने उसके सपनों के बाबत पूछा, उसने कहा कि सपनों से क्या मतलब आपको? मुझे ध्यान करना है। मैंने उससे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कहा, मुझे बहुत जरूरी है, क्योंकि सपने ही मुझे बतायेंगे कि तुम्हें सच में ध्यान करना है या कुछ और करना है। उसने कहा—'सपने में तो मुझे सिवाय काम-वासना के और हिंसा के, हत्या के, आग लगा देने के—इस तरह के ही सपने आते हैं।' तो मैंने कहा कि वही तुम्हारा चित्त करना चाहता है। अभी ध्यान मुश्किल पड़ेगा। पहले तो तुम्हारे सपनों को शुद्ध करना पड़ेगा। जिस व्यक्ति को स्वयं को शुद्ध करना है, वह अगर अपने सपने को भी शुद्ध न कर पाये तो स्वयं को शुद्ध न कर पायेगा। सपने-जैसी साधारण चीज भी अशुद्ध हो, तो उसकी सत्ता शान्त हो जाये, यह अभी बहुत मुश्किल है। लेकिन आज से पहले सपने के जांचने की कोई सुविधा न थी।

इस ध्यान-केन्द्र में सपनों के जांचने की पूरी व्यवस्था करना चाहता हूं। अब तो इन्तजाम है। जैसे आपका कार्डियोग्राफ लिया जाता है, वैसे ही रात में आपके सपने का ग्राफ बन जाता है—कि आपने कितनी देर सपने देखे, किस तरह के सपने देखे..,वायलेन्ट थे?...नॉन-वायलेन्ट थे?...सेक्सुअल थे?...नहीं थे सेक्सुअल? —क्या था? सपने किस तरह के थे—इसकी काफी जानकारी ग्राफ दे देता है।

यह जानकर आप हैरान होंगे कि सपनों के सम्बन्ध में जितनी जानकारी बढ़ी है, उतना ही यह प्रतीत हुआ है कि चित्त के भीतर वेव्ज हैं, तरंगें हैं। जब सपना चलता है तो तरंगें और तरह की होती हैं, जब सपना बन्द होता है तो और तरह की होती हैं। और बड़े आश्चर्य की बात है कि गहरी नींद में जो तरंगों की स्थिति होती है। वही स्थिति ध्यान में भी तरंगों की होती है। ध्यान में जब कोई व्यक्ति होता है तो उसके मस्तिष्क की तरंगें वैसी होती हैं, जैसे तरंगें गहरी निद्रा में होती हैं। और जब कोई व्यक्ति सपने में होता है, तो तरंगें वैसी ही होती हैं, जैसे जब कोई व्यक्ति चिन्ता में होता है। चिन्ता और सपनों का जोड़ है; गहरी निद्रा और ध्यान का जोड़ है।

यह सारी वैज्ञानिक व्यवस्था इस ध्यान-मन्दिर में करने का ख्याल है। और प्रत्येक व्यक्ति को वैज्ञानिक रूप से सहायता पहुंचायी जा सके, यह दृष्टि है। और मेरे देखे, आज मनुष्य को ध्यान की जितनी जरूरत है, उतनी किसी चीज की जरूरत नहीं है; क्योंकि आज मनुष्य जितना अशान्त है, उतना अशान्त कभी भी नहीं था।

ये थोड़ी-सी बातें मैंने कहीं। सोचना-विचारना। मान लेने की कोई जरूरत नहीं है। और यह ध्यान-मन्दिर विश्वास करने वालों के लिए नहीं होगा, प्रयोग करने वालों के लिए होगा।

विश्वास करने वाले वैसे भी अब कहीं नहीं हैं। सिर्फ कहते हुए दिखाई पड़ते हैं लोग, कहीं कोई विश्वास करने वाला आदमी अब नहीं है; हर आदमी के रथ पर शल्य बैठा हुआ है। एक छोटी-सी कहानी और अपनी बात मैं पूरी कर दूं।

कर्ण ने महाभारत के युद्ध में जिस आदमी को सारथी चुना, वही उसकी हार का कारण बना। उसने जिस आदमी को सारथी चुना, उसका नाम था शल्य। शल्य का अर्थ होता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है, 'सन्देह—शंका—संशय'। और कर्ण का अर्थ आप जानते ही हैं; कर्ण का अर्थ होता है 'कान'। सब शंकाएं कान से प्रवेश करती हैं।

शल्य को कर्ण ने सारथी चुन लिया और अर्जुन ने कृष्ण को सारथी चुना। सारे युद्ध के लिए निर्णायक, डिसीसिव यही बात हो गयी। क्योंकि वह शल्य जो था उसका नाम ही शल्य इसलिए था कि वह बड़ा शंकालु आदमी था। कर्ण बहुत शक्तिशाली आदमी था।

जो लोग जानते हैं, महाभारत जिनके सामने हुआ, उन सबका ख्याल था कि कर्ण से अर्जुन जीत न सकेगा। कर्ण महाशक्तिशाली था। कर्ण के पीछे सूर्य की शक्ति थी, अर्जुन जीत न पायेगा। लेकिन अन्ततः युद्ध में हुआ ऐसा कि अर्जुन जीता और कर्ण हारा। और तब जो जानते हैं वे कहते हैं कि गलत सारथी को चुनने की वजह से कर्ण हारा; क्योंकि वह जो शल्य था वह पूरे वक्त कर्ण को कहता रहा—अरे 'तू क्या जीतेगा अर्जुन से!' वह पूरे वक्त उससे यही कहता रहा। कर्ण अपना धनुष्य-बाण खींच रहा है और शल्य उसका सारथी कह रहा है—क्यों मेहनत कर रहा है!...तू क्या जीतेगा अर्जुन से!...तेरी जीत बहुत मुश्किल है।' एक यह था सारथी, और एक कृष्ण था सारथी अर्जुन के पास कि अर्जुन छोड़ के गांडीव बैठ गया और कृष्ण ने पूरी गीता कही—वह आदमी लड़े; क्योंकि कृष्ण ने कहा कि जो होना है वह पहले से निश्चित है; तुझे कुछ करना ही नहीं है, तू सिर्फ निमित्त है।

यह जो शल्य मिल गया कर्ण को, यह जो शंका मिल गयी उसके मन को, वह उसे डुबाने वाली हो गयी।

आज तो हर आदमी का सारथी शल्य है—कोई पहचानता हो, न पहचानता हो, सन्देह आज हर आदमी के साथ खड़ा है। इसलिए जो विश्वास सन्देह के अभाव में प्रचारित किये गये थे, वे अब काम के नहीं हैं। अब तो पहले शल्य की हत्या करनी पड़े, तब कहीं व्यक्ति के भीतर की चेतना पर कोई परिणाम लाया जा सकता है। और इस शल्य की हत्या बिना विज्ञान के नहीं हो सकती।

इसलिए मैं इस ध्यान-केन्द्र में आपके शल्य की हत्या विज्ञान के द्वारा करना चाहता हूं; विश्वास के द्वारा अब नहीं होगा। मेरे यह कहने से कि आप मान लें, आप मानेंगे नहीं। मानने का अब कोई उपाय नहीं रहा। वह वक्त गया;वह समय बीत गया जब लोग मान लेते थे। अब वह समय कभी-भी नहीं लौट सकता। वह मनुष्य-जाति का बचपन सदा के लिए खो गया, अब आदमी प्रौढ़ है। और इस प्रौढ़ आदमी के पास जो सन्देह है, उस सन्देह को हम वैज्ञानिक प्रयोग से नष्ट न कर सकें, तो मनुष्य की जिन्दगी में हम कोई भी क्रान्ति लाने में सफल नहीं हो सकते।

इसलिए इस ध्यान-मन्दिर को मैं एक वैज्ञानिक मन्दिर कहता हूं—जहां हम ध्यान को, धर्म को वैज्ञानिक मार्ग से मनुष्य तक पहुंचाने का प्रयास कर सकते हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

२. ध्यान-केन्द्र

इधर मेरे मन में यह निरन्तर चलता रहता है कि देश के प्रमुख नगरों में ध्यान-केन्द्र हों। यहां हम इसकी चिंता नहीं कर रहे हैं कि क्या ठीक है, यहां हम इसकी चिंता कर रहे हैं कि कुछ लोग क्लेरिटी को उपलब्ध हो रहे हैं और उनका मन शांत हो रहा है और वे चीजों को देखना शुरू कर रहे हैं कि चीजें कैसी हैं। न उनका पक्षपात काम कर रहा है, न उनके अपने पूर्वाग्रह काम कर रहे हैं—उनके पास सिर्फ ठीक-ठीक देखने वाली दूरबीन है, उससे वे देखना शुरू कर रहे हैं।

अगर मुल्क के सारे बड़े नगरों में हम छोटी-सी जमात भी, चीजों को ठीक देखने वाले लोगों की पैदा कर सकें, तो इस संक्रमण-काल में उसके बहुमूल्य उपयोग होंगे। और मैं मानता हूं, शायद वह सर्वाधिक मूल्यवान बात सिद्ध हो—इसलिए कि ठीक शांत-चित्त के लिए हम हवा, भूमि और व्यवस्था दे सकें।

इस व्यवस्था को देने में बहुत-सी बातें होंगी। जैसा ध्यान-केन्द्र के लिए कहा, मेडिटेशन हॉल के लिए कहा—यह बहुत जरूरी है कि सारे बड़े नगरों में ऐसे भवन हों—जो न हिन्दू के हों, न मुसलमान के, न ईसाई के—जो सभी मनुष्यों के लिए हों, और जो भी वहां शांत होना चाहता है उसके लिए हों। उन भवनों में शांति के लिए सब तरह की व्यवस्था की जा सकती है। छोटे बच्चों के लिए वहां अलग व्यवस्था की जा सकती है। जो बच्चों को ध्यान में ले जाने में सहयोगी हो सके। और भी हजार उपाय किये जा सकते हैं।

अभी पूना में जिस घर मैं मेहमान था, वहां वे दो पेन्टिंग काफी खर्च करके ले आये थे। पेन्टिंग अच्छी भी थीं। उन्होंने मुझसे पूछा कि 'आप क्या कहते हैं?' मैंने कहा 'मैं कुछ नहीं कहूंगा। तुम इस पेन्टिंग के पास आधे घन्टे बैठकर आधे घन्टे देखते रहो और तब तुम्हारा मन कैसा होता है, वह मुझे बता दो।' आधा घन्टा तो बहुत दूर था, पांच मिनट भी उस पेन्टिंग को गौर से देखने में आपका सिर घूमने लगेगा—और ऐसा लगेगा कि आप पागलखाने में हैं। आज कोई पश्चिम की पेन्टिंग उठाकर देखे, तो उसे ऐसा लगेगा कि वह जरूर रुग्ण चित्त से पैदा हुई है।

अगर पिकासो की एक पेन्टिंग पर थोड़ी देर कोई ध्यान करे तो वह पागल हो सकता है, शांत नहीं। लेकिन अगर बुद्ध की मूर्ति पर कोई पांच मिनट बैठकर ध्यान करे, तो वह पागल भी हो तो शांत होकर लौटेगा। मैं चाहता हूं कि ऐसे हॉल होने चाहिए सारे मुल्क में, जिनमें दरवेश फकीरों के नृत्य हों। नाच तो हम रहे हैं—और सारी दुनिया नाच रही है, और दुनिया को नाचने से नहीं रोका जा सकता। जो कौम नाचने से रुकेगी, उसको भारी नुकसान होने शुरू हो जायेंगे। लेकिन नाच ऐसा हो सकता है कि नाचनेवाला नाचने में शांत हो, और ऐसा भी हो सकता है कि नाचने में अशांत हो। ऐसा नाच हो सकता है जो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कामुकता से भर दे, और ऐसा नाच हो सकता है जो कामुकता के बाहर कर दे। देखनेवाला भी देखते-देखते कामुक हो सकता है। यानी नाच आपके भीतर कुछ करेगा। जो भी आप देख रहे हैं, वह आपके भीतर कुछ करेगा। दरवेश फकीरों के नृत्य हैं, अगर उनको कोई आधा घन्टे तक देखता रहे, तो पायेगा कि सारे मन की चिंता विलीन हो गयी है; क्योंकि वह जो गति है, इतने वैज्ञानिक हिसाब से निर्मित की गयी है, मानो आपके मन में थपकी देती हो—शांत करती हो।

मेडिटेशन हॉल बहुत अर्थ रखता है। वहां हम इस तरह के चित्रों की व्यवस्था करें—जिन्हें देखकर मन शांत हो, स्वस्थ हो; इस तरह के नृत्यों की व्यवस्था करें—जिन्हें देखकर मन शांत होता हो, स्वस्थ होता हो उस तरह के गीत की, संगीत की व्यवस्था करें, उस तरह का शिक्षक वहां पैदा हो; उस तरह का बच्चा भी वहां हो, बूढ़ा भी वहां हो; पति भी हो, पत्नी भी हो; जीवन के सारे पहलुओं को हम वहां छूना शुरू करें।

पुरानी दुनिया ने भी बहुत-से ध्यान-भवन पैदा किये, लेकिन वे सब पलायनवादी थे। अगर कोई आदमी मन्दिर में जाता हो, तो वह जिन्दगी से भागना शुरू हो जायेगा। मैं ऐसे मन्दिर चाहता हूं, जो जिन्दगी में और गहराई में ले जाते हों— जिन्दगी से भागते न हों। ऐसा केन्द्र, जहां जीवन की सब दिशाओं को छूने के लिए—और सब दिशाओं से काम करने के लिए—और मनुष्य को सब तरफ शांति में डुबकी लगाने के लिए हम कोई व्यवस्था दे सकें। वह व्यवस्था दी जा सकती है, उसमें कोई बहुत कठिनाई नहीं है। जिस तरकीब से हमने आदमी को अशांत किया है, वह भी व्यवस्था है।

तो ध्यान-केन्द्र चाहिए। पैसे की बात मैं नहीं जानता। इतना मैं जानता हूं कि इस तरह की व्यवस्था अगर जुटा पाते हैं आप, तो आप इस मुल्क की आने वाली समस्त पीढ़ियों के लिए कुछ काम कर सकेंगे;...अपने लिए भी।

कुछ मूल्यवान चीजें हैं जिनका स्थायी परिणाम देश की चेतना पर हो सकता है। जैसे धर्म के नाम पर हमारे पास जो साहित्य है, बिल्कुल कचरा है। उस साहित्य की वजह से, जिसमें थोड़ी भी बुद्धि है, वह धार्मिक नहीं हो पायेगा। उस साहित्य को पढ़ने के लिए बुद्धिहीनता बहुत अनिवार्य आवश्यकता है। ऐसा साहित्य चाहिए जो मुल्क की प्रतिभा को छुए और स्पर्श करे; मुल्क की प्रतिभा जिसमें पाये कि कुछ रस हो सकता है। उस साहित्य के लिए भी ऐसे केन्द्र प्रचार और विस्तार के आधार बन सकते हैं।

अब हमारे पास बहुत नये साधन हैं, जो कभी भी न थे। लेकिन उन साधनों का प्रयोग भी मनुष्य के मंगल के लिए नहीं कर पा रहे हैं। बुद्ध के पास कोई उपाय नहीं था सिवाय इसके कि वे पैदल घूमें चालीस साल। इतनी बड़ी दुनिया थी, लेकिन चालीस साल पैदल घूमे, तो भी बिहार के बाहर न जा सके, सिर्फ एक दफा बनारस तक गये। बुद्ध के पास उपाय नहीं थे। अगर मेरे-जैसे आदमी को भी बुद्ध-जैसे ही भटकना पड़े, तो ढाई हजार साल बेकार गये। जब यह मामला है, तो बुद्ध जितना काम कर सके उससे ज्यादा मैं भी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नहीं कर सकूंगा। लेकिन ढाई हजार साल में जो सारी टेक्नोलॉजी विकसित हुई है, उसका क्या मतलब है?

उसका मतलव है कि फिल्म ऐसी हो सकती है कि जिस गांव में मैं नहीं गया हूं, वहां भी मेरी बात पहुंच जाये। हम नृत्य की व्यवस्था न कर सकें, जो हमने बम्बई में की है, तो फिल्म उस नृत्य को वहां पहुंचा देगी। जरूरी नहीं है कि हम हर गांव में पेन्टिंग पहुंचा सकें, लेकिन बम्बई में जो हमने पेन्टिंग लगाए हैं अपने ध्यान-कक्ष में, उनको पूरा मुल्क फिल्म के जरिये देख ले। पूरा मुल्क ही नहीं, पूरी दुनिया भी सम्बन्धित हो जाये। रेडियो का माध्यम है, टेलिविजन का माध्यम है। अब हमारे पास ऐसे माध्यम हैं, जिनका कि पुराना जगत उपयोगं ही नहीं कर सकता था। उनके पास नहीं थे, हमारे पास हैं। हम भी उपयोग कर रहे हैं, लेकिन मंगल के लिए उपयोग नहीं हो रहा है, अमंगल के लिए उपयोग हो रहा है।

मुझे मिलते हैं लोग और कहते हैं, सिनेमा बन्द करो। बन्द करने का सवाल नहीं है। जो माध्यम जगत में आ गया है, वह बन्द नहीं होगा। इसलिए सवाल बन्द करने का नहीं है, सवाल उसके उपयोग का है कि उसका कैसे उपयोग हो। सिनेमा जैसी शक्तिशाली चीज का एकदम ही गलत उपयोग हो रहा है। हमने कहावत सुनी है कि जब भी कोई कोई आविष्कार होता है, शैतान सबसे पहले उस पर कब्जा कर लेता है, और जिनको हम अच्छे लोग कहते हैं, वे खड़े देखते रहते हैं। वे लोग चिल्ला रहे है कि बड़ा बुरा हुआ जा रहा है। लेकिन तुमको कौन रोक रहा है कि तुम उस पर कब्जा मत करो।

लेकिन वे साधु-सम्मेलन करके तय करते रहेंगे कि रद्दी पोस्टर नहीं लगने चाहिए, लेकिन अच्छा पोस्टर लगाने से तुमको कौन रोक रहा है? तुम इतना अच्छा पोस्टर क्यों नहीं लगा पा रहे हो कि रद्दी पोस्टर अपने-आप उखड़ जायें और उसे कोई देखने न आये। लेकिन उनकी फिक्र है कि रद्दी पोस्टर नहीं होने चाहिए, लेकिन तुम्हें अच्छी फिल्म बनाने से कौन रोक रहा है? लेकिन वह तुम्हारी कल्पना में नहीं आ रहा है!

हम सोच नहीं सकते कि बुद्ध जैसा आदमी अगर फिल्म में खड़ा किया जा सके तो उसके क्या परिणाम होंगे। अगर बुद्ध बोल सकते हैं, चल सकते हैं— तो बुद्ध का वोलना, चलना हम फिल्म के द्वारा क्यों नहीं देख सकते? सारा मुल्क देख सकता है। लेकिन बुरा आदमी सबसे पहले कव्जा कर लेता है और अच्छा आदमी सिर्फ चिल्लाता रहता है। अच्छा आदमी सदा से नपुंसक है। वह करता कभी कुछ नहीं है, बस इतना ही कहता है कि बुरा हो रहा है। मेरी समझ में अच्छे आदमी को वीर्यशाली बनाने की जरूरत है। वुराई से जो लड़ाई है, वह वातचीत से नहीं हो सकती। जिन-जिन माध्यमों का बुरा उपयोग हो रहा है, उन-उन माध्यमों का भला उपयोग करना चाहिए।

अभी मैं हैरान हूं — अब मैं जाऊंगा, एक-एक गांव घूमूंगा; एक-एक गांव में अगर मैं जाऊं और दस हजार लोग भी मुझे सुनें, तो यह समुद्र में रंग घोलने-जैसा है। मैं

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जिन्दगीभर मेहनत भी करूं, तो इस मुल्क के पचास करोड़ लोगों के आमने-सामने नहीं हो सकता हूं। अब कोई वजह नहीं है कि आमने-सामने क्यों न हो सकूं? नवीनतम टेक्नोलॉजी का, सांइस का धर्म कैसे उपयोग करे, इस सम्बन्ध में न केवल चिन्तन, बल्कि व्यवस्था जुटाने की बात है। तो पंद्रह लाख तो बहुत छोटी बात है, उसे शुरू मानकर चलना चाहिए; किन्तु अगर इसका उपयोग हो सके, तो बड़ा क्रान्तिकारी काम हो सकता है।

बच्चे फिल्म देख रहे हैं, उनको आप मना कर रहे हैं। मैं नहीं मानता कि उनको मना करने की जरूरत है। उनको जरूर फिल्म दिखाने चाहिए। कोई कारण नहीं कि ऐसी फिल्म बच्चे क्यों नहीं देखें, जो उनकी जिन्दगी में रोशनी बनकर आये। आ सकती है। ऐसा गीत क्यों न गायें, जरूर वे गा सकते हैं। मैं मानता हूं कि बच्चों को नर्तक होना ही चाहिए, क्योंकि जो बच्चा नाच नहीं सकता, वह बूढ़ा हो गया। मगर हम चिल्लायेंगे कि यह नाच ठीक नहीं है। लेकिन ठीक नाच कहां है? या तो नाच है ही नहीं, या गलत नाच है। उन दोनों में तो गलत नाच ही चुना जायेगा। ठीक नाच कहां है? वह ठीक नाच सामने ले आइये, गलत नाच अपने-आप विदा होने लगेगा।

मेरा मानना है कि भलाई अभी तक आकर्षक नहीं हो पायी, अभी भी बुराई आकर्षक है। यह आश्चर्य की बात है कि बुराई इतनी आकर्षक है और भलाई में कोई आकर्षण नहीं है। आदमी जब मरने लगता है, तब वह मन्दिर की तरफ जाता है, अन्यथा वह नहीं जाता है। हां, एक फिल्म टाकीज 'मराठा मन्दिर' है, वहां जाता हो तो बात अलग है। जब वह थकने लगता है और हारने लगता है, तब कहीं धर्म उसको आकर्षक मालूम पड़ता है। यानी अब तक सारा धर्म मरे हुए आदमी को आकर्षित करता है, जिन्दा आदमी को नहीं आकर्षित करता है। तो मैं ऐसे केन्द्र बनाना चाहता हूं जहां से हम जीवन की सब दिशाओं को स्पर्श करने लगें तो हम दस-पन्द्रह वर्षों में एक नये समाज के जन्म के लिए कुछ नये आधार रख सकते हैं। इधर दस वर्षों से मैं निरन्तर बोल रहा हूं सब तरह के लोग मेरी नजर में हैं; कौन क्या-क्या कर सकते हैं, वह सब मेरे ध्यान में है।

मैं एक जंगल में ठहरा हुआ था। एक मूर्तिकार जो कभी बहुत प्रसिद्ध था, लेकिन दुनिया से परेशान होकर जाकर जंगल में रहने लगा है। वह इस समय दुनिया में दस-पांच अच्छे मूर्तिकारों में है। लेकिन उसके पास मूर्ति बनाने के लिए पैसे नहीं हैं; उसके पास सीमेन्ट नहीं है, कंक्रीट/नहीं है जिससे वह मूर्ति बना सके। उसने मुझसे कहा, 'मैं जिस तालाब के पास हूं, उसके चारों तरफ ऐसी मूर्तियां बना देना चाहता हूं, ...और उसने अपने सारे नक्शे मुझे बताये। वह इतना अद्भुत है! ...लेकिन उसके पास पैसे नहीं हैं। मैंने उससे कहा, जब मैं कोई केन्द्र खड़ा करूं, तुम आ जाओ और उनके चारों तरफ ऐसी मूर्तियां फैला दो। उसने कहा कि सारी जिन्दगी वहां लगा दूंगा, क्योंकि मुझे और कोई काम नहीं है। मुझे रोटी मिल जाये, उसके बाद मुझसे कोई काम ले सारी जिन्दगी।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मूर्तिकार हैं, संगीतज्ञ हैं, लेकिन वही संगीत बाजार में बिकेगा जो रद्दी होगा, क्योंकि रद्दी आदमी ही सिर्फ खरीदने वाला है। धीरे-धीरे वह संगीतज्ञ रद्दी संगीत बेचने लगेगा, क्योंकि बाजार में मूल्य उसका है। हमारे पास एक ऐसी व्यवस्था चाहिए, मुल्क के प्रत्येक बड़े नगर में, जहां हम श्रेष्ठतम को पनपने के लिए, खिलने के लिए मौका दे सकें; चाहे जितनी छोटी मात्रा में हम श्रेष्ठ को जन्म दे सकें।

ध्यान बहुत-सी चीज़ों का इकट्ठा जोड़ है। ध्यान कोई एक चीज नहीं है कि एक आदमी चौबीस घन्टे कुछ भी रहे और बस एक दफा ध्यान में चला जाये। मेरी समझ है कि अगर किसी आदमी को ध्यान में जाना है, तो उसके घर की दीवारों में रंग की बदलाहट होनी चाहिए।

क्योंकि दीवारों का रंग ऐसा हो जाता है, जो कभी ध्यान में जाने ही न दे। अगर आपने लाल, काले और पीले रंग से दीवारें पोत डालीं, तो उनके भीतर आप पांच मिनट बैठकर आंख बन्द करेंगे और बेचैन हो जायेंगे। इसलिए कैसे कपड़े पहनेंगे, यह भी अर्थपूर्ण है, क्योंकि हम जीते बहुत शरीर के तल पर हैं। आत्मा वगैरह की तो बात होती है, जीते शरीर के तल पर हैं।

ये जो केन्द्र होंगे, ये जीवन की सब दिशाओं में खोज करें, अन्वेषण करें—कपड़े कैसे हों, दीवार के रंग कैसे हों, मकान कैसा हो, मकान के पास दरख्त कैसा हो? सारी चीजों के संबंध में स्पर्श करने की जरूरत है। और जब इन सब पर स्पर्श हो, तो मैं जानता हूं कि ध्यान इतनी सरल चीज है, जितनी कोई सरल चीज नहीं है। शायद उसे अलग से करने की जरूरत न रह जाये।

अगर भोजन कैसा हो, कपड़े कैसे हों, मकान कैसा हो, बगीचा कैसा हो, उठते लोग कैसे हों, बैठते लोग कैसे हों, बात कैसे करते हों—अगर इन सारी बातों के सम्बन्ध में एक बात स्मरण रख ली जाये कि कौन-सी बात शान्ति की तरफ ले जाने वाली है, तो जरूरी नहीं कि उस आदमी को और अलग से ध्यान करने जाना पड़े। यह सब ही उसके भीतर ध्यान का सूत्र बन जायेगा। अभी तो मैं जिनके ध्यान की बात कर रहा हूं, वे बिल्कुल ही गलत लोग हैं; क्योंकि वे जिस दुनिया के हैं उनसे इसका कोई संबंध नहीं है। लेकिन उनको सुझाव देने का भी सवाल है; वह भी तो नहीं है उनके पास। वह कर भी क्या सकते हैं।

एक पूरा दर्शन तो है मेरे दिमाग में, जिनको भी ठीक लगता हो, वे थोड़ी ताकत लगाएं तो पूरा हो जाये। मुझे कोई परेशानी नहीं होगी। जितना मैं कर सकता हूं, मैं करता चला जाता हूं, उसमें कोई अन्तर नहीं है। अब मेरे ख्याल से कुछ लोग हैं, जिनको मैं कहीं बिठा सकता हूं, जो बड़े काम के हो सकते हैं। लेकिन मैं बैठ नहीं सकता। मेरा कहीं बैठ तो मंहगी बात है। मैं चलता रहूंगा। पर कुछ लोगों को कहीं बिठाया जा सकता है जो कि बड़े काम के सिद्ध हो जायें। पर उनके बिठाने के लिए भी कोई उपाय और व्यवस्था

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चाहिए। वह आपको सोचना चाहिए और एक बम्बई से शुरूआत करें। बम्बई में एक माडल की तरह खड़ा कर लें, फिर हम देश के और नगरों में उसकी चिन्ता लें।

जो भी महत्वपूर्ण है वह बहुत धीरे-धीरे प्रभावी होता है, वक्त लेता है। मौसमी फूल हम बोते हैं तो वह महीने भर बाद फुल भी देने लगते हैं और दो महीने बाद समाप्त हो जाते हैं! यह प्रक्रिया इतनी आसान नहीं है कि आज हो जायेगी। इसलिए मुझे लगता है कि अक्सर इसलिए काम नहीं हो पाता, क्योंकि हमारी आकांक्षाएं बहुत मौसमी होती हैं। हम चाहते हैं कि अभी हो जाये। वह अभी नहीं हो पाती हैं, तो फिर हम थककर लौट जाते हैं कि अभी नहीं हो सकतीं।

यह तो लम्बी यात्रा है और ऐसी यात्रा है जिसका अन्त कहीं भी नहीं होता है। हम उसे सिर्फ धक्का दे जाते हैं और समाप्त हो जाते हैं। फिर कोई और धक्का दे जाता है और समाप्त हो जाता है। यात्रा चलती रहती है, यात्रा अनन्त है। पर एक ही ध्यान अगर आदमी को जिन्दगी में रह जाये कि उसने मनुष्य के आनन्द की तरफ, मनुष्य के मंगल की तरफ कुछ भी धक्का दे दिया था, तो भी मैं मानता हूं कि वह आदमी बहुत शान्त अनुभव करेगा। लेकिन अगर हमने वह नहीं किया, तो ध्यान रहे! यह नहीं हो सकता कि आप खाली रह जायें—

धक्के तो आप दे ही रहे हैं; तब आप अशान्ति की तरफ देंगे, अमंगल की तरफ देंगे। आप जी रहे हैं, तो आपके धक्के तो जीवन को लगेंगे ही। अब सवाल इतना ही है कि धक्के किस तरफ ले जाते हैं—शुभ की तरफ? ...आनन्द की तरफ?

इससे बड़ी कृतार्थता नहीं हो सकती कि एक आदमी अपने जीवन में सबके मंगल के लिए कुछ कर पाये। बुद्ध अपने भिक्षुओं को कहते थे कि जब तुम ध्यान भी करो तो कभी ऐसा मत सोचना कि ध्यान से जो शान्ति मिलेगी वह मुझे मिल जाये, नहीं तो तुम कभी भी शान्त न हो सकोगे। क्योंकि 'मुझे' का भाव भी अशान्ति है।

बुद्ध कहते है कि जब तुम्हें ध्यान से शान्ति मिलती हो, तो तुम यह भी प्रार्थना करना कि सबको बंट जाये। यह मत सोच लेना कि मुझे मिल जाये, क्योंकि मुझे मिलने का जो ख्याल है वह भी अशान्ति का बुनियादी आधार है। यह बंट जाये, वह सबको मिल जाये तो बुद्ध कहते हैं, ध्यान करते वक्त, बैठते वक्त कहना कि जो शान्ति आये, वह सब में बंट जाये, और वह सब तक दूर-दूर तक फैल जाये। उसमें मेरे 'मैं' को रखना ही मत। अगर ध्यान से उठना—और शान्ति अनुभव हो—तो यही प्रार्थना करते उठना कि यह शान्ति सब तक फैल जाये।

और बड़े मजे की बात है, जो अपने तक रोकना चाहता है, वह बात फैल नहीं पाता, अपने तक भी पहुंचा नहीं पाता। और जो सब तक फैलाना चाहता है, वह सब तक फैला देता है—और अचानक पाता है कि सब तक फैलाने में उस तक तो शान्ति बहुत फैल ही गयी है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

५. आत्म-साधना

१. सक्रिय ध्यान की भूमिका
२. महामन्त्र — 'हू' के गुह्य-रहस्य
३. आत्म-साधना में शरीर-शुद्धि के सूक्ष्म रहस्य
४. आपके प्रश्न — भगवान श्री रजनीश के उत्तर
५. साधना-शिविर का विदाई सन्देश
६. स्टॉप मेडिटेशन
७. समयसार

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. सक्रिय ध्यान की भूमिका

ध्यान की यह प्रक्रिया स्वयं में सोयी हुई शक्ति को जगाने की प्रक्रिया है। उसे कुण्डलिनी कहें, उसे प्राण या उसे और कोई नाम दे दें।

हम सबके भीतर बहुत कुछ सोया हुआ है। वह जाग न जाये तो हमारी अन्तर्यात्रा के लिए शक्ति नहीं उपलब्ध होती। जिस शक्ति से हम जीते हैं वह बहुत ऊपरी है। बहुत शक्ति है हमारे भीतर जो विश्राम कर रही है; जो सो रही है, जिसे हमने छोड़ रखा है, जिसे छुयेंगे भी नहीं; वह हमारे साथ रहेगी और हम मर जायेंगे। जैसे किसी आदमी के पास तिजोरी हो और वह अपने खीसे में दस रुपये रखे हो और उन्हीं को अपनी सम्पत्ति समझकर अपनी जिन्दगी गंवा दे। भूखा रहे, प्यासा रहे, भीख मांगे, और तिजोरी का उसे पता ही न हो जो कि उसकी है।

लेकिन, ऐसे नासमझ आदमी बहुत मुश्किल से खोजने पर मिलेंगे, जिनके पास तिजोरी हो और जिनको पता न हो — लेकिन, जहां तक जिन्दगी का सम्बन्ध है, ऐसे नासमझ आदमी ही मिलेंगे, जिनके पास तिजोरी हो और जिनको पता न हो; खोजने से वह आदमी मुश्किल से मिलेगा जिसने अपनी जिन्दगी की पूरी सम्पत्ति का उपयोग किया हो।

तो ध्यान की प्रक्रिया का पहला चरण है — हमारे भीतर की पूरी शक्ति को जगाने का। इस शक्ति को जगाने के लिए कोई चोट, कोई हेमरिंग की जरूरत है। हम श्वास का उपयोग करेंगे; दस मिनट के पहले चरण में हम जोर से श्वास लेंगे। हम हथौड़ी की तरह उसका उपयोग करेंगे; श्वास की चोट करेंगे। उस चोट के द्वारा भीतर सोयी हुई शक्ति को जगाना शुरू करेंगे।

आपको शायद पता न हो —- जब भी आपको शक्ति की जरूरत पड़ती है — आपको होश हो या न हो — उसे श्वास की चोट से जगाया जा सकता है। आपने कभी ख्याल न किया होगा कि यदि बड़ा पत्थर उठाना हो तो अचानक आप गहरी श्वास भीतर लेंगे, फिर पत्थर को उठायेंगे। कभी आपने सोचा न होगा कि गहरी श्वास लेकर भीतर रोक लेने से पत्थर उठाने का क्या सम्बन्ध? गहरी श्वास के बिना उस पत्थर को न उठा सकेंगे। जिन लोगों ने पिरामिड के पत्थर चढ़ाये उनके सम्बन्ध में आज वैज्ञानिक बहुत परेशान हैं कि उस वक्त क्रेन नहीं थी; इतने बड़े पत्थर पिरामिड पर चढ़ाये कैसे गये! तो उनको चमत्कार मालूम पड़ता है। इतने बड़े-बड़े पत्थर, इनको सौ-सौ आदमी मिलकर भी नहीं चढ़ा सकते थे, चढ़ाये कैसे गये? उन्हें पता नहीं कि इजिप्त में जिन लोगों ने पिरामिड्स बनाये, उन्हें एक साइंस का पता था, जिसे वे धीरे-धीरे भूल गये। वह थी श्वास की चोट से भीतर सोयी हुई शक्ति को उठा लेने का रहस्य।

आपने राममूर्ति का नाम सुना होगा। वह अपनी छाती पर हाथी को खड़ा कर सकता था — अपनी छाती पर से कार या ट्रक को निकल जाने देता था; या खुद चलती हुई कार को पीछे से पकड़ ले तो चक्के घूम सकते थे, लेकिन कार आगे नहीं बढ़ सकती थी। राज छोटा-सा था। वह राज यह था कि श्वास की चोट से और श्वास को भीतर रोक लेने से

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भीतर की पूरी शक्ति को पुकारने की तरकीब का पता उसे था।

हमारे भीतर जो भी शक्ति सोयी पड़ी है, उसे चोट करके जगाना है। दस मिनट का जो पहला चरण ध्यान में हम करेंगे, उसमें इतने जोर से श्वास लेनी है कि भीतर कोई गुंजाइश भी न रह जाये कि हम इससे ज्यादा ले सकें। श्वास पर हम पूरी ताकत लगा दें। जब आप श्वास पर पूरी ताकत लगायेंगे तो शरीर हिलने लगेगा, झूलने लगेगा। तो उसे झूलने देना। श्वास की चोट मारनी शुरू करना। जितने जोर से चोट पड़ेगी, उतने ही जोर से शरीर डोलेगा। शरीर डोलेगा, उतनी ही आसानी होगी चोट मारने में सख्त होकर खड़े नहीं हो जाना है। चोट मारनी है और शरीर को डोलने देना है। उस चोट के साथ — शरीर के साथ डोलने लगना है।

दस मिनिट में, पूरे फेफड़े में जितनी भी वायु है, उसे रूपान्तरित कर लेना, उस सबको बदल देना। हमारे फेफड़े में कोई छह हजार छिद्र हैं, इसमें मुश्किल से एक या दो हजार में हमारी श्वास पहुंचती है, बाकी चार हजार सदा ही बन्द पड़े रहते हैं। उनमें कॉर्बन डायऑक्साइड इकट्ठी होती रहती है।

पूरे फेफड़ों के सारे-के-सारे छिद्रों में ऑक्सीजन, प्राणवायु पहुंचा देनी है। जैसे ही प्राणवायु की मात्रा भीतर बढ़ती है, वैसे ही शरीर की विद्युत जागनी शुरू हो जाती है। आप अनुभव करेंगे कि शरीर इलेक्ट्रिफाइड हो गया है। उसमें बिजली दौड़ने लगी, रोआं-रोआं कांपने लगेगा; शरीर नाचने की स्थिति में आ जायेगा।

यह पहला चरण है।

पहले चरण के और भी अर्थ हैं, वे भी मैं आपको कह दूं। अगर यह चरण पूरा नहीं किया गया तो दूसरे में प्रवेश नहीं हो सकेगा। ऐसे ही जैसे पहली सीढ़ी पर न चढ़ा हो तो दूसरी सीढ़ी पर न चढ़े। पहली सीढ़ी पर पैर रखना जरूरी है, तभी दूसरी सीढ़ी पर चढ़ा जा सकता है।

दूसरी बात ध्यान रखना जरूरी है कि अगर यह चरण पूरा नहीं किया गया तो बहुत-से नुकसान हो जाने का डर है। परसों ही एक जापानी साधिका मेरे पास आई — वह यहां शिविर में मौजूद है — उसने पूछा कि इन्डोनेशिया में 'सुबुद' नाम का ध्यान-प्रयोग चलता है। उसमें ध्यान का पहला चरण नहीं है, उसमें दूसरा ही चरण है। तीसरा चरण जो है वह भी नहीं है। तो इस 'सुबुद' के सम्बन्ध में मेरा क्या ख्याल है?

अगर पहला चरण न हो, जैसा 'सुबुद' नाम के ध्यान में नहीं है, तो बड़े खतरे हैं। पहले चरण में आपके शरीर की पूरी विद्युत विकसित होकर आपके शरीर के चारों ओर वर्तुल बना लेती है। अगर यह वर्तुल न बने तो आपको ऐसी बीमारियां पकड़ सकती हैं जिनकी आपको कल्पना भी नहीं है। आप बीमारियों के लिए नॉन रेजिस्टेन्ट (अप्रतिरोध) की हालत में हो जाते हैं।

इसलिए 'सुबुद' का प्रयोग करने वाले बहुत-से लोग अजीब-अजीब बीमारियों से

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पीड़ित हो जाते हैं।

इसलिए पहला चरण पूरा होना बहुत जरूरी है, आपके चारों तरफ विद्युत का वर्तुल बनाना बहुत जरूरी है, अन्यथा ध्यान में एक तरह की ओपनिंग, एक तरह का द्वार खुलता है, उसमें से कुछ भी प्रवेश हो सकता है। और न केवल बीमारी ही हो सकती है, बल्कि सुबुद के अनेक साधकों को बड़ी-से-बड़ी जो कठिनाई हुई है, वह यह कि कुछ दुष्ट आत्मायें उनमें प्रवेश कर सकती हैं। ध्यान की हालत में आपके हृदय का द्वार खुला हो जाता है, उस वक्त कोई भी प्रवेश कर सकता है। हमारे चारों तरफ बहुत तरह की आत्मायें निरन्तर उपस्थित हैं। यहां आप ही उपस्थित नहीं हैं और भी कई उपस्थित हैं। इसलिए पहले चरण को हर हालत में पूरा करना जरूरी है।

अगर पहला चरण पूरा हो तो आपका शरीर एक तरह का रेजिस्टेन्ट, एक तरह की प्रतिरोध की दीवार खड़ी कर लेता है। उसमें से कोई भी हानिकारक चीज आपके भीतर प्रवेश नहीं पा सकती और आपके भीतर से कोई भी शक्ति बाहर नहीं आ सकती। वह दीवार का काम करने लगती है। जैसे कि हम अपने घर के चारों तरफ एक बिजली का तार फैला दें और उसमें करेन्ट दौड़ रही हो, तो चोर भीतर नहीं घुस सकेगा; क्योंकि तार छुएगा तो मुश्किल में पड़ जायेगा।

ठीक, पहले चरण का यही महत्त्वपूर्ण काम है कि वह आप के चारों तरफ विद्युत का वर्तुल बना दे — न तो भीतर से कुछ बाहर जा सके, और न बाहर से भीतर कुछ आ सके।

तीसरी बात पहले चरण के सम्बन्ध में यह समझ लेना जरूरी है कि जब आपकी शक्ति भीतर चोट खाकर जगेगी तो आपको बहुत तरह के अनुभव शरीर में होने शुरू हो जायेंगे। वह आपको मैं कह दूं ताकि आपको परेशानी न हो। क्योंकि बीच में पूछने का कोई उपाय नहीं। शरीर में बहुत तरह के अनुभव होंगे। किसी को लगेगा 'शरीर बहुत बड़ा हो गया है'और घबराहट होगी। किसी को लगेगा 'शरीर बहुत छोटा हो गया' तो आंख खोलकर देखने का मन होगा कि 'मामला क्या है? मैं खो तो नहीं गया कहीं? लेकिन, आंख खोलकर देखना नहीं है। आप अपनी जगह हैं, कहीं कुछ खो नहीं गया है।

ये सारी परिस्थितियां उस शरीर में नयी शक्ति के जागने से होनी शुरू हो जायेंगी। 'किसी के शरीर में सांप-बिच्छू रेंगते हुए मालूम पड़ने लगेंगे' किसी को चीटियां चढ़ती मालूम पड़ने लगेंगी', 'किसी के भीतर विद्युत की धारा बहनी मालूम पड़ने लगेगी' किसी को लगेगा कि कोई चीज झरने की तरह ऊपर से नीचे गिर रही है'; किसी को मालूम पड़ेगा कि 'कोई चीज़ नीचे से ऊपर को चढ़ रही है'।

इस तरह के बहुत-से अनुभव शरीर में होने शुरू हो जायेंगे और इसके साथ ही शरीर कुछ गतियां करना चाहेगा।

उनको रोकना नहीं है।

दस मिनिट में शरीर पूरी तरह से चार्ज्ड हो जाता है, शक्ति से भर जाता है। तो दूसरे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चरण में शरीर को छोड़ें; वह जो करना चाहे उसे करने दें। दूसरे चरण में शक्ति को खेलने का मौका दें। वह जो शक्ति जगी है, उसको कोआपरेट करना, सहयोग देना।

साधारणतया हम रोकते हैं। हमारी जिन्दगी भर की आदत है हर चीज़ को रोकने की। अगर हंसी भी आती है तो हम धीरे से हंसते हैं, जोर से नहीं हंसते;रोना भी आता है तो सम्हाल लेते हैं; क्योंकि रोना शोभा नहीं देता। नाचने का तो कोई सवाल ही नहीं है; कूदने का कोई सवाल नहीं है; हाथ-पैर अव्यवस्था से हिलाने का कोई सवाल नहीं है। जिन्दगी में हम सब रोके रखें हैं।

जब शक्ति आपके भीतर की जगेगी, तो आपके भीतर जो भी रुका है, वह सब प्रकट होना चाहिए। इसको आप चाहें रोकना तो रोक सकते हैं, लेकिन रोकने से भयंकर नुकसान होगा; क्योंकि जो शक्ति जग गयी है, अगर आपने उसको रोका तो वह आपके लिए शारीरिक रूप से नुकसानकारी सिद्ध होगी। उसका जिम्मा मुझ पर नहीं होगा। ध्यान का प्रयोग व्यर्थ तो चला ही जायेगा, उससे नुकसान भी होने शुरू हो जायेंगे। शरीर में ग्रन्थियां और गांठें बन जायेंगी — उस शक्ति को, जो निकलना चाहेगी, आप रोक लेंगे तो।

जैसे ही पहले चरण के बाद शक्ति पैदा होगी, आपका शरीर जो भी करना चाहे उसे पूर्णता से सहयोग देना। कोई नाचने लगेगा, कोई अस्तव्यस्त मुद्राएं बनाने लगेगा, कोई आसन बनाने लगेगा। शरीर जो भी करना चाहे उसे बिल्कुल ऐसा छोड़ देना है जैसे हमें कोई प्रयोजन नहीं; सिर्फ साथ देना है। इतनी तीव्रता से साथ देना है कि अगर हाथ थोड़ा हिल रहा हो तो पूरा साथ देना कि वह पूरा हिल जाये। रोकने से नुकसान है, सहयोग देने से अभूतपूर्व फायदे हैं।

अगर आपने पूरा सहयोग दे दिया तो आपके शरीर की न-मालूम कितनी बीमारियां जो आपके पीछे पड़ी हों, अचानक विलीन हो सकती हैं। आपके मन के न-मालूम कितने रोग जो चित्त को घेरे हों — क्रोध, काम, लोभ — अचानक आप पा सकते हैं कि मन हल्का हो गया, वे बह गये। दुःख, उदासी, पीड़ा, वैमनस्य, ईर्ष्या, वे सब गिर जाते हैं। अगर शरीर को पूरी तरह से आपने खेलने का मौका दिया तो आपका शरीर ही नहीं — आपके मन की भी कैथार्सिस हो जाती है, रेचन हो जाता है।

दस मिनट का जो सबसे बड़ा उपयोग है, वह यही है कि शरीर का रेचन हो जायेगा। शरीर और मन का सब-कुछ जो रुग्ण हमने इकट्ठा किया हुआ है, वह गिर जायेगा। उसके बाद ही हम ध्यान में प्रवेश कर सकते हैं। जैसे कोई पहाड़ पर चढ़ रहा हो तो सब बोझ नीचे छोड़ जाता है, बोझ साथ में हो तो पहाड़ पर चढ़ना असम्भव होता है। जैसे ऊंचाई बढ़ती है, वैसे बोझ छोड़ना पड़ता है। ध्यान की बड़ी ऊंचाइयां हैं, गहराइयां हैं। उनमें जाने के लिए सब बोझ छोड़ जाना बहुत जरूरी है। इसलिए जो संकोच करेंगे उनका समय व्यर्थ होगा। जो शिष्टाचार का ध्यान रखेंगे उनका समय व्यर्थ होगा। और समय ही व्यर्थ नहीं होगा, बल्कि पहला चरण अगर पूरा कर लिया है — पॉजिटिव हार्म, उसे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विधायक रूप से हानि पहुंचेगी।

सब अपने काम में लगे होंगे, किसी से किसी को प्रयोजन नहीं, कोई किसी को नही देखता होगा, किसी को देखने से मतलब नहीं। बहुत-से मित्रों को ऐसा अनुभव होगा कि जब बहुत तीव्रता से शरीर हल्का हो रहा होगा, तो थोड़ा-सा वस्त्र भी एकदम पहाड़ की तरह, पत्थर की तरह भारी हो जायेगा। महावीर पागल नहीं थे कि नग्न हुए। नग्न होने का कारण है। और सैकड़ों लोग उस ध्यान का प्रयोग कर नग्न हुए, उसका कारण है। ऐसा नहीं है कि वह नग्नता आपके लिए अनिवार्य बन जायेगी। एक दफे चित्त हल्का हो जाये तो आप वापिस लौट आयेंगे इस दुनिया में और सीधे साफ हो सकेंगे।

यह जो रेचन है, यह नहीं चलेगा। ज्यादा-से-ज्यादा तीन महीने चल सकता है; कम-से-कम तीन सप्ताह चल सकता है। अगर किसी ने बहुत तीव्रता की तो तीन दिन में समाप्त हो जायेगा। जब गिर जायेंगी सारी बीमारियां तो आप एकदम हल्के और शांत हो जायेंगे। फिर यह नहीं चलेगा। फिर आप करना भी चाहें तो नहीं कर सकेंगे।

दूसरे चरण पर ध्यान देना बहुत जरूरी है, क्योंकि वह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। तीसरे में प्रवेश के लिए वह लिंक, सेतु का काम करता है। और दूसरे में ही सबसे ज्यादा बाधा पड़ती है। न तो आप खुलकर नाच पाते हैं, न चिल्ला पाते हैं, न रो पाते हैं, न डोल पाते हैं। उससे बाधा पड़ जायेगी। मन में से न-जाने क्या निकलना शुरू होगा। जानवरों-जैसी आवाज निकलने लगेगी, आपको डर लगेगा कि कैसे निकालूं? उसे निकलने देना। जो भी है उसे स्वीकार करके उसका पूरा साथ दे देना। अगर आप पूरा साथ दे सके तो परिणाम सुनिश्चित हैं। अद्‌भुत परिणाम होंगे, जिनकी आप कल्पना भी नहीं कर सकेंगे।

दूसरा चरण पूरा हो तो ही हम तीसरे में प्रवेश कर सकेंगे। तो दूसरे पर अटकना नहीं है। दूसरे पर अटकना पहिले पर अटकने से भी ज्यादा हानिकर है; क्योंकि शरीर ने काम करना शुरू कर दिया तो आप न-मालूम किस तरह की नयी रुग्णताओं को, नयी मानसिक विक्षिप्तताओं को निमन्त्रण दे सकें। हर चीज की हानि उतनी ही होती है जितना लाभ होता है। उनकी मात्रा बराबर होती है। अगर आप लाभ लेते हैं तो पूरा लें अन्यथा हानि हाथ पड़ जायेगी। या फिर करें ही मत। जहां हैं, वहीं बेहतर हैं। करना है तो पूरा समझकर करें। और, पूरा प्रयोग करें ताकि किसी को हानि न हो जाये।

जब दूसरे चरण में पूरी तरह शरीर की गतियां शुरू होंगी तो आपको शरीर अलग मालूम होने लगेगा। यह उस दूसरे चरण का कीमती अनुभव है। जब शरीर नाचेगा, चिल्लायेगा, जानवरों की आवाज करने लगेगा — कुछ भी बकने लगेगा; कुछ भी बोलने लगेगा — रोने लगेगा, हंसने लगेगा, तब आपको पहली दफा पता चलेगा कि आप अलग खड़े देख रहे हैं...कि यह शरीर क्या कर रहा है! यह आपकी भिन्नता का पहला अनुभव होगा कि मैं साक्षी की तरह देख रहा हूं, यह हो रहा है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सुना है हमने बहुत कि मैं अलग हूं और यह शरीर अलग है। यह सुनी हुई बात है। यही दूसरे चरण का प्रतिफल है कि अनुभव हो जाये कि मैं अलग हूं और शरीर अलग है। जैसे ही यह अनुभव होता है — तीसरे में हम गति कर जायेंगे।

तीसरे चरण में पूछना है अपने भीतर — 'मैं कौन हूं?' यह जोर से पूछना है। भीतर ही पूछना है, लेकिन इतने जोर से पूछना है कि पैर से लेकर सिर तक गूंजने लगे भीतर — 'मैं कौन हूं?' क्योंकि जब यह दिखाई पड़ता है कि शरीर मैं नहीं हूं, तब यह सवाल उठता है कि कौन हूं? और इस मौके को छोड़ नहीं देना है। इसे तीव्रता से पूछना है। दस मिनट अपने भीतर यह तूफान उठा देना है कि मैं कौन हूं। दो 'मैं कौन हूं ' के बीच में जगह न बचे। जब आप बहुत जोर से भीतर पूछेंगे तो बहुत सम्भव है कि आपके मुंह से आवाज बाहर निकले। तो उसका भय नहीं लेना है। शुरू करना है भीतर, अगर बाहर भी निकलने लगे तो चिंता नहीं करें, निकल जाने दें।

तीसरे चरण में भी शरीर डोलेगा, नाचता रहेगा, उसकी चिंता नहीं करना। लेकिन डोलने देना, नाचने देना। तीसरे चरण में, 'मैं कौन हूं' इतनी तीव्रता से पूछना है कि मन में और ख्याल ही न रह जाये। अगर आपने पूरी ताकत तीसरे चरण में लगा दी तो चौथा आपको सहज ही उपलब्ध होगा।

चौथे चरण में आपको कुछ भी नहीं करना है। तीन चरण हमें करने हैं, चौथे में केवल विश्राम है। चौथे में कोई खड़ा है खड़ा रह जायेगा, कोई गिरा है गिरा रह जायेगा, कोई बैठा है बैठा रह जायेगा। जो जैसा है, वैसा रह जायेगा। चौथे चरण में हम सिर्फ प्रतीक्षा करेंगे। जो भी हो उसमें, उसकी हम प्रतीक्षा करेंगे।

बहुत-कुछ हो सकता है, बहुत-कुछ होगा। कुछ अनुभवों की आपसे बात करूं, ताकि आपको हो तो आपको परेशानी न हो जाये। किसी के भीतर एकदम 'बिजली के कौंधने जैसा' प्रकाश हो जायेगा। किसी के भीतर हजारों सूरज जले हों, ऐसा प्रकाश हो जायेगा। किसी के भीतर 'सुबह जैसे प्रभात होता है', ऐसा प्रकाश हो जायेगा। सबके भीतर अलग-अलग होगा।

प्रकाश का अनुभव होगा अधिकतम लोगों को कुछ थोड़े-से लोगों को गहन अन्धकार का भी अनुभव होगा। कोई अनुभव अनिवार्य नहीं है। सबको भिन्न-भिन्न होंगे, क्योंकि सबके व्यक्तित्व भिन्न हैं। किसी को नीला रंग दिखाई पड़ेगा, किसी को लाल रंग दिखाई पड़ेगा। किसी को ध्वनियां सुनाई पड़ेंगी। किसी को कोई स्वाद उतरने लगेगा। पांचों इन्द्रियों के अनुभव में से कोई भी अनुभव होना शुरू हो जायेगा। वैसा प्रकाश आपने बाहर कभी नहीं देखा होगा, जैसा भीतर दिखाई पड़ेगा। न वैसी ध्वनि बाहर सुनी होगी, जैसी भीतर सुनाई पड़ेगी। यह होगा; यह चौथे चरण में होगा।

चौथे चरण के बाद पांचवां चरण हम यहां नहीं उठायेंगे।. आपको तीन चरण करने हैं, चौथा होने देना है, और पांचवां फिर कभी पीछे आपको होगा। किसी को यहां भी हो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सकता है; उसकी बात नहीं करनी है। पांचवें में सब समाप्त हो जायेगा। न तो प्रकाश रह जायेगा, न अन्धकार रह जायेगा; न कोई ध्वनि रह जायेगी, न कोई रंग रह जायेगा। पांचों इन्द्रियों के सब अनुभव खो जायेंगे। पांचवें चरण में जो होगा, उसके लिए कहने का कोई भी शब्द नहीं है। वह जब आपको होगा तभी आप जान सकेंगे। चौथे चरण तक हम प्रयोग करेंगे और पांचवां चरण आपको फलित होगा। किसी को यहां भी फलित हो जायेगा, किसी को घर जाकर होगा; किसी को कुछ वक्त लगेगा।

लेकिन, यदि आप जारी रखते हैं तो पांचवां चरण भी आ जायेगा — जब सब खो जायेगा; चौथे अनुभव भी खो जायेंगे।

इस पूरी प्रक्रिया में संकल्प ही एकमात्र आधार है। इसलिए इस प्रक्रिया को करने के पहले हम परमात्मा को साक्षी रखकर संकल्प करेंगे तीन बार, और अन्त में अपने संकल्प को पूरा करने का ख्याल रखेंगे पूरे समय।

क्लायमेक्स पर करना है — प्रत्येक चरण को उसकी चोटी पर, आखिरी ऊंचाई पर करना है; उसमें कंजूसी नहीं चलेगी। जैसे कि पानी भाप बनता है सौ डिग्री पर जाकर। निन्यानवे डिग्री पर भी रह जाता है तो पानी रह जाता है उबलता, पर भाप नहीं बनता। सौ डिग्री पर भाप बनता है। तो आपको अपनी सौ डिग्री ताकत लगा देनी है। तो ही दूसरे चरण में प्रवेश करेंगे। अगर आपने तीन चरणों में सौ डिग्री ताकत लगा दी तो आप पायेंगे इवेपोरेशन हो गया, वाष्पीकरण हो गया। आप उड़ जायेंगे। आप नहीं बचेंगे, कोई और आपके भीतर आ जयेगा। वही है जीवन का रहस्य।

उसे समाधि कहें, मुक्ति कहें, निर्वाण का अनुभव कहें — जो भी हम शब्द देना चाहें, दे सकते हैं।

यह प्रयोग खड़े होकर करने का है और फासले पर खड़े होना है ताकि कोई नीचे गिरे तो किसी को चोट न लग जाये, किसी को धक्का न लग जाये। और आपको धक्का लग भी जाये तो आपको फिक्र नहीं करनी है, आपको काम जारी रखना है।

तो अब आप दूर-दूर फैल जायें, बातचीत बिल्कुल न करें। सब शान्त हो जायें, आंख बन्द करें, संकल्प करें — 'चालीस मिनट तक आंखें बन्द रहेंगी।' संकल्प करें तीन बार प्रभु को साक्षी रखकर...कि 'ध्यान में मैं पूरी शक्ति लगाऊंगा'।

टिप्पणी : इस प्रयोग के तीसरे चरण में अब 'मैं कौन हूं - मैं कौन हूं' न पूछकर साधक लगातार दस मिनट तक जोर-जोर से महामन्त्र 'हू-हू-हू' की आवाज करते हैं और साथ ही पंजों पर खड़े होकर और दोनों हाथ ऊपर उठाकर एक ही जगह पर उछलते रहते हैं। महामन्त्र 'हू' का प्रयोग बेजोड़ असरकारक है, इसलिए भगवान श्री ने रूपान्तर किया है। चौथे चरण में भी भगवान श्री ने थोड़ी बदलाहट की है। तीसरे चरण के अंत में हमें शरीर को उसी अवस्था में बर्फ की भांति जम जाना है जिस अवस्था में हम अंतिम क्षण में हों। साथ ही इस प्रयोग में अब एक चरण बढ़ा दिया है — पांचवां चरण।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पांचवें चरण में हम नाचकर आनन्द को अभिव्यक्त करते हैं।

२. महामन्त्र — 'हू' के गुह्य रहस्य

(साधना शिविर, आनन्द-शिला, त्रिमूर्ति हिल्स, अम्बरनाथ, बम्बई में प्रातःकाल दिनांक १४ फरवरी, १९७३ को भगवान श्री द्वारा दिये गये प्रवचन का एक अंश)

एक मित्र ने प्रश्न पूछा है कि सक्रिय-ध्यान के प्रयोग में 'हू' महामन्त्र का उपयोग हम करते हैं, इस्लाम के अनुयायी मानते हैं कि इस मन्त्र का उपयोग करने से सब-कुछ फना (नष्ट) हो जाता है। अतः वे लोग शहर में 'हू' की ध्वनि करने के पक्ष में नहीं हैं, इस सम्बन्ध में कुछ कहें।

बात तो सच है। यह मन्त्र है तो फना होने के लिए, समाप्त हो जाने के लिए, मिट जाने के लिए। लेकिन, यह मिट जाना 'और बड़े' हो जाने का उपाय है।

सूफियों ने इस मन्त्र का प्रयोग किया है। यह अल्लाह का आखिरी हिस्सा है। सूफी साधक अल्लाह से शुरू करता है — 'अल्लाह, अल्लाह, अल्लाह' की गूंज उठाता है। जैसे-जैसे यह गूंज सघन होती जाती है, अल्लाह का रूप 'अल्लाहू, अल्लाहू' हो जाता है — अपने-आप हो जाता है। अगर आप जोर से, तेजी से भीतर चिल्लायेंगे — 'अल्लाह, अल्लाह', तो धीरे-धीरे आप पायेंगे कि वह 'अल्लाहू, अल्लाहू' होता जा रहा है। यह सब अपने-आप हो जाता है, इसको करना नहीं पड़ता है। जब यह गूंज और तीव्र हो जाती है और जब दो 'अल्लाहू' के बीच जगह नहीं छोड़ते, इससे एक 'अल्लाहू, अल्लाहू' की जगह 'लाहू, लाहू, लाहू' रह जाता है। और तीव्रता जब लाते हैं, तो 'ला' भी छूट जाता है और 'हू' रह जाता है। फिर अन्त में 'हू' की जगह सिर्फ हुंकार रह जाती है।

यह 'हू' मन्त्र निश्चित ही फना होने के लिए है। इस मन्त्र का साधक उपयोग करता है, अपने को मिटाने के लिए, अपने को समाप्त करने के लिए। यह अपने हाथ अपनी मौत को निमन्त्रण है — उस साधारण मौत को नहीं, जो इस शरीर की है — निमन्त्रण है उस महामृत्यु को, जो कि अहंकार की और मन की है; जो कि मुझे बिल्कुल मिटा देगी। यह जिसको हम मौत कहते हैं, यह हमारे अहंकार को, हमारे मन को बिल्कुल नहीं मिटाती। सच तो यह है कि यह मिटाती ही नहीं, और यह भी सच है कि यह हमें मिटने से बचाती है। जब शरीर बिल्कुल सड़-गल जाता है, अगर हम उसमें ही रहें, तो मिट जायेंगे, तो यह मौत हमें नया शरीर दे देती है। जैसे कि कोई आपके पुराने मकान को गिरते देखकर कि इसमें आप मिट न जाओ, आपको निमन्त्रण दे और कहे कि आओ मेरे नये मकान में बस जाओ। तो मौत मिटाती नहीं, सिर्फ आपके खंडहर हो गये शरीर को हटाती है और नया, ज्यादा स्वस्थ, ज्यादा ताजा शरीर आपको दे देती है।

'फना' सूफियों का शब्द है, उसका मतलब है — वास्तविक मौत — वास्तविक

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मौत, जो सच में ही मिटाती है। वह जो भीतर 'मैं' का भाव है, उसे छिन्न-भिन्न कर देती है। इस 'हू' की ध्वनि में वह राज छिपा है, जो आपके 'मैं' के भाव को तोड़ता है।

बहुत लोगों को ऐसा लगता है कि 'मैं' को एक ध्वनि कैसे तोड़ेगी! आपको पता नहीं कि 'मैं' क्या है। 'मैं' भी एक ध्वनि है। उसके विपरीत ध्वनियां भी हैं, जिनका उपयोग किया जाये, तो वह विसर्जित हो जायेगी, टूट जायेगी, नष्ट हो जायेगी। हजारों साल की साधनाओं के बाद उन ध्वनियों को खोज लिया है, जो 'मैं' के एन्टिडोट हैं, विपरीत औषधि हैं। और इसलिए डर भी पैदा होता है कि मैं मिट जाऊंगा, तो घबराहट भी पैदा होती है।

नगर में 'हू' का प्रयोग करने से डरने की कोई जरूरत नहीं है। डर पैदा होता है लेकिन डरने की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि नगर में जो हैं, उन सभी को, बिना फना हुए, बिना मिटे, वास्तविक जीवन नहीं मिलेगा। लेकिन घबराहट भी ठीक है, क्योंकि आदमी अपने को बचाना चाहता है; सोचता है, कहीं कोई मिटने का उपाय न हो जाये।

आपको ख्याल न होगा...अगर एक आदमी को आप बीच में बिठा लें और बाहर आदमी चारों तरफ हाथ बांधकर, गोल घेरे में जोर से 'हू' का हुंकार करना शुरू करें, तो वह आदमी कंपना शुरू हो जायेगा, और घबराना शुरू हो जायेगा, वह ना भी करे तो भी। 'हू' भीतर एक भय पैदा करता है।

एक बहुत मजेदार घटना 'हू' के प्रयोग के साथ घटी। भरोसे-योग्य नहीं थी, इसलिए अब तक मैंने कही नहीं थी।

एक संन्यासी हैं — स्वामी आनन्द विजय, जबलपुर में। नगर के बाहर, एक एकांत स्थल पर उन्होंने अपने लिए रहने की जगह बना ली और वहां उन्होंने 'हू' के इस महामन्त्र का प्रगाढ़ता से प्रयोग शुरू किया। कभी ज्यादा मित्र भी इकट्ठे होकर करते, अकेले तो वे करते ही, दो-चार सदस्य जो उनके परिवार में थे, वे तो करते ही। फिर वे बड़े जोर से बीमार पड़े। बीमारी में एक दिन उनकी हालत करीब-करीब सन्निपात-जैसी हो गयी। लेकिन जब 'इधर' सन्निपात होता है, तो कभी-कभी 'उधर' के द्वार खुल जाते हैं। कभी-कभी जब 'इधर' से आदमी मरने के करीब पहुंच जाता है, तो कुछ चीजें उसे दिखाई पड़ने लगती हैं, जो सामान्य आदमी को कभी नहीं दिखाई पड़ती हैं, क्योंकि वह मौत के करीब सरक जाता है, जिन्दगी से दूर हट जाता है।

कोई १०६ डिग्री उनको बुखार था और सन्निपात की हालत थी। तब उनको ऐसा लगा कि उनके कमरे में कई प्रेतात्मायें खड़ी हैं और वे सब उनसे कह रही हैं कि नगर के बाहर यहां देवताल पर तुम जो 'हू' का उच्चार कर रहे हो, जब तक तुम उसे बन्द नहीं करोगे, तब तक तुम ठीक न हो सकोगे। हम सब मृत आत्माएं हैं, जो यहां बहुत दिन से रह रही हैं और तुम्हारे 'हू' के उच्चार से हम बहुत भयभीत हो गये हैं।

होश में आने पर उनको यह याद रहा और उन्होंने मुझे पत्र लिखा और कहा कि मुझे भरोसा नहीं आता कि यह सच हो सकता है; यह मेरी क़ोई कल्पना ही हो सकती है, कोई

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ख्याल ही हो सकता है।

फिर दो बार यह घटना और घटी — अब तो वे चेहरा भी पहचानने लगे। और वे सारी मृत-आत्माएं कहतीं कि यहां से हट जाओ; हमारा आवास यहां बहुत दिनों से है। और अगर तुम यहां 'हू' करते ही रहे तो या तो हमको हटना पड़ेगा या तुम यहां से हट जाओ।

यह कल्पना हो सकती है, लेकिन एक और कारण मिला है, जिससे लगा कि यह कल्पना नहीं है। आनन्द विजय को भी चिंता थी कि यह कल्पना तो नहीं है, इसलिए उनकी निष्ठा भी साफ है। उनको भी भय और संकोच है कि किसी को कहूं या न कहूं। क्योंकि यह बिल्कुल स्वप्न हो सकता है। और उनको भी भरोसा नहीं आता कि प्रेतात्माएं इस 'हू' के हुंकार से घबरा सकती हैं। सिर्फ जांच के लिए, उन्होंने एक प्रयोग किया।

उसी समय, उसी के थोड़े दिन पहले लामा करमापा ने मेरे सम्बन्ध में कुछ कहा था, वह उन्होंने पढ़ा था। करमापा ने यह कहा था कि मेरा एक शरीर तिब्बत की गुफा में सुरक्षित है, पुराने जन्म का। वहां निन्यानबे शरीर सुरक्षित हैं, तो उसमें एक शरीर मेरा है, ऐसा करमापा ने कहा था।

तिब्बत में उन्होंने कोशिश की है कि हजारों वर्षों में जिन शरीरों में कुछ विशेष घटनायें घटी हैं, उनको प्रयोग की तरह सुरक्षित रखा है, क्योंकि वैसी घटनायें दोबारा नहीं घटतीं और आसानी से नहीं घटतीं। कभी-कभी लाखों साल बाद घटती हैं। जैसे किसी व्यक्ति का तीसरा-नेत्र खुल गया और तीसरे-नेत्र के ख़ुलने के साथ ही उसकी हड्डी में छेद हो गया — वहां जहां तीसरा-नेत्र है। ऐसी घटनां कभी लाखों साल में एक बार घटती है। तीसरी आंख तो कई आदमियों की खुल जाती है, लेकिन वह छेद सभी को नहीं होता। कभी वह छेद हो जाता है; जब तीसरी-आंख अपनी पूर्णता में खुलती है, तब वह छेद होता है। तो फिर वैसी खोपड़ी को वे सुरक्षित रख लेते हैं या वैसे शरीर को वे सुरक्षित रख लेते हैं। जैसे किसी व्यक्ति की काम-ऊर्जा पूरी उठी और उसके मस्तिष्क को फाड़कर ब्रह्मांड में लीन हो गयी, तो वहां छेद हो जाता है। वह छेद कभी-कभी होता है। बहुत लोग विश्वात्मा में लीन होते हैं, लेकिन ऊर्जा इतनी धीमी धीमी और इतने लम्बे अंतराल में लीन होती है कि छेद नहीं होता। कभी-कभी अचानक इतनी त्वरा से यह घटना घटती है कि पूरी ऊर्जा मस्तिष्क को फाड़कर विश्वात्मा में लीन हो जाती है, तो छेद हो जाता है। तो उस शरीर को सुरक्षित रखते हैं।

इस सम्बन्ध में तिब्बती साधकों ने अब तक मनुष्य-जाति के इतिहास में सबसे बड़ा महाप्रयोग किया है। इस तरह के निन्यानबे शरीर उन्होंने सुरक्षित रखे हैं। तो लामा करमापा ने कहा था कि एक मेरा शरीर भी उन निन्यानबे शरीरों में सुरक्षित है। यह आनन्द विजय ने पढ़ा था, तो उन्होंने सोचा कि अगर यह सच है और अगर मैं सन्निपात-जैसी ध्यानावस्था में इतने करीब पहुंच जाता हूं प्रेतात्माओं के, तो मैं जानना चाहूंगा कि वह

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कौन-सा शरीर है, निन्यानबे में कौन-सा शरीर भगवान श्री का है, तो मैं गिनती करूंगा और अगर मुझे दिखाई पड़ जाये और वही निकले तो मैं समझूंगा कि जो कुछ हो रहा है, वह सच है। उन्होंने मुझे इसकी खबर की। मैंने कहा, प्रयोग करो।

प्रयोग करके उन्होंने मुझे खबर की कि वह तीसरा शरीर है। इसमें तो भूल है, लेकिन फिर भी यह ठीक है। उन्होंने दूसरे छोर से गिनती की। वह तीसरा शरीर नहीं है, वह सत्तानबेवां (९७ वां) शरीर है, पर फिर भी सच है। निन्यानबे शरीर रखे हैं; उन्होंने गिनती की — जहां से उन्होंने समझा कि प्रारम्भ है। वह प्रारम्भ नहीं है, अन्त है। लेकिन तीसरा वे गिन पाये, यह बड़ी गहरी बात है। शरीर सत्तानबेवां है, लेकिन अगर उलटा गिना जाये, तो तीसरा हो सकता है।

तो, मैंने उनको कहा कि तुम घबराओ मत। 'हू' के प्रयोग से जो हो रहा है, वह तो ठीक हो रहा है। तुम जारी रखो। और एक घटना और घटेगी, उसकी प्रतीक्षा करना। वह घटना भी घट गयी।

वे बीमार पड़ते चले गये और वे आत्मायें उनको बार-बार कहती चली गयीं। परन्तु मैंने उनसे कह रखा था कि तुम स्पष्ट कह देना कि यहां से मैं हटने वाला नहीं हूं; यह 'हू' का प्रयोग यहां जारी रहेगा, तुम्हें रुकना हो तो रुको; तुम्हें भी सम्मिलित होना हो तो सम्मिलित हो जाओ; भागना हो तो भाग जाओ। मैं यहां से हटने वाला नहीं हूं। जिस दिन उन्होंने यह सकल्प पूरा कर लिया, उस दिन दूसरी आत्मायें उन्हें दिखाई पड़ीं और उन्होंने कहा कि तुम 'हू' का प्रयोग जारी रखो, हम भी इसी स्थान पर रहने वाली आत्मायें हैं, जो तुम्हारे 'हू' से परेशान हैं, ये हट ही जायें, तो हम पर भी बड़ी कृपा हो।

ये सब, भरोसा न आये, उस जगत की बातें हैं।

'हू' से तकलीफ हो सकती है। लेकिन जिन मित्रों को ऐसी तकलीफ होती हो, उनको स्मरण रखना है कि परमात्मा के रास्ते पर फना होने के अतिरिक्त कोई दूसरा मार्ग नहीं है। अपने को मिटाना ही होगा, अगर चाहते हो उसे पा लेना, जो फिर मिटता नहीं है।

मृत्यु ही अमृत का द्वार है सहज स्वीकार से जो मृत्यु का साक्षात्कार कर लेता है, मृत्यु उसके लिए समाप्त हो जाती है। जो अपने को बचाता है, वह खोता है और जो खोता है, वह सदा के लिए बचा रहता है।

३. आत्म-साधना में शरीर-शुद्धि के सूक्ष्म रहस्य

साधना की जो दृष्टि मेरे मन में है, वह किन्हीं शास्त्रों पर, किन्हीं ग्रन्थों पर, किसी विशेष सम्प्रदाय पर आधारित नहीं है। जैसा मैंने अपने भीतर चलकर जाना है, उन रास्तों की बातभर आपसे कर रहा हूं। इसलिए मेरी बात कोई सैद्धान्तिक बात नहीं है। जब मैं आपसे कह रहा हूं कि आप चलें और देखें, तो मुझे रत्तीभर भी ऐसा ख्याल नहीं है कि आप चलेंगे, तो जो पाने की आपकी कल्पना है, उसे आप नहीं पा सकेंगे। इसलिए यह

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आश्वासन और विश्वास है कि जिन रास्तों पर मैंने प्रवेश करके देखा है, केवल उनकी ही आपसे बात कर रहा हूं।

एक बहुत पीड़ा और सन्ताप के समय को मैंने गुजारा। बहुत चेष्टा के, बहुत प्रयत्न के समय को मैंने गुजारा। उस समय बहुत कोशिश, बहुत प्रयत्न करता था — अन्तस् प्रवेश की। बहुत रास्तों से, बहुत पद्धतियों से उस तरफ जाने की बड़ी संलग्न चेष्टा की। बहुत पीड़ा के दिन थे और बहुत दुख परेशानी के दिन थे। लेकिन सतत प्रयास से — जैसे पर्वत से कोई झरना गिरता हो और गिरता ही चला जाये, तो नीचे की चट्टानें भी टूट जाती हैं — वैसे ही सतत प्रयास से, किसी क्षण में कोई प्रवेश हुआ। उस प्रवेश को जिस रास्ते से मैंने सम्भव पाया, सिर्फ उसी रास्ते की आपसे बात कर रहा हूं। और इसलिए बहुत आश्वासन और विश्वास से आपको कह सकता हूं कि यदि प्रयोग किया, तो परिणाम सुनिश्चित है।

जीवन के तथ्यों की पीड़ा को बहुत मैंने अनुभव किया। वह पीड़ा गयी, और उसके जाने में जिन सीढ़ियों का दिखाई पड़ना मुझे शुरू हुआ उन सीढ़ियों में पहली सीढ़ी की आज मैं चर्चा करूंगा।

ऐसा मुझे दिखायी पड़ता है कि परम जीवन या परमात्मा या आत्मा या सत्य को पाने के लिए दो बातें जरूरी हैं। एक बात तो जरूरी है — जो है साधना की परिधि, और दूसरी बात जरूरी है — जिसको हम कहेंगे, साधना का केन्द्र। साधना की परिधि और साधना का केन्द्र; या साधना का शरीर और साधना की आत्मा।

ये तीन ही बातें हैं — साधना की परिधि, साधना का केन्द्र और साधना का परिणाम। या यों कह सकते हैं कि साधना की भूमिका, साधना, और साधना की सिद्धि।

साधना की भूमिका या साधना की परिधि से आपके व्यक्तित्व की जो परिधि है, वही सम्बन्धित होती है। आपके व्यक्तित्व की परिधि आपका शरीर है। साधना की परिधि भी आपका शरीर है।

साधना का बिल्कुल प्रारम्भिक चरण आपके शरीर पर रखना होता है। इसलिए एक बात स्मरण रखनी है कि अगर शरीर के सम्बन्ध में कोई सुनी-सुनायी बुरी भावना मन में हो, तो उसे फेंक दें। शरीर मात्र साधन है — संसार का भी और सत्य का भी। शरीर न शत्रु है, न मित्र है — शरीर मात्र साधन है। आप चाहें तो संसार में प्रविष्ट हो जायें और चाहें तो परमात्मा में प्रवेश पा जायें।

शरीर मात्र साधन है, उसके सम्बन्ध में कोई दुर्भाव मन में न रखें।

ऐसी बहुत-सी बातें प्रचलित हो गयी हैं कि शरीर दुश्मन है, शरीर पाप है और शरीर बुरा है, शत्रु है और इसका दमन करना है। वह, मैं आपको कहूं, गलत है। न शरीर शत्रु है, न शरीर मित्र है। आप उसका जैसा उपयोग करते हैं, वही वह साबित हो जाता है। और इसलिए शरीर बड़ा अद्‌भुत है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आत्म-साधना

शरीर बड़ा अद्भुत है। दुनिया में जो भी बुरा है, वह भी शरीर से हुआ है और जो भी शुभ हुआ है, वह भी शरीर से हुआ है। शरीर केवल एक उपकरण है, एक यन्त्र है। साधना भी, जरूरी है कि शरीर से शुरू हो, क्योंकि बिना इस यन्त्र को व्यवस्थित किये आगे कोई भी नहीं बढ़ सकता। शरीर को बिना व्यवस्थित किये कोई आगे नहीं बढ़ सकता।

तो पहला चरण है — शरीर-शुद्धि। शरीर जितना शुद्ध होगा, उतना अन्तस् प्रवेश में सहयोगी हो जायेगा। शरीर-शुद्धि के क्या अर्थ हैं? शरीर-शुद्धि का पहला तो अर्थ है — शरीर के भीतर, शरीर के संस्थान में, शरीर के यन्त्र में कोई भी रुकावट, कोई भी ग्रन्थि, कोई भी काम्प्लेक्स न हो। तब शरीर शुद्ध होता है। अगर शरीर बिल्कुल निर्ग्रन्थ हो, उसमें कोई ग्रन्थि न हो, तो शरीर शुद्ध स्थिति में होता है और अन्तस् प्रवेश में सहयोगी हो जाता है।

समझें, शरीर में कैसे काम्प्लेक्स, ग्रन्थियां पैदा हो जाती हैं? अगर आप बहुत क्रुद्ध होंगे, क्रोध करेंगे और क्रोध को प्रगट न कर पायेंगे, तो उस क्रोध की जो ऊष्मा और गर्मी पैदा होगी, वह शरीर के किसी अंग में ग्रन्थि पैदा कर देगी। आपने देखा होगा, क्रोध में हिस्टीरिया आ सकती है। अभी जो सारे प्रयोग चलते हैं, स्वास्थ्य के ऊपर, उनसे ज्ञात होता है कि सौ बीमारियों में कोई पचास बीमारियां शरीर में नहीं होतीं, मन में होती हैं। लेकिन मन की बीमारियां शरीर में ग्रन्थि पैदा कर देती हैं। शरीर में अगर ग्रन्थियां पैदा हो जायें, शरीर में अगर गाठें पैदा हो जायें, तो शरीर का संस्थान अकड़ जाता है और अशुद्ध हो जाता है।

तो शरीर की शुद्धि के लिए सारे योग ने, सारे धर्मों ने बड़े अद्भुत और क्रान्तिकारी प्रयोग किये हैं। और उन प्रयोगों को थोड़ा समझना जरूरी है। अगर उनका अपने शरीर पर आप प्रयोग करते हैं, तो थोड़े ही दिनों में आप हैरान हो जायेंगे कि शरीर बड़ी अद्भुत जगह है, बड़ी अद्भुत बात है। और तब यह आपको शत्रु न मालूम होगा, बल्कि मन्दिर मालूम होगा — जिसके भीतर परमात्मा विराजमान है। तब यह दुश्मन नहीं मालूम होगा, यह बड़ा साथी मालूम होगा और आप इसके प्रति अनुगृहीत होंगे — क्योंकि शरीर आपका नहीं है, पदार्थ से बना है। आप भिन्न हैं और शरीर भिन्न है। फिर भी आप इसका अद्भुत उपयोग कर सकते हैं। और तब आप शरीर के प्रति एक बड़ा ग्रेटिट्यूड, बड़ी कृतज्ञता अनुभव करेंगे कि शरीर इतना साथ दे रहा है।

तो शरीर में ग्रन्थियां पैदा न हों, यह शरीर-शुद्धि के लिए पहला चरण है।

शरीर में हमारे बहुत ग्रन्थियां हैं। अब जैसे मैं आपसे कहूं — अभी कुछ दिन हुए, एक व्यक्ति मेरे पास आये थे। वे मुझसे बोले, 'मैं बहुत दिनों से किसी धर्म की साधना करता हूं। मन बड़ा शान्त हो गया है।' मैंने उनसे कहा, 'मुझे आपका मन शान्त दिखाई नहीं पड़ता।' वे बोले, 'आप कैसे कह सकते हैं? मैंने उनसे कहा, जितनी देर से आप आये हैं, आपके दोनों पैर तेजी से हिल रहे हैं।' (वे बैठे हैं और जोर से अपने पैरों को

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हिला रहे हैं) मैंने उनसे कहा, 'यह असम्भव है कि मन शान्त हो और पैर इस भांति हिलें।

शरीर में जो भी कम्पन हैं, वे मन के कम्पन से पैदा होते हैं। मन का कंम्पन जितना कम होने लगता है, शरीर उतना थिर होने लगेगा।

बुद्ध और महावीर की मूर्तियां बिल्कुल पत्थर जैसी मालूम होती हैं। ये आदमी जब बैठे होते थे, तो भी ऐसे ही मालूम होते थे। ये मूर्तियां ही पत्थर-जैसी नहीं मालूम होती है, इन आदमियों को भी आपने देखा होता बैठे, तो ये भी बिल्कुल पत्थर-जैसे मालूम होते। हमने इनकी पत्थर की मूर्तियां व्यर्थ ही नहीं बनायीं। उसके पीछे कारण था। ये बिल्कुल पत्थर-जैसे मालूम होने लगे थे। इनके भीतर कम्पन विलीन हो गये थे। या कि जब कम्पन सार्थक थे, जब उनकी जरूरत थी — वे होते थे, अन्यथा वे विलीन थे।

आप जब पैर हिला रहे होते हैं, तो आपके भीतर अशान्ति से जो एनर्जी पैदा हो रही है, जो शक्ति पैदा हो रही है, वह निकलने का कोई रास्ता न पाकर पैर में कम्पन का रूप लेकर निकलती है।

जब एक आदमी क्रोध में होता है, तो उसके दांत भिंच जाते हैं, मुट्ठियां बंध जाती हैं। क्यों? उसकी आंखों में खून उतर आता है — क्यों? आखिर मुट्ठियां बंधने से क्रोध का क्या प्रयोजन है? अगर आप अकेले में भी किसी पर क्रुद्ध होंगे, तो भी मुट्ठियां बंध जायेंगी। वहां तो कोई मारने को भी नहीं, जिसको आप मारें। लेकिन जो शक्ति क्रोध से पैदा हो रही है, उसका निष्कासन कैसे होगा? हाथ के स्नायु खिंचकर उस शक्ति को व्यर्थ कर देते हैं।

सभ्यता ने बहुत दिक्कत पैदा कर दी है। असभ्य आदमी का शरीर हमारे शरीर से ज्यादा शुद्ध होता है। एक जंगली आदमी का शरीर हमारे शरीर से बहुत शुद्ध होता है। उसमें ग्रन्थियां नहीं होतीं, क्योंकि भावावेग में वह उन्हें प्रगट कर देता है। लेकिन हम अपने भावावेगों को दबा लेते हैं।

समझ लीजिये, आप दफ्तर में हैं और मालिक ने कुछ कहा। आपको क्रोध तो आया, लेकिन आप मुट्ठियां नहीं भींच सकते। वह जो शक्ति पैदा हुई उसका क्या होगा? शक्ति कभी नष्ट नहीं होती — स्मरण रखिये। कोई शक्ति नष्ट नहीं होती।

...आपने मुझे गाली दी और मुझे क्रोध आ गया, लेकिन यहां इतने लोग थे कि मैं उसे प्रगट नहीं कर सका — न दांत भींच सका, न हाथ खींच सका, न गाली बक सका, न मैं गुस्से में कूद सका, न पत्थर उठा सका; तो उस शक्ति का क्या होगा, जो मेरे भीतर पैदा हो गयी? वह शक्ति मेरे शरीर के किसी अंग को विकृत, क्रिपिल्ड कर देगी — उसको विकृत करने में व्यय हो जायेगी। इससे ग्रन्थि पैदा होगी। शरीर की ग्रन्थियों का मेरा मतलब यही है। इस तरह शरीर में हमारे बहुत ग्रन्थियां पैदा हो जाती हैं। पर आप शायद हैरान होंगे; आप कहेंगे, ऐसी हमें किन्हीं ग्रन्थियों का पता नहीं है। तो मैं आपको एक प्रयोग करने को कहता हूं; आप उसे करके देखें, फिर आपको पता चलेगा कि कितनी ग्रन्थियां हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आत्म-साधना

क्या आपने कभी ख्याल किया है कि अकेले किसी कमरे में आप जोर से दांत बिचकाने लगे हैं या आईने में जीभ दिखाने लगे हैं, या गुस्से से आंख फाड़ने लगे हैं और अपने पर भी हंसे होंगे कि यह मैं क्या कर रहा हूं। हो सकता है, स्नानगृह में आप नहा रहे हैं और आप अचानक कूदे हैं। आप हैरान होंगे कि मैं क्यों कूदा हूं या मैंने आईने में देखकर दांत क्यों बिचकाये हैं या मेरा जोर से गुनगुनाने का मन क्यों हुआ है।

मैं आपको कहूं, किसी दिन आधे घन्टे को सप्ताह में एक एकान्त कमरे में बन्द हो जायें। और आपका शरीर जो चाहे, करने दें। बहुत हैरान होंगे। हो सकता है, शरीर आपका नाचे। जो करना चाहे — करने दें, आप उसे बिल्कुल न रोकें। और आप बहुत हैरान होंगे। हो सकता है, शरीर आपका नाचे, हो सकता है आप कूदें, हो सकता है आप चिल्लायें। हो सकता है, आप किसी काल्पनिक दुश्मन पर टूट पड़ें — यह सब हो सकता है। और तब आपको पता चलेगा कि यह क्या हो रहा है!

ये सारी ग्रन्थियां हैं, जो दबी हुई हैं, भीतर मौजूद हैं और निकलना चाहती हैं, लेकिन समाज उन्हें नहीं निकलने देता और आप भी नहीं निकलने देते। इस तरह हमारा शरीर बहुत-सी ग्रन्थियों का घर बना हुआ है। और जो शरीर ग्रन्थियों से भरा हुआ है, वह शरीर शुद्ध नहीं होता, उसके सहारे साधक भीतर प्रवेश नहीं कर सकते।

तो योग का पहला चरण होता है — शरीर-शुद्धि। और शरीर-शुद्धि का पहला चरण है — शरीर की ग्रन्थियों का विसर्जन। नयी ग्रन्थियां तो बनायें नहीं, और पुरानी ग्रन्थियों को विसर्जित करने का उपाय करें। और उसके उपाय के लिए जरूरी है कि महीने में एक बार अकेले कमरे में बन्द हो जायें और शरीर जैसा करना चाहे, करने दें। अगर कपड़े फेंककर नग्न, नाचने का मन हो तो नाचें और सारे कपड़े फेंक दें। और आप हैरान होंगे, आधे घन्टे की उछल-कूद के बाद आप बहुत रिलैक्स्ड, बहुत शान्त, बहुत स्वस्थ अनुभव करेंगे। यह बात बहुत अजीब लगेगी, लेकिन आप बहुत शान्त अनुभव करेंगे। आपको बहुत हैरानी होगी कि यह शान्ति कैसे आ गयी।

आप जो व्यायाम करते हैं या घूमने चले जाते हैं, उसके बाद जो आपको हल्कापन लगता है उसका कारण क्या है? उसका कारण यह है कि बहुत-सी ग्रन्थियां उससे विसर्जित होती हैं। आपको पता है, आपका लड़ने का जो मन होता है, लोगों से उलझने का जो मन होता है, उसका कारण क्या है? आपके भीतर बहुत-सी शक्तियां ग्रन्थियों की तरह मौजूद हैं, वे विसर्जित होना चाहती हैं। इसलिए आप बिल्कुल उत्सुक होते हैं कि कोई मिल जाये और लड़ना हो जाये।

जब युद्ध का समय आता है, तब आप सुबह से अखबार पढ़ते हैं — बहुत उत्सुकता से, और सारी दुनिया में बड़ी खूबियों की बातें घटित होती हैं। पिछले महायुद्ध के समय दो बातें घटित हुईं। दुनिया में आत्महत्यायें एकदम कम हो गयीं। आपको शायद पता नहीं होगा। पिछला महायुद्ध हुआ, उसके पहले पहला महायुद्ध हुआ। मनोवैज्ञानिक

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बहुत हैरान हुए कि आत्महत्यायें कम क्यों हो गयीं। एकदम आत्महत्यायें कम हो गयीं! जब तक युद्ध चला, आत्महत्यायें नहीं हुईं। सारी दुनिया में उनका अनुपात एकदम गिर गया। उसका कारण क्या था? और मनोवैज्ञानिक बहुत परेशान हुए कि उन दिनों खून भी नहीं हुए आत्महत्यायें भी नहीं हुईं। और एक बड़ी बात हुई — मानसिक बीमारों की संख्या कम रही, युद्ध के समय में। अन्ततः यह समझ में आया कि युद्ध की जो खबरें थीं, जो जोश-खरोश था, उसमें मनुष्य की बहुत-सी ग्रन्थियां विसर्जित हुईं। और उतनी ग्रन्थियों से उसको बचाया। यह जो युद्ध की खबरें आप सुनते हैं, तो आप किसी-न-किसी तरह उससे संलग्न हो जाते हैं। आपके क्रोध और आपकी हिंसा का निकास हो जाता है।

समझ लीजिये, आप गुस्से में आ गये हैं — अगर आप हिटलर के प्रति गुस्से में आ गये हैं, तो हिटलर की मूर्ति बनाकर जला देंगे — नारे लगायेंगे; चिल्लायेंगे। घर में बैठकर हिटलर को गालियां देंगे — काल्पनिक दुश्मन! हिटलर तो मौजूद नहीं है आपके सामने! और इससे आपकी बहुत-सी ग्रन्थियां विसर्जित होंगी। और उसका परिणाम होगा यह कि आपको मानसिक स्वास्थ्य मिलेगा।

आप हैरान होंगे यह जानकर, कि बाहर से हम चाहते हैं कि युद्ध न हों, लेकिन भीतर से हमारा कोई मन चाहता है कि युद्ध हो। युद्ध के वक्त लोग काफी खुश नजर आते हैं। खतरा बहुत उपद्रव का होता है, लेकिन लोग खुश नजर आते हैं। अभी हिन्दुस्तान पर चीन का हमला हुआ। आपमें एकदम से जो शक्ति का संचार हुआ, तो क्या आप समझते हैं कि उसका कारण क्या था? उसका कारण था कि आपकी बहुत-सी ग्रन्थियां, जो शरीर में बंधी थीं, बहुत गुस्से में निकलीं और आप हल्के हुए। और जब तक दुनिया में ऐसे लोग हैं, जिनके शरीर अशुद्ध हैं, तब तक युद्ध से नहीं बचा जा सकता। युद्ध तब समाप्त होंगे, जब लोगों के शरीर इतने शुद्ध होंगे कि उनके पास कोई ग्रन्थियां युद्ध में विसर्जित करने को नहीं होंगी। आपको यह मैं कह रहा हूं, यह बहुत अजीब-सा लगेगा, लेकिन जब तक लोगों के शरीर शुद्ध स्थिति में नहीं हैं, दुनिया से युद्ध बन्द नहीं हो सकते। कोई कितना ही कोशिश करे, युद्ध का मजा रहेगा।

आपको भी लड़ने में मजा आता है। इसे जरा विचार करना, आपको लड़ने में मजा आता है। यह लड़ाई चाहे किसी तल की हो — चाहे श्वेताम्बर दिगम्बर जैन से लड़ता हो और चाहे हिन्दू मुसलमान से लड़ता हो — उन सब में युद्ध का ही मजा है। आप देखते हैं कि एक छोटा धर्म बनता है, उसमें बीस-बीस सम्प्रदाय बन जाते हैं। फिर एक-एक सम्प्रदाय में छोटे-छोटे सम्प्रदाय बन जाते हैं; क्या कारण है? लोगों के शरीर अशुद्ध हैं और ग्रन्थियों से भरे हैं और उनको लड़ने के लिए कोई भी बहाना चाहिए। वह कोई छोटा-सा बहाना लेंगे और लड़ेंगे। और लड़ने से उनको राहत मिलेगी; उनको हल्कापन आयेगा।

शरीर-शुद्धि प्राथमिक चरण है — साधना का। तो आपके लिए मैं दो बातें कहता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हूं। पुरानी जो ग्रन्थियां हैं, उनको विसर्जित करने का तो उपाय यह है कि आप एकान्त में बिल्कुल जंगली हो जायें। छोड़ दें दूसरों का सारा ख्याल। कमरा बन्द कर दें और एक-एक पर्तें जो जबरदस्ती आपने-अपने ऊपर लाद रखी हैं, वे सब ढीली छोड़ दें — और फिर जो हो, उसे होने दें; शरीर क्या करता है; उसे देखें — वह नाचता है, कूदता है, गिरकर पड़ा रह जाता है, छुरी मारता है, गोली चलाता है — क्या करता है, उसे देखें और चुपचाप उसे करने दें। आप एक-दो महीने के प्रयोग में बहुत हैरान हो जायेंगे। आप पायेंगे आपके शरीर ने एक अद्‌भुत सरलता, सात्विकता और शुद्धि को उपलब्ध किया है। इस तरह पुरानी ग्रन्थियों का विसर्जन होगा, पुरानी ग्रन्थियों की निर्जरा होगी।

जो पुराने साधक जंगल में चले जाते थे और एकान्त पसन्द करते थे और नहीं चाहते थे कि भीड़ में आयें, उसके बड़े-से बड़े कारणों में एक कारण यह भी था। उस एकान्त में, आपको पता नहीं कि महावीर ने क्या किया; आपको पता नहीं है कि बुद्ध ने क्या किया; आपको पता नहीं कि मुहम्मद ने क्या किया। कोई किताबें नहीं कहतीं कि उन्होंने क्या किया। उन पहाड़ों पर जब वे थे, तब वे क्या कर रहे थे? और मैं आपको कहता हूं, यह हो नहीं सकता कि उन्होंने यह न किया हो कि उन्होंने शरीर की ग्रन्थियां विसर्जित न की हों। महावीर को तो हम 'निर्ग्रन्थ' कहते हैं और उसका मैं जो अर्थ करता हूं, वह यही करता हूं — 'सारी ग्रन्थियां क्षीण जिसकी हो गयीं।

सारी ग्रन्थियों के विसर्जन का प्रारम्भिक चरण शरीर है। तो शरीर की ग्रन्थियां जो पीछे पकड़ी हैं, उनको विसर्जित करना है। आपको पहले अजीब-सा लगेगा। अगर आपको जोर से हंसी आये अपने इस काम पर कि मैं यह क्या पागलपन कर रहा हूं कि कूद रहा हूं, तो जोर से हंसिये। अगर आपको खूब रोना आये, तो जोर से रोइये। आप बहुत हैरान होंगे, अगर आपको मैं यहां कह दूं कि आप बिल्कुल छोड़ दें अपना ख्याल, तो आपमें से कई लोग रोने लगेंगे — और कई लोग जोर से हंसने लगेंगे। कभी कोई रुदन, जो बाहर आना चाहता था, पर भीतर दबा रह गया है, वह निकलेगा। और कभी कोई हंसी जो फूट पड़नी थी, उसे रोक लिया गया है — वह कहीं ग्रन्थि बनकर रुकी हुई है — वह निकलेगी। बहुत एब्सर्ड, अटपटा मालूम होगा कि यह क्या हो रहा है; लेकिन यह होगा। इसका एकान्त में प्रयोग करें — शरीर-शुद्धि के लिए। इससे हमारे ऊपर जो पुरानी ग्रन्थियों का बोझ है, वह हल्का होगा।

दूसरी बात, नयी ग्रन्थियां न बनें, इसका प्रयोग करें। यह तो पुरानी ग्रन्थियों के विसर्जन के लिए मैंने कहा। नयी ग्रन्थियां हम रोज बनाये चले जा रहे हैं। आपको मैंने कोई एक अपशब्द कह दिया, और आपको क्रोध उठा, लेकिन सभ्यता और शिष्टता आपको उस क्रोध को प्रकट नहीं करने देगी। एक शक्ति का पुंज आपके भीतर घूमेगा। वह कहां जायेगा? वह किन्हीं नसों को सिकोड़कर, इरछा-तिरछा करके बैठ जायेगा। इसलिए क्रोधी आदमी के चेहरे में, आंखों में और शान्त आदमी के चेहरे में और आंखों में फर्क

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होता है। क्योंकि वहां किसी क्रोध के वेग ने किसी चीज को विकृत नहीं किया है। और शरीर तब अपने परिपूर्ण सौंदर्य को उपलब्ध होता है, जब उसमें कोई ग्रन्थि नहीं होती। यानी शरीर के सौंदर्य का कोई और मतलब ही नहीं है। आंखें तब बड़ी सुन्दर हो जाती हैं। तब कुरूप-से-कुरूप शरीर भी सुन्दर दिखने लगता है।

गांधी का शरीर कुरूप था — जब वे युवा थे, लेकिन जैसे-जैसे वे बूढ़े होते गये, उनमें अभिनव सौंदर्य आया। यह बहुत अद्‌भुत था। वह सौंदर्य शरीर का नहीं था, वह ग्रन्थियों के क्षीण होने का था। उसे कम लोग पहचाने और समझे होंगे। गांधी कुरूप थे, इसमें कोई शक नहीं। गांधी का शरीर किसी भी बाह्य सौंदर्य के माध्यम से सुन्दर नहीं था। अगर आप उनके पुराने चित्र देखेंगे — तो बचपन उनका कुरूप है, जवानी उनकी कुरूप है। लेकिन जैसे-जैसे वे बूढ़े होते हैं, बिल्कुल सुन्दर होते जाते हैं। बुढ़ापे में तो आदमी और असुन्दर होता है। पर वे सुन्दर होते जा रहे हैं। और अगर जीवन का ठीक विकास हो, तो जवानी उतनी सुन्दर नहीं होती है — जितना बुढ़ापा होता है। क्योंकि जवानी में बड़े वेग होते हैं, बुढ़ापा बड़ा निर्वेग हो जाता है।

अगर ठीक विकास हो, तो बुढ़ापा सुन्दरतम क्षण है जीवन का, क्योंकि उस वक्त सारे वेग क्षीण हो जाते हैं। और बुढ़ापे तक सारी ग्रंथियां विलीन होनी चाहिए, अगर ठीक विकास हो।

लेकिन कैसे यह हमारी विकृति इकट्ठी होती है—शरीर के वेगों की? मैंने आपको अपमानजनक शब्द कहा, आप में क्रोध उठा। एक शक्ति पैदा हुई, पर शक्ति नष्ट नहीं होती। कोई शक्ति नष्ट नहीं होती। उसका कोई उपयोग होना चाहिए। अगर उसका उपयोग नहीं होगा, तो वह आपको विकृत करके नष्ट हो जायेगी। तो उपयोग करिये। कैसे उपयोग करियेगा?

समझ लीजिये, आपको क्रोध आ रहा है। आप दफ़्तर में बैठे हुए हैं और आपको बहुत जोर से क्रोध आया और आप उसको प्रकट नहीं कर सकते। आप एक काम करिये—जो शक्ति पैदा हुई है, उसका एक सृजनात्मक परिवर्तन, क्रिएटिव ट्रान्सफार्मेशन करिये। अपने दोनों पैरों को जोर से सिकोड़िये। वे पैर किसी को दिखायी नहीं पड़ रहे हैं। आप दोनों पैरों की सारी मसल्स को जोर से सिकोड़िये। जितना सिकोड़ सकें, उतना सिकोड़ें—उतना उसे तनावपूर्ण बनायें। जब आपकी बिल्कुल सामर्थ्य के बाहर हो जाये खींचना, तब उनको एकदम से रिलैक्स, शिथिल कर दीजिये। आप हैरान होंगे कि क्रोध निष्कासित हो गया। और आपकी पैर की मसल्स (पेशियां) सुन्दर हो जायेंगी; व्यायाम भी हो गया। वह जो क्रोध का वेग उठा था, उसने कुछ विकृत नहीं किया, बल्कि आपके पैर को सुन्दर करके चला गया। तो आपके शरीर के जो अंग अस्वस्थ हों, उनको क्रोध के माध्यम से सुन्दर कर लीजिये, स्वस्थ कर लीजिये। क्योंकि वह जो इनर्जी पैदा हुई है, उसका क्रिएटिव, सृजनात्मक उपयोग हो जायेगा।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आत्म-साधना

अगर आपके हाथ क्रोध से भरे हैं, तो आप दोनों हाथों को जोर से भींचिये। वह सारी शक्ति जो क्रोध की पैदा हुई है, उन हाथों में लगेगी। अगर आपका पेट रुग्ण है, तो सारी पेट की आंतों को अन्दर सिकोड़िये और क्रोध की शक्ति को भाव में परिणत करिये। वह शक्ति जाकर पेट की सारी नसों को सिकोड़ने में व्यय होगी और आप हैरान होंगे—आप एक-दो मिनट बाद पायेंगे कि क्रोध विलीन है और शक्ति उपयुक्त हो गयी, शक्ति का प्रयोग हो गया।

शक्ति हमेशा तटस्थ है! यानी क्रोध की जो शक्ति पैदा हो रही है वह बुरी नहीं; उसका क्रोध की तरह उपयोग हो रहा, यह बुरा है। उसका दूसरा उपयोग करिये। और जो उसका दूसरा उपयोग नहीं करेगा तो शक्ति तो काम करेगी; वह शक्ति तो बिना काम के नहीं रहने वाली है। वह शक्ति तो काम करेगी ही। अगर हम उसका उपयोग सीख लेंगे, तो वह हमारे जीवन को एक क्रांति दे देगी।

तो पुरानी ग्रन्थियों की निर्जरा और ग्रन्थियां बनाने वाली नयी शक्तियों का सृजनात्मक उपयोग—शरीर-शुद्धि के लिए ये दो प्राथमिक चरण हैं। ये बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। सारे योग के आसन मूलतः शरीर के सृजनात्मक उपयोग के लिए हैं। प्राणायाम शरीर की शक्तियों का सृजनात्मक उपयोग करने के लिए हैं। जो व्यक्ति अपनी शरीर की शक्तियों का सृजनात्मक उपयोग नहीं करेगा, तो वे शक्तियां जो कि वरदान हो सकती थीं, उसके लिए अभिशाप हो जायेंगी। हम सब अपनी ही शक्तियों से पीड़ित हैं। यानी यह हमारा दुर्भाग्य हो गया है कि हमारे पास शक्तियां हैं।

जीसस क्राइस्ट के जीवन में एक उल्लेख है। वे एक गांव से निकले। उन्होंने एक आदमी को एक छत पर जोर से गालियां बकते, अश्लील बातें बकते हुए देखा। वे सीढ़ियां चढ़कर उसके पास गये। और उन्होंने उससे कहा, 'मेरे मित्र, यह तुम क्या कर रहे हो? और अपने जीवन को इस अश्लील बकवास में क्यों खर्च कर रहे हो? प्रतीत होता है, तुमने शराब पी ली है।' उस आदमी ने आंख खोली, उसने ईसा को पहचाना। उसने उठकर ईसा को हाथ जोड़े और कहा, 'मेरे प्रभु, मैं तो बिलकुल बीमार था, मैं तो बिलकुल मरणासन्न था, आपने ही अपने आशीर्वाद से मुझे ठीक कर दिया था, क्या आप भूल गये? और अब मैं परिपूर्ण स्वस्थ हूं लेकिन इस स्वास्थ्य का क्या करूं? तो शराब पी लेता हूं। ईसा बहुत हैरान हुए। उसने कहा, 'अब मैं परिपूर्ण स्वस्थ हूं स्वास्थ्य का क्या करूं? तब शराब पी लेता हूं, जो बनता है, वह करता हूं।'

ईसा बहुत दुखी नीचे उतरे। वे गांव में अन्दर गये, तो एक आदमी को उन्होंने एक वेश्या के पीछे भागते हुए देखा, तो उन्होंने कहा, 'मित्र, अपनी आंखों का यह उपयोग कर रहे हो?' उसने ईसा को पहचाना और उनसे कहा, 'आप भूल गये। मैं तो अन्धा था, आपने हाथ रखकर मेरी आंखें एक दफा ठीक कर दी थीं। अब इन आंखों का क्या करूं'?

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ईसा बहुत दुखी मन से उस गांव से वापस लौटते थे। एक आदमी गांव के बाहर छाती पीटकर रो रहा था। ईसा ने उसके सिर पर हाथ रखा और कहा, 'क्यों रो रहे हो? जीवन में बहुत आनंद है, जीवन रोने के लिए नहीं है।' उसने ईसा को पहचाना; कहा, 'भूल गये, मैं मर गया था और लोग कब्र में मुझे ले जा रहे थे, तुमने अपने जादू से मुझे जिन्दा कर दिया था। अब इस जीवन का मैं क्या करूं?'

यह कहानी बिल्कुल काल्पनिक और झूठी-सी मालूम होती है, लेकिन हम क्या कर रहे हैं? हम इस जीवन का क्या कर रहे हैं? हमारे पास जीवन में जो भी शक्तियां मिली हैं, उन सबसे हम स्वयं अपना डिस्ट्रक्शन, उन सबसे हम अपना विनाश कर रहे हैं। जीवन के दो ही रास्ते हैं। जो शक्तियां आपके शरीर और मन में हैं, उनका विनाश कर लें—यही नरक का रास्ता है। और जो शक्तियां और जो ऊर्जायें, जो एनर्जीज आपके भीतर हैं, उनका सृजनात्मक उपयोग कर लें, यही स्वर्ग का रास्ता है।

सृजन स्वर्ग और विनाश नर्क है। अपनी शक्तियों का जो सृजनात्मक उपयोग कर ले, उसने स्वर्ग की तरफ चरण रखने शुरू कर दिये। और जो अपनी शक्तियों का विनाशात्मक उपयोग कर ले, वह नरक की तरफ जा रहा है। और दूसरा कोई मतलब नहीं है।

आप अपने से पूछें; आप क्या कर रहे हैं? जब एक आदमी क्रोध से भरता है तो आप समझते हैं, कितनी गत्यात्मक शक्ति, डायनेमिक फोर्स उसमें पैदा होती है! क्या आपको पता है, एक कमजोर आदमी क्रोध में आकर ऐसी चट्टान उठा सकता है, जिसे वह कभी शांत क्षण में उठाने की कल्पना नहीं कर सकता था! क्या आपको पता है, एक क्रुद्ध आदमी अपने से बहुत बलिष्ठ शांत आदमी को क्षणों में परास्त कर सकता है!

एक दफा जापान में ऐसा हुआ। वहां एक वर्ग होता है—समुराई। वहां के क्षत्रिय हैं वे। उनका धन्धा तलवार चलाना है और जीवन को दांव पर लगाना—यही उनका शौक है। एक समुराई बहुत बड़ा सैनिक था, बहुत बड़ा सेनापति था, उसकी पत्नी से, उसके घर में जो नौकर था, उसका प्रेम हो गया। वहां यह रिवाज था कि अगर किसी की पत्नी से किसी का प्रेम हो जाये, तो वह उसे द्वंद्व-युद्ध के लिए ललकारेगा। दो में से एक मर जायेगा, जो शेष रहेगा, पत्नी का उससे विवाह हो जायेगा, पत्नी उसकी होगी।

तो उस नौकर का, समुराई सेनापति की पत्नी से प्रेम हो गया। सेनापति ने कहा, 'पागल अब द्वंद्व-युद्ध के सिवाय कोई रास्ता नहीं है। अब हम लड़ेंगे। अब तू कल सुबह तलवार लेकर आ जा।' वह नौकर बड़ा घबराया। सेनापति तो तलवार का मास्टर था, वह तो अद्‌भुत कुशल आदमी था। यह बेचारा नौकर, जो घर में झाड़ू-बुहारी लगाता था, यह क्या तलवार चलायेगा! इसने कभी तलवार छुई नहीं थी। इसने उससे कहा, 'मैं कैसे तलवार उठाऊंगा?' लेकिन सेनापति ने कहा, 'अब इसके सिवाय कोई रास्ता नहीं है। रास्ता यही है कि तुम कल तलवार लेकर आ जाओ।' वह घर गया, उसने रात भर सोचा। इसके सिवाय कोई रास्ता नहीं था कि वह सुबह तलवार उठाये। उसने कभी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसके पहले जिन्दगी में तलवार नहीं उठायी थी। उसने सुबह तलवार उठायी, वह तलवार लेकर पहुंचा। लोग देखकर दंग रह गये, वह तो जैसे आग का अंगार था—जब तलवार लेकर वहां पहुंचा, वह सेनापति थोड़ा घबराया और उसने पूछा, 'तुम तलवार उठाना भी जानते हो?' वह बिल्कुल गलत ही पकड़े हुए था। उसने कहा, 'अब कोई सवाल नहीं, अब मरना ही है, तो मारने की कोशिश करेंगे।' और वह बड़ा अजीब द्वंद्व-युद्ध हुआ। उसमें सेनापति मारा गया और वह नौकर जीता।

इस वजह से कि अब मरना ही है, और कोई रास्ता नहीं है—उस नौकर में अद्भुत ऊर्जा और शक्ति पैदा हुई। वह तलवार चलाना बिल्कुल नहीं जानता था। उसने बिलकुल ही गलत वार किए — बिलकुल ही गलत, जो कि उसके ही विपरीत थे। लेकिन उसके वार देखकर, और क्रोध को और उसकी स्थिति को देखकर सेनापति पीछे हटने लगा। उस की सारी कुशलता व्यर्थ हो गयी। क्योंकि वह बिलकुल शांत लड़ रहा था, उसके लिए कोई खास बात नहीं थी। उसके लिए लड़ाई बिलकुल साधारण-सी बात थी। वह पीछे हटने लगा। उस क्रोध की ऊर्जा में उसकी मृत्यु हुई, उसे मरना पड़ा। और वह आदमी जीता, जो कि बिलकुल ही नासमझ था जो उस कला को जानता भी नहीं था।

क्रोध में या ऐसे किसी भी वेग में आपके भीतर बहुत शक्ति उत्पन्न होती है। आपके सारे कण, आपके शरीर में जितने लिविंग सेल्स हैं, जितने जीवित कोष्ठ हैं, वे सब-के-सब अपनी शक्ति का दान करते हैं। और आपके शरीर में बहुत-से संरक्षित कोष हैं शक्ति के, वे हमेशा खतरे के लिए सेफ्टि-मेजर्स हैं, सुरक्षा-कवच हैं। वे सामान्यतया काम में नहीं आते। अगर आपको हम कहें, दौड़िए प्रतियोगिता में—तो आप कितना ही तेज दौड़िये, आप उतना तेज कभी नहीं दौड़ सकते, जितना एक आदमी आपके पीछे बन्दूक लेकर लगा हो, तब आप दौड़ेंगे। उस वक्त जो सेफ्टि-मेजर्स हैं आपके भीतर, आप के शरीर में जो ग्रन्थियां शक्ति को रखे हुए हैं जरूरत के लिए, वे अपनी शक्ति को खून में छोड़ देती हैं उस वक्त आपका शरीर बड़ी शक्ति से आप्लावित हो जाता है। अगर उस शक्ति का उपयोग सृजनात्मक न हो, तो वह शक्ति आपको ही खण्डित करेगी और आपको ही तोड़ देगी।

इस दुनिया में अशक्त लोग पाप नहीं करते। शक्तिशाली लोग पाप करते हैं, मजबूरी में। उनकी शक्ति उनसे पाप करवाती है। इस दुनिया में अशक्त लोग बुरे काम नहीं करते, इस दुनिया में शक्तिशाली लोग बुरे काम करने को मजबूर हो जाते हैं। क्योंकि शक्ति का सृजनात्मक उपयोग उन्हें पता नहीं है। इसलिए जितने अपराधी हैं, जितने पापी हैं, उन्हें आप शक्ति का स्रोत समझिये और अगर उन्हें शुभ सम्पर्क मिल जाये, तो उनकी सारी शक्तियां अद्भुत रूप से रूपांतरित हो जाती हैं।

आपको पता होगा कि धार्मिक इतिहास में उसके सैकड़ों उदाहरण हैं, जब कि पापी क्षणभर में पुण्यात्मा हो गये हैं। उसका कुल कारण इतना है कि शक्तियां बहुत थीं, केवल ट्रांसफार्मेशन, रूपांतरण की बात थी। शुभ का सम्पर्क चाहिए और सब बदल जायेगा।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अंगुलिमाल ने बहुत हत्यायें कीं। उसने एक हजार लोगों की हत्या करने का व्रत लिया था। उसने नौ सौ निन्यानबे लोगों की हत्या करके उनकी अंगुलियों की माला पहन ली थी। उसे आखिरी आदमी चाहिए था। जिस जगह खबर हो जाती थी कि अंगुलिमाल है, वहां रास्ते निर्जन हो जाते थे। क्योंकि वहां कौन चलता! अंगुलिमाल देखता ही नहीं था, विचार ही नहीं करता था, जो आया उसकी हत्या कर देता था। खुद सम्राट प्रसेनजित, जो राजा था बिहार का, वह भी उससे डरता था। उसकी छाती कंप जाती थी — अंगुलिमाल का नाम सुनकर। उसने बहुत सैनिक वहां भेजे, लेकिन अंगुलिमाल पर कोई कब्जा नहीं हुआ।

बुद्ध उस पहाड़ से निकलते थे एक बार। गांव के लोगों ने कहा, 'उधर मत जाइए। आप एक निहत्थे भिक्षु हैं, अंगुलिमाल आपकी हत्या कर देगा।' बुद्ध ने कहा,'हम तो जो रास्ता चुनते हैं, उस पर चलते हैं। किसी की वजह से उसको नहीं बदलते। और अगर अंगुलिमाल यहां है तो हमारी और भी जरूरत हो गयी कि हम वहां जायें। अब देखना यह है कि अंगुलिमाल हमें मारता है कि हम अंगुलिमाल को मारते हैं।' लोगों ने कहा, 'बड़ी पागलपन की बात है। आपके पास कुछ भी नहीं है, आप अंगुलिमाल को मारियेगा! निहत्थे कमजोर बुद्ध और अंगुलिमाल दैत्य-जैसा आदमी। बुद्ध ने कहा, 'अब देखना यह है कि अंगुलिमाल बुद्ध को मारता है या बुद्ध अंगुलिमाल को मारता है। और हम तो जो रास्ता चुनते हैं, उस पर ही चलते हैं। और यह और भी अच्छा है कि अंगुलिमाल से मिलना हो जायेगा। अनायास यह मौका आ गया है।' बुद्ध वहां गये।

अंगुलिमाल ने अपनी टेकड़ी से देखा कि एक निहत्था भिक्षु—शान्त—रास्ते पर चला आ रहा है। उसने वहीं से चिल्लाकर कहा, 'देखो, यहां मत आओ। सिर्फ इसलिए कह रहा हूं कि तुम संन्यासी हो, वापस लौट जाओ। इतनी दया आ गयी तुम्हारी चाल देखकर, धीमे चले आ रहे हो। तुम लौट जाओ, आगे मत बढ़ो। क्योंकि हम किसी पर दया करने के आदी नहीं हैं; हत्या कर देंगे।' बुद्ध ने कहा, 'हम भी किसी की दया लेने के आदी नहीं हैं। और जहां चुनौती हो, वहां से संन्यासी पीछे कैसे लौटेगा? तो हम तो आते हैं, तुम भी आओ।'

अंगुलिमाल बहुत हैरान हुआ कि यह आदमी तो पागल लगता है। उसने अपना फरसा उठाया और नीचे उतरा। जब वह बुद्ध के पास पहुंचा तो बुद्ध से उसने कहा, 'अपने हाथ से अपनी मृत्यु मोल ले रहे हो?' बुद्ध ने कहा, 'इसके पहले कि तुम मुझे मारो, एक छोटा-सा काम करो। यह सामने वृक्ष है, इसके चार पत्ते तोड़ दो।' उसने अपने फरसे से मारा और डाल तोड़ दी और कहा, 'यह रहा, चार के बदले—चार हजार।' बुद्ध ने कहा, 'अब एक छोटा काम और करो। इसके पहले कि तुम मुझे मारो, इन पत्तियों को वापस इसी दरख्त में जोड़ दो।' अंगुलिमाल बोला, यह तो मुश्किल है।' तो बुद्ध ने कहा, 'तोड़ना तो बच्चा भी कर देता, जोड़ना जो कर सके उसमें ही पौरुष है, उसमें ही पुरुषार्थ

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। तुम बहुत कमजोर आदमी हो, तुम सिर्फ तोड़ सकते हो। तुम यह ख्याल छोड़ दो कि तुम बड़े शक्तिशाली हो। तुम एक पत्ता भी नहीं जोड़ सकते हो! उसने एक क्षण गौर से सोचा, फिर कहा, 'यह तो सही है। क्या पत्ता जोड़ने का भी कोई रास्ता हो सकता है?' बुद्ध ने कहा, 'है, हम उसी रास्ते पर चल रहे हैं। उसने गौर से देखा और उसके स्वाभिमान को पहली दफा यह पता चला कि मारने में कोई मतलब नहीं है। मारना कमजोर भी कर सकता है।' उसने कहा, 'मैं तो कमजोर नहीं हूं, मैं क्या करूं?' बुद्ध ने कहा, 'मेरे पीछे आओ।'

अंगुलिमाल उस दिन भिक्षु हो गया, वह गांव में भिक्षा मांगने गया। सब लोग डरके मारे अपने मकानों पर चढ़ गये और उसको पत्थरों से मारा। वह नीचे गिर पड़ा है—लहू-लुहान, उस पर पत्थर पड़ रहे हैं। बुद्ध उस किनारे से आये और उसे कहा, 'अंगुलिमाल—ब्राह्मण अंगुलिमाल! उठो! आज तुमने पुरुषार्थ को सिद्ध कर दिया। जब उनके पत्थर तुम्हारे ऊपर पड़ रहे थे, तो तुम्हारे हृदय में जरा भी क्रोध नहीं आया। और जब तुम्हारे शरीर से लहू गिरने लगा और तुम जमीन पर गिर गये, तब भी तुम्हारे हृदय में उनके प्रति प्रेम ही भरा हुआ था। तुमने अपने पुरुष को सिद्ध कर दिया। और तुम ब्राह्मण हो गये।'

प्रसेनजित को खबर मिली, तो मिलने आया बुद्ध से कि अंगुलिमाल परिवर्तित हुआ है। वह आकर बैठा। उसने कहा, हम सुनते हैं कि अंगुलिमाल साधु हो गये हैं। क्या मैं उनके दर्शन कर सकता हूं?' बुद्ध बोले, 'जो मेरे बगल में भिक्षु बैठे हुए हैं, वे अंगुलिमाल हैं।' प्रसेनजित ने सुना, उसके हाथ-पैर कंप गये। नाम तो पुराना था। और डर वही था, उस आदमी का। अंगुलिमाल ने कहा, 'मत डरो। वह आदमी गया, वह शक्ति जो साथ में थी, परिवर्तित हो गयी। अब हम दूसरे रास्ते पर हैं। अब तुम हमें मार डालो, तो हमारे मन में तुम्हारे प्रति कोई अशुभ आकांक्षा नहीं उठेगी।' जब बुद्ध से लोगों ने पूछा कि इतना पापी कैसे परिवर्तित हुआ, तो बुद्ध ने कहा, 'पाप और पुण्य का प्रश्न नहीं है, शक्ति के परिवर्तन का प्रश्न है।'

इस दुनिया में कोई बुरा नहीं है और इस दुनिया में कोई भला नहीं है। केवल शक्ति की दिशायें हैं। हमारे भीतर बहुत शक्ति है—इस शरीर में। इस शरीर की शक्तियों का सृजनात्मक उपयोग करना है।

एक तो मैंने कहा—जब भावावेश उठे, तो आप शरीर के किसी अंग से उस भावावेश का उपयोग कर लें। दूसरी बात, अपने जीवन में कुछ सृजनात्मक काम सीखें। हम सब गैर-सृजनात्मक हैं।

पुराने दिन थे, गांव में एक आदमी जूता बनाता था और कोई उसके जूते को पहनता था, तो वह गौरव से कहता था कि मेरा बनाया हुआ जूता है। सृजन का एक आनन्द था। एक आदमी गाड़ी का चाक बनाता था, तो गौरव से कहता था कि मेरा बनाया हुआ है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आज दुनिया में सृजन का कोई आनन्द नहीं रह गया है। आपका बनाया हुआ कुछ भी नहीं है। यह दुनिया जैसी है, उसमें आदमी का बनाया हुआ कुछ भी नहीं रह जायेगा। उसका परिणाम यह हुआ है कि जो सृजन का आनन्द था, वह विलीन हो गया है। और अगर वह विलीन हो जायेगा तो शक्तियों का क्या होगा? वह विनाश की तरफ उत्सुक होगी। स्वाभाविक है कि शक्ति का कुछ-न-कुछ होगा—या तो विनाश होगा या सृजन होगा।

तो जीवन मे कोई सृजनात्मक काम भी करें । सृजनात्मक— मतलब की सिर्फ आप अपने आनन्द के लिए निर्मित कर रहे हैं। एक मूर्ति बनायें तो कोई हर्ज नहीं। एक गीत लिखें, एक गीत गायें, एक सितार को बजायें तो कोई हर्ज नहीं उसे सिर्फ आनन्द के लिए करें, व्यवसाय के लिए नहीं। जीवन में एक काम चुनें, जो आपका आनन्द है — जो आपका व्यवसाय नहीं है । आपकी बहुत-सी शक्तियों का विनाशात्मक रूप परिवर्तित होगा और वे सृजन में लगेंगी ।

सामान्य जीवन को सृजनात्मक दृष्टि दें। कोई फिक्र नहीं, घर में एक बगिया लगायें। और उन फूलों को प्रेम करें और उनका आनन्द लें। कोई फिक्र नहीं, एक पत्थर को घिसकर एक छोटी-सी मूर्ति बनायें। हर आदमी जो समझदार है, आजीविका के अतिरिक्त कुछ समय सृजन के लिए देगा । और जो नहीं देगा, वह गलती में पड़ जायेगा । उसका जीवन खराब हो जायेगा । एक छोटा-सा गीत लिखें। या अस्पताल में जायें और कुछ मरीजों को दो-दो फूल दे आयें। या रास्ते पर कोई भिखमंगा मिल जाये, तो दो क्षण उसे गले लगा लें। कुछ सृजनात्मक करें, जो सिर्फ आनन्द है आपका और जिसमें आपको कुछ लेना नहीं है और कुछ देना नहीं है । जिसे कर लेना ही आपका आनन्द है।

तो जीवन में कुछ बिन्दु चुनें, जिसे सिर्फ कर लेना आपका आनन्द है। आपकी सारी शक्तियां उस तरफ उन्मुख होंगी और विनाश के लिए आपके पास शक्तियां नहीं बचेंगी। जो आदमी जितना सृजनात्मक होगा उतना ही उसका सेक्स विलीन हो जायेगा। वे सब असृजनात्मक आदमी के लक्षण हैं । आपके पास बहुत शक्तियां हैं, वे कहां जायेंगी ? वे क्रोध से निकलेंगी, कामवासना से निकलेंगी। निकलना जरूरी है ।

दुनिया में बहुत बड़े-बड़े सृजनात्मक मूर्तिकार, चित्रकार या कवि हुए हैं । उनके अविवाहित रह जाने का और कोई रहस्य नहीं, कुल इतना ही रहस्य है कि सारी शक्ति उनकी सृजन में विलीन हो गयी। वह ट्रान्सफार्म हो गयी, सब्लिमेट हो गयी। अगर वह वहां सब्लिमेट न होती, तो बहुत निम्न तल के सृजन में व्यय होती, सन्तति के सृजन में। वह बच्चे पैदा करने में व्यय होती । वही शक्ति किन्हीं अमर काव्यों के, अमर चित्रों के निर्माण में व्यय हो गयी ।

तो जीवन में शक्ति का सब्लिमेशन, उसका उदात्तीकरण बहुत जरूरी है । तो एक यह स्मरण रखें कि शरीर की सम्पूर्ण शुद्धि के लिए, जीवन में सृजनात्मक होने की चेष्टा करें।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सृजनात्मक मनुष्य ही केवल धार्मिक हो सकता है, और कोई मनुष्य धार्मिक नहीं हो सकता।

शरीर-शुद्धि के लिए ये बुनियादी बातें मैंने आपसे कहीं। ये बहुत बुनियादी बातें हैं, इनको जो सम्हालता है — तो अनेक गौण बातें अपने-आप सध जायेंगी ।

बहुत-सी गौण बातों में एक है, आहार । वह शरीर-शुद्धि में उपयोगी है । आपका शरीर तो बिल्कुल भौतिक संस्थान है । उसमें आप जो डालते हैं, उसके परिणाम होने स्वाभाविक हैं। अगर मैं शराब पी लूंगा तो मेरे शरीर के सेल बेहोश हो जायेंगे, यह बिल्कुल स्वाभाविक है। और अगर शरीर मेरा बेहोश है, तो बेहोशी का परिणाम मेरे मन पर पड़ेगा । मन और शरीर बहुत अलग-अलग नहीं हैं, बहुत संयुक्त हैं।

हमारा जो व्यक्तित्व है, वह 'शरीर और मन' — ऐसा अलग-अलग नहीं है। 'शरीरमन' — ऐसा इकट्ठा है। वह साइकोसोमैटिक है। उसमें हमारा शरीर और मन इकट्ठा है। शरीर का ही अत्यन्त सूक्ष्म हिस्सा मन है और मन का ही अत्यन्त स्थूल हिस्सा शरीर है। इसे यों समझिये कि दोनों बिल्कुल अलग-अलग चीजें नहीं हैं। इसलिए जो शरीर में घटित होगा, उसके परिणाम मन में प्रतिध्वनित होते हैं और जो मन में घटित होता है, उसके परिणाम शरीर तक आ जाते हैं। अगर मन बीमार है, तो शरीर ज्यादा देर स्वस्थ नहीं रहेगा। अगर शरीर बीमार है, तो मन ज्यादा देर तक स्वस्थ नहीं रह सकता। ये खबरें एक-दूसरे में समझी और सुनी जाती हैं। इसलिए जो लोग मन को स्वस्थ रखने का उपाय समझ लेते हैं, वे शरीर के बाबत मुफ्त में बहुत स्वास्थ्य उपलब्ध कर लेते हैं।

शरीर और मन संयुक्त घटना है। शरीर पर जो होगा, वह मन पर होगा। इसलिए आपको अपने आहार में, भोजन में थोड़ा विवेकपूर्ण होना जरूरी है।

पहली बात, भोजन इतना ज्यादा न हो कि शरीर उसके कारण आलस्य से भरता हो। आलस्य अशुद्धि है। भोजन ऐसा न हो कि शरीर उत्तेजना से भरता हो। उत्तेजना अशुद्धि है। क्योंकि उत्तेजना ग्रंथियां पैदा करेगी। वह ऐसा न हो कि शरीर क्षीण होता हो, क्योंकि क्षीणता कमजोरी है। और शक्ति अगर उत्पन्न न होगी, तो परमात्मा की तरफ विकास नहीं हो सकता। शक्ति पैदा हो, लेकिन शक्ति उत्तेजक न हो, ऐसा आहार होना चाहिए। शक्ति पैदा हो, लेकिन वह इतनी न हो कि शरीर उसके कारण आलस्य से भर जाये।

अगर आपने जरूरत से ज्यादा भोजन किया है, तो सारे शरीर की शक्ति उसको पचाने में लग जाती है, और शरीर में आलस्य छा जाता है। शरीर में आलस्य छाने का और कोई मतलब नहीं है। सारी शक्ति पचाने में लगती है, क्योंकि शरीर पचाने में लग जाता है। आलस्य इस बात की सूचना है कि भोजन जरूरत से ज्यादा हो गया। भोजन के बाद आलस्य नहीं, स्फूर्ति आनी चाहिए। स्वाभाविक है—भूख लगी थी, फिर भोजन किया, फिर स्फूर्ति आनी चाहिए, क्योंकि शक्ति उत्पन्न होने का स्रोत भीतर गया। लेकिन आपको तो आलस्य आता है। आलस्य इस बात का संकेत है कि आपने इतना भोजन कर लिया

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कि अब शरीर की सारी शक्ति उसको पचायेगी। शरीर अपनी सारी शक्ति को खींचकर पेट में ले जायेगा। और सब तरफ से शक्ति क्षीण होने से आलस्य बन जायेगा। तो भोजन स्फूर्ति दे, तब सम्यक् है। भोजन उत्तेजना न दे, तब सम्यक् है। भोजन मादकता न दे, तब सम्यक् है। तीन बातें स्मरण रखें—भोजन सुस्ती न दे, तो वह शुद्ध है; भोजन उत्तेजना दे, तो वह शुद्ध है; और भोजन मादकता न दे, तो वह शुद्ध है।

ये मोटी बातें हैं और आपको इतना नासमझ मैं नहीं मानता कि विस्तार में चर्चा करने की जरूरत है। इनको आप समझेंगे और अपने ढंग से इनको व्यवस्थित करेंगे।

दूसरी बात, गौण बातों में—शरीर के लिए थोड़ा-सा व्यायाम अत्यन्त आवश्यक है। क्योंकि शरीर जिन तत्वों से मिलकर बना है। वे तत्व व्यायाम के समय में विस्तार पाते हैं। व्यायाम का मतलब है—विस्तार। संकोच के विपरीत है व्यायाम शब्द । व्यायाम का अर्थ है — विस्तार। जब आप दौड़ते हैं, तब आपके जीवित कोष विस्तृत होते हैं, फैलते हैं। और जब वे फैलते हैं, तो आपको स्वास्थ्य का अनुभव होता है; जब वे सिकुड़ते हैं, तो बीमारी का अनुभव होता है। जब आप गहरी श्वास लेते हैं, तो वह फेफड़ों के समस्त छिद्रों को खोलती है और सारी कार्बन डाय आक्साइड को बाहर फेंकती है, जिससे आपके खून की गति बढ़ती है। और खून की गति बढ़ती है तो शरीर की सारी अशुद्धियां दूर होती हैं। इसलिए योग ने शरीर-शौच को, शरीर की परिपूर्ण शुद्धि को बहुत अनिवार्य नियमों के अन्तर्गत रखा। तो थोड़ा व्यायाम।

अति विश्राम नुकसान करता है। अति व्यायाम भी नुकसान करता है। इसलिए अति व्यायाम को नहीं कह रहा हूं। अति व्यायाम नहीं, थोड़ा सम्यक् व्यायाम, कि जिससे आपको स्वास्थ्य का बोध हो। और अति विश्राम नहीं, थोड़ा विश्राम। जितना व्यायाम, उतना विश्राम।

इस सदी में व्यायाम भी नहीं है और विश्राम भी नहीं है। हम बहुत अजीब हालत में हैं। आप व्यायाम तो करते नहीं, आप विश्राम भी नहीं करते। जिसको आप विश्राम कहते हैं, वह विश्राम नहीं है। आप पड़े हैं, करवटें बदल रहे हैं— वह विश्राम नहीं है। एक गहरी प्रगाढ़ निद्रा चाहिए, जिसमें कि सारा शरीर सो जाये और उसके काम का जो भी बोझ और भार उस पर पड़ा है, वह सब उससे विलीन हो जाये। क्या आपने कभी ख्याल किया है कि आप सुबह बहुत अस्वस्थ उठे हैं और तबियत ताजा नहीं है, तो आपका व्यवहार स्वस्थ नहीं होता। अगर आपकी नींद अच्छी नहीं हुई और सुबह एक भिखारी आपसे भीख मांगने आया है, तो बहुत असम्भव है कि आप उसे भीख दे सकें। और अगर आप रात बहुत गहरी नींद सोये हैं और किसी ने भिक्षा के लिए हाथ बढ़ाया है, तो बहुत असम्भव है कि आप अपने हाथ को देने से रोक सकें। इसलिए भिखारी सुबह आपके घर मांगने आते हैं, शाम को नहीं आते। क्योंकि सुबह सम्भावना मिलने की है, शाम को कोई सम्भावना नहीं है। यह बहुत मनोवैज्ञानिक है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भिखारी यों ही सुबह आपके घर नहीं आते। शाम को नहीं आता है, शाम को कोई मतलब नहीं है। शाम को आप थके होंगे और शरीर इतना गलत हालत में होगा कि आप शायद ही किसी को कुछ दे सकें। इसलिए वह सुबह आता है। अभी सूरज उग रहा है, आप नहाये होंगे, किसी ने घर में प्रार्थना की होगी। वह बाहर आकर बैठा है। अभी इनकार करना बहुत मुश्किल होगा।

शरीर को ठीक विश्राम मिले, तो आपका व्यवहार बदलता है। इसलिए हमने आहार और विहार को संयुक्त माना है हमेशा से। जैसा आहार होगा वैसा विहार होगा। अगर उन दोनों में सात्विकता होगी, तो जीवन में बड़ी गति और बड़ा आन्तरिक प्रवेश होना शुरू हो जाता है।

स्वास्थ्य की एक भूमिका बहुत जरूरी है। उसके लिए सम्यक् आहार, सम्यक् व्यायाम और सम्यक् विश्राम, इनको आप बुनियादी हिस्से मानें। विश्राम भी करने के लिए कुछ समझ चाहिए। जैसे व्यायाम करने के लिए कुछ समझ चाहिए, वैसे ही विश्राम करने के लिए भी समझ चाहिए—शरीर को छोड़ने की समझ चाहिए।

शरीर ऐसे शुद्ध होगा। और शरीर शुद्ध होगा, तो शरीर की शुद्धि भी अपने आप में एक अद्‌भुत आनन्द है। और उस आनन्द में फिर अन्तर-प्रवेश सरल होता है। यह पहला चरण हुआ।

दूसरे दो चरण हैं भूमिका के—विचार-शुद्धि और भाव-शुद्धि। उनकी मैं अलग से बात करूंगा।

तीन चरण होंगे साधना की परिधि के—शरीर-शुद्धि, विचार-शुंद्धि, भाव-शुद्धि और तीन चरण होंगे केन्द्र के—शरीर-शून्यता, विचार-शून्यता और भाव-शून्यता। ये छह चरण जब पूरे होते हैं, तो समाधि घटित होती है। उनकी हम क्रमशः बात करेंगे। लेकिन केवल बातें सुनना काफी नहीं होगा, इस पर आप विचार करेंगे, इसे समझेंगे और इसका प्रयोग करेंगे।

मैं जो कुछ कह रहा हूं, वह सब प्रयोग करने की बात है। प्रयोग करेंगे तो ही उसका अर्थ खुलेगा। अन्यथा मेरी बातचीत से तो कोई अर्थ नहीं खुलता।

४. आपके प्रश्न—भगवान श्री रजनीश के उत्तर

(गीता, अध्याय-१२, 'भक्ति-योग' पर भगवान श्री रजनीश द्वारा दिनांक १६ एवं २३ मार्च, १९७३ को बम्बई में दिये गये दो प्रवचनों का मुख्य अंश)

एक मित्र ने पूछा है—

'क्या बन्दरों की तरह उछल-कूद से ध्यान उपलब्ध हो सकेगा?'

क्योंकि आप बन्दर हैं, इसलिए बिना उछल-कूद के आपके भीतर के बन्दर से छुटकारा नहीं। यह ध्यान के कारण उछल-कूद की जरूरत नहीं है; आपके बन्दरपन के कारण है। जो आपके भीतर छिपा है, उसे जन्मों-जन्मों तक दबाये रहें, तो भी उससे छुटकारा नहीं है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उसे झाड़ ही देना होगा, उसे बाहर फेंक ही देना होगा। कचरे को दबा लेने से कोई मुक्ति नहीं होती, उसे झाड़-बुहार कर बाहर कर देना जरूरी है।

बन्दर को शान्त करने के दो रास्ते हैं — एक रास्ता है कि जोर-जबरदस्ती से उसे बिठा दो—डण्डे के डर से, कि हिलना मत, डुलना मत, नाचना मत, कूदना मत। ऊपर से बन्दर अपने को सम्हाल लेगा, लेकिन भीतर के बन्दर का क्या होगा? ऊपर से बन्दर अपने को रोक लेग़ा, लेकिन भीतर और शक्ति इकट्ठी हो जायेगी। और अगर इस तरह बन्दर को दबाया, तो बन्दर पागल हो जायेगा। बहुत लोग इसी तरह पागल हुए हैं। पागलखाने उनसे भरे पड़े हैं, क्योंकि भीतर जो शक्ति थी, उन्होंने जबर्दस्ती दबा ली, वह शक्ति विस्फोटक हो गयी।

एक रास्ता यह है कि बन्दर को नचाओ, कुदाओ, दौड़ाओ। बन्दर थक जायेगा और शान्त होकर बैठ जायेगा। वह शान्ति अलग होगी; ऊपर से दबाकर आ गयी शान्ति अलग होगी।

आज मनोविज्ञान इस बात को बड़ी गहराई से स्वीकार करता है कि आदमी के भीतर जो भी मनोवेग हैं, उनका रिप्रेशन, उनका दमन खतरनाक है, उनकी अभिव्यक्ति योग्य है। लेकिन अभिव्यक्ति का मतलब किसी पर क्रोध करना नहीं है, किसी पर हिंसा नहीं है। अभिव्यक्ति का अर्थ है—बिना किसी के सन्दर्भ में मनोवेग को आकाश में समर्पित कर देना। और जब मनोवेग समर्पित हो जाता है और भीतर की दबी हुई शक्ति छूट जाती है, मुक्त हो जाती है, तो एक शान्ति भीतर फलित होती है। उस शान्ति में ध्यान की तरफ जाना आसान है।

यह उछल-कूद ध्यान नहीं है। लेकिन उछल-कूद से आपके भीतर की उछल-कूद थोड़ी देर को फिंक जाती है, बाहर हट जाती है। उस मौन के क्षण में जब बन्दर थक गया है, भीतर उतरना आसान है।

जो लोग आधुनिक मनोविज्ञान से परिचित हैं, वे इस बात को बहुत ठीक-से समझ सकेंगे। पश्चिम में अभी एक नयी थैरेपी, एक नयी मनोचिकित्सा का ढंग विकसित हुआ है। उस थैरेपी का नाम है—'स्क्रीम थैरेपी'। और पश्चिम के बड़े-से-बड़े मनोवैज्ञानिक उसके परिणामों से आश्चर्यचकित रह गये हैं। इस थैरेपी, इस चिकित्सा की मूल खोज यह है कि बचपन से ही प्रत्येक व्यक्ति अपने रोने के भाव को दबा रहा है। रोने का उसे मौका नहीं मिला है। पैदा होने के बाद पहला काम बच्चा करता है— रोने का। आपको पता है, अगर आप उसको दबा दें तो बच्चा मर ही जायेगा।

पहला काम बच्चा करता है रोने का, क्योंकि रोने की प्रक्रिया में ही उसकी श्वास चलनी शुरू होती है। अगर हम उसे वहीं रोक दें कि रो मत, तो वह मरा हुआ ही रहेगा, वह जिन्दा ही नहीं हो पायेगा। इसलिए बच्चा पैदा हो और अगर न रोये, तो मां-बाप चिन्तित हो जायेंगे, डाक्टर परेशान हो जायेगा। रुलाने की कोशिश की जायेगी कि वह रो ले क्योंकि

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रोने से उसकी जीवन-प्रक्रिया शुरू होगी। लेकिन बच्चे को तो हम रोकते भी नहीं।

लेकिन जैसे-जैसे बच्चा बढ़ने लगता है; हम उसके रोने की प्रक्रिया को रोकने लगते हैं। हमें इस बात का पता नहीं कि इस जगत में ऐसी कोई भी चीज नहीं है जिसका जीवन में कोई उपयोग न हो, अगर उपयोग न होता, तो वह होती ही नहीं।

मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि बच्चे के रोने की जो कला है वह उसके तनाव से मुक्त होने की व्यवस्था है। और बच्चे पर बहुत तनाव हैं। बच्चे को भूख लगी है और मां दूर है या मां काम में उलझी है। बच्चे को भी क्रोध आता है और, अगर बच्चा रो ले, तो उसका क्रोध बह जाता है और बच्चा हल्का हो जाता है। लेकिन मां उसे रोने नहीं देती।

मनसविद कहते हैं कि उसे रोने देना; उसे प्रेम देना लेकिन उसके रोने को रोकने की कोशिश मत करना, हम क्या करेंगे, बच्चे को खिलौना पकड़ा देंगे कि मत रो बच्चे का मन डाइवर्ट (अन्यत्र) हो जायेगा। वह खिलौने पकड़ लेगा। लेकिन रोने की जो प्रक्रिया भीतर चल रही थी वह रुक गयी और जो आंसू बहने चाहिए थे, वे अटक गये और जो हृदय हल्का हो जाता बोझ से वह हल्का नहीं हो पायेगा। वह खिलौने से खेल लेगा, लेकिन वह जो रोना रुक गया, उसका क्या होगा? यह विष इकट्ठा हो रहा है।

मनसविद कहते हैं कि बच्चा इस तरह बहुत विष इकट्ठा कर लेता है, वही उसकी जिन्दगी में दुख का कारण है और वह उदास रहेगा। आप इतने उदास दिख रहे हैं, आपको पता नहीं कि यह उदासी, हो सकता था, न होती; अगर आप हृदयपूर्वक जीवन में रोये होते तो ये आंसू आपकी पूरी जिन्दगी पर न छाते; ये निकल गये होते। और सब तरह का रोना थेराप्यूटिक (स्वास्थ्यप्रद) है। हृदय हल्का हो जाता है। रोने में सिर्फ आंसू ही नहीं बहते। भीतर का शोक और अंदर का क्रोध, भीतर का हर्ष, भीतर के मनोवेग भी आंसुओं के सहारे बाहर निकल जाते हैं। और भीतर कुछ इकट्ठा नहीं होता।

तो स्क्रीम थैरेपी के लोग कहते हैं जब भी कोई आदमी मानसिक रूप से बीमार हो, तो उसे इतने गहरे में रोने की आवश्यकता है कि उसका रोआं-रोआं, उसके हृदय का कण-कण, श्वास-श्वास, धड़कन-धड़कन रोने में सम्मिलित हो, एक ऐसे चीत्कार की जरूरत है, जो उसके पूरे प्राणों से निकले—जिसमें वह चीत्कार ही बन जाये।

हजारों मानसिक रोगी ठीक हुए हैं—चीत्कार से; और वह चीत्कार भी उनके न-मालूम कितने रोगों से उन्हें मुक्त कर जाती है। लेकिन उस चीत्कार को पैदा करवाना बड़ी कठिन बात है। क्योंकि आप इतना दबाये हैं कि आप अगर रोते भी हो तो रोना भी आपका झूठ होता है। उसमें आपके पूरे प्राण सम्मिलित नहीं होते। आपका रोना भी बनावटी हो गया है। ऊपर-ऊपर रो लेते हैं। आंख से ही आंसू बह जाते हृदय से नहीं आते। लेकिन चीत्कार ऐसी चाहिए, जो आपकी नाभि से उठे और आपका पूरा शरीर उसमें समाविष्ट हो जाये। आप भूल भी जायें कि आप चीत्कार से अलग हैं, आप एक चीत्कार ही हो जायें।

तो कोई तीन महीने लगते हैं मनोवैज्ञानिकों को, आपको रोना सिखाने के लिए। तीन

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महीने निरन्तर प्रयोग करके उसको गहरा किया जाता है।

करते क्या हैं 'स्क्रीम थैरेपी' वाले लोग? आपको छाती के बल लिटा देते हैं जमीन पर। और आप से कहते हैं कि जमीन पर लेटे रहें जो भी दुख मन में आता हो, उसे निकालें। रोने का मन हो रोयें, चिल्लाने का मन हो चिल्लायें। तीन महीने तक ऐसा बच्चे की भांति आदमी लेटा रहता है जमीन पर — रोज घन्टे, दो घन्टे। एक दिन किसी दिन वह घड़ी आ जाती है कि उसके हाथ-पैर कांपने लगते हैं—विद्युत के प्रवाह से। वह आदमी आंख बन्द कर लेता है, वह आदमी जैसे होश में नहीं रह जाता और एक भयंकर चीत्कार उठनी शुरू होती है। कभी-कभी घन्टों चीत्कार चलती है। आदमी बिल्कुल पागल मालूम पड़ता है, लेकिन उस चीत्कार के बाद उसकी जो-जो मानसिक तकलीफें थीं, वे सब तिरोहित हो जाती हैं।

यह जो सक्रिय-ध्यान का प्रयोग मैं करवाता हूं, जब तक आपके, सब मनोवेग—रोने के, हंसने के, नाचने के, चिल्लाने के, चीखने के, पागल होने के, इनका निरसन न हो जाये तब तक आप ध्यान में जा नहीं सकते। यही तो बाधा है।

आप शान्त होने की कोशिश कर रहे हैं और आप के भीतर वेग भरे हुए हैं, जो बाहर निकलना चाहते हैं। आपकी हालत ऐसी है, जैसे केतली चढ़ी है चाय की, ढक्कन बन्द है। ढक्कन पर पत्थर रखे हैं, केतली का मुंह भी बन्द किया हुआ है और नीचे से आग भी जल रही है। वह जो भाप इकट्ठी हो रही है, वह फोड़ देगी केतली को। विस्फोट होगा। दस-पांच लोगों की हत्या भी हो सकती है। इस भाप को निकल जाने दें। इस भाप के निकलते ही आप नये हो जायेंगे और तब ध्यान की तरफ प्रयोग शुरू हो सकता है।

उन मित्र ने भी पूछा है कि बुद्ध ने, महावीर और लाओत्से ने भी क्या ऐसी ही बात सिखायी है?

नहीं, लाओत्से और बुद्ध और महावीर ने ऐसी बात नहीं सिखायी, क्योंकि वे आपको नहीं सिखा रहे थे, वे दूसरी तरह के लोगों को सिखा रहे थे। आप मौजूद होते तो उनको भी यही सिखाना पड़ता। बुद्ध और महावीर जिन लोगों से बात कर रहे थे, वे ग्रामीण लोग थे—सीधे, शान्त, सरल, निर्दोष, स्वाभाविक। उन्होंने कुछ दमन नहीं किया हुआ था। उन्होंने कुछ रोका नहीं था। जितना आदमी सभ्य होता है, उतना आदमी दमित होता है। सभ्यता दमन का एक प्रयोग है।

फ्रायड ने तो यह स्वीकार किया है कि सभ्यता हो ही नहीं सकती, अगर दमन न हो। इसलिए आप देखें—एक मजे की घटना। आदिवासी सरल हैं, लेकिन वे सभ्य नहीं हो सकते। दुनिया में छोटे-छोटे कबीले हैं जंगली लोगों के। बड़े अच्छे लोग हैं, प्यारे लोग हैं, सरल हैं, आनन्दित हैं, लेकिन सभ्य नहीं हो पाते। आप समझते हैं, क्या कारण है? आखिर जितनी भी अच्छी कौमें हैं, अच्छी जातियां हैं, जंगलों में छिपी हुई, जो निर्दोष हैं, वे सभ्य क्यों नहीं हो पातीं? न्यूयार्क और बम्बई-जैसे नगर वे क्यों नहीं बसा पातीं? आकाश

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

में हवाई जहाज क्यों नहीं उड़ा पातीं? चांद पर क्यों नहीं पहुंच पातीं? एटम और हाइड्रोजन बम क्यों नहीं खोज पातीं? रेडियो और टेलीविजन क्यों नहीं बना पातीं? ये अच्छे लोग, शांत लोग नाचते तो हैं, लेकिन चांद पर नहीं पहुंच पाते। गीत तो गाते हैं, लेकिन एटम बम नहीं बना पाते। खाने को भी मुश्किल से जुटा पाते हैं। कपड़ा भी न ही के बराबर — अर्धनग्न। आधे भूखे, लेकिन हैं निर्दोष। चोरी नहीं करते, झूठ नहीं बोलते, वचन दें तो प्राण भी चले जायें तो भी पूरा करते हैं, लेकिन ये लोग सभ्य क्यों नहीं हो पाते, समृद्ध क्यों नहीं हो पाते?

तो फ्रायड का कहना है, और ठीक कहना है, कि ये लोग इतने आनन्दित हैं और इतने सरल हैं कि उनके भीतर भाप इकट्ठी नहीं हो पाती, जिससे सभ्यता का इंजन चलता है। इनका क्रोध इकट्ठा नहीं हो पाता, घृणा इकट्ठी नहीं हो पाती, काम-वासना इकट्ठी नहीं हो पाती, वही इकट्ठी हो जाये तो उसी स्टीम, उसी भाप को फिर दूसरी तरफ मोड़ा जा सकता है। तो फिर उससे ही मकान जमीन से उठना शुरू होता है, आकाश तक पहुंचता जाता है। वह आपके दमित वेगों की भाप है। नहीं तो झोपड़े से आप आकाश छूने वाले मकान तक नहीं जा सकते।

यह सारी-की-सारी सभ्यता डाइवर्शन (मार्ग-परिवर्तन) है — आपकी शक्तियों का। इसलिए परिणाम साफ है कि कोई आदमी सरल हो, शांत हो, स्वाभाविक हो, तो सभ्यता का यह जाल खड़ा नहीं हो सकता और सभ्यता का जाल खड़ा करना हो, तो आपके भीतर जितना उपद्रव है, उसके निकलने के सब द्वार बन्द करना जरूरी हैं, सब द्वार बन्द करके उसे एक ही द्वार से निकलने देना जरूरी है। इसलिए हमारी शिक्षा की सारी प्रक्रिया आपकी समस्त तरह की वासनाओं को इकट्ठा करके महत्त्वाकांक्षा में लगाने की प्रक्रिया है, सारी वासनाओं को इकट्ठा करके अहंकार की पूर्ति की दिशा में दौड़ाने की प्रक्रिया है।

इसलिए फ्रायड ने यह भी कहा है कि अगर हम आदमी को सरल बनाने में सफल हो जायें, तो वह पुनः असभ्य हो जायेगा। अब यह बड़ी कठिनाई है। अगर सभ्यता चाहिए तो आदमी जटिल होगा, रुग्ण होगा, विक्षिप्त होगा। अगर शांति चाहिए, आनन्द चाहिए, स्वाभाविकता चाहिए, तो सभ्यता खो जायेगी — आदमी गरीब होगा, प्रसन्न होगा — समृद्ध नहीं हो सकता।

तो फ्रायड ने तो यह कहा है कि आदमी एक असम्भव बीमारी है। या तो यह गरीब होगा, सभ्यता के सुख इसे नहीं मिल सकेंगे; सभ्यता की समृद्धि इसे नहीं मिल सकेगी। और अगर यह समृद्ध होगा तो यह पागल हो जायेगा, विक्षिप्त हो जायेगा, शांत नहीं रह जायेगा।

बुद्ध और महावीर जिनको समझा रहे थे, वे बड़े सरल लोग थे। उनका कुछ दबा हुआ नहीं था, इसलिए उन्हें ध्यान में सीधे ले जाया जा सकता था। आप सीधे ध्यान में नहीं ले जाये जा सकते। आप बहुत जटिल हैं। आप उलझन हैं एक। पहले तो आपकी उलझन

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

को सुलझाना पड़ेगा और आपकी जटिलता कम करनी पड़ेगी और आपके रोगों से थोड़ा छुटकारा करना पड़ेगा। टेम्परेरी ही सही। चाहे अस्थायी ही हो, लेकिन थोड़ी देर के लिए आपकी भाप को अलग कर देना जरूरी है — जो आपको उलझाये हुए है — तो आप ध्यान की तरफ मुड़ सकते हैं, अन्यथा आप नहीं मुड़ सकते।

इसलिए दुनिया की सारी पुरानी पद्धतियां ध्यान की, आपके कारण व्यर्थ हो गयी हैं। आज उनसे कोई काम नहीं हो रहा। आपमें सौ में से कभी एकाध आदमी मुश्किल से होता है, जिसको पुरानी पद्धति पुराने ही ढंग में काम कर पाये। निन्यानबे आदमियों के लिए कोई पुरानी पद्धति काम नहीं कर पाती। उसका कारण यह नहीं कि पुरानी पद्धतियां गलत हैं। उसका कुल कारण इतना है कि आदमी नया है और पद्धतियां जिन आदमियों के लिए विकसित की गयी थीं, वे पृथ्वी से खो गये। आदमी दूसरा है। यह जो इलाज है, यह आपके लिए विकसित नहीं हुआ था। आपने इस बीच नयी बीमारियां इकट्ठी कर ली हैं।

तीन हजार, चार हजार, पांच हजार साल पहले ध्यान के जो प्रयोग विकसित हुए थे, वे उस आदमी के लिए थे, जो मौजूद था। वह आदमी अब नहीं है। उस आदमी का जमीन पर कहीं कोई निशान नहीं रह गया है। अगर कहीं दूर जंगलों में थोड़े-से लोग मिल जाते हैं, तो हम उनको जल्दी से शिक्षित करके सभ्य बनाने की पूरी कोशिश में लगे हैं और हम सोचते हैं, हम बड़ी कृपा कर रहे हैं, उनकी सेवा करके।

अभी एक महिला मेरे पास आयी। अपना जीवन लगा दिया है—आदिवासियों को शिक्षित करने में। वह मेरे पास आयी थी कि कुछ रास्ते बताइए कि हम आदिवासियों को कैसे सभ्य बनायें। मैंने उससे पूछा कि पहले तू मुझे यह बता कि जो सभ्य हो गये हैं—ज्यादा-से-ज्यादा आदिवासी भी सभ्य होकर यही हो पायेंगे, और क्या होगा। तो तुझे क्या परेशानी हो रही है! और ये जो सभ्य लोग दिखाई पड़ रहे हैं, क्या इनसे तुझे तृप्ति है कि थोड़े आदिवासियों को इन्हीं जैसा बना देने से कोई दुनिया का गौरव और कोई सुख शांति बढ़ जायेगी?

तो वह बहुत घबरा गयी। उसने कहा, 'मैंने अपने जीवन के तीस साल इसी में लगा दिये, लेकिन मुझे कभी किसी ने यह कहा नहीं। यह मैं सोचती हूं तो घबराहट होती है कि शिक्षित होकर ज्यादा-से-ज्यादा यही होगा।' जो शिक्षित हो गये हैं, उनको क्या लाभ है?

मगर उस महिला की भी अपनी मजबूरी है। अपनी कामवासना को दबा लिया है, विवाह नहीं किया है, किसी से कभी प्रेम नहीं किया, ब्रह्मचर्य को मानने वाली है। क्रोध नहीं करती है, अक्रोध का व्रत लिया है। झूठ नहीं बोलती है, सच बोलने की कसम खायी है। इस तरह सब भांति अपने को रोक रखा है। अब वह जो भाप इकट्ठी हो गयी है, उसका क्या करना? वह जो जीवन-ऊर्जा इकट्ठी हो गयी है, उसका क्या करना? तो वह पागल की तरह आदिवासियों की सेवा में लगी है, बिना इसकी फिक्र किये कि सेवा का क्या परिणाम होगा! तुम्हारी भाप तो निकली जा रही है, लेकिन जिन पर निकल रही है,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उसका परिणाम क्या है? क्या फायदा होगा?

आदमी जैसा आज है, ऐसा आदमी जमीन पर कभी भी नहीं था। यह बड़ी नयी घटना है। और इस नयी घटना को सोचकर ध्यान की सारी पद्धतियों में रेचन, कैथार्सिस का प्रयोग जोड़ना अनिवार्य हो गया है। इसके पहले कि आप ध्यान में उतरें, आपका रेचन हो जाना जरूरी है। आपकी धूल हट जानी जरूरी है।

लेकिन वे प्रश्नकर्ता मित्र समझदार हैं। और उन्होंने लिखा है कि 'आप हमें धोखा न दे सकोगे। इस उछल-कूद से कोई भी लाभ होने वाला नहीं।'

एक बात तो पक्की है कि उन्होंने उछल-कूद नहीं की और वही उछल-कूद जो बच गयी उनके इस प्रश्न में निकली है। वे कर लेते तो हल्के हो जाते। और बन्दर उनके पास संचित है और गहरा है। चैन नहीं पड़ी उनको रात जाकर। वे बेचैन रहे होंगे रातभर; शायद सोये भी न हों, क्योंकि बड़े क्रोध से प्रश्न लिखा है। प्रश्न कम है, गाली-गलौज ज्यादा है। इससे तो बेहतर था कि यहां निकाल ली होती, तो रात हल्के हो के सो गये होते और प्रश्न में गाली-गलौज न होता।

और मैं आपको धोखा दे रहा हूं! क्या प्रयोजन हो सकता है? और आपके नाचने से मुझे क्या लाभ होगा? और आप बन्दर की तरह उछल-कूद कर लेंगे, तो किसका हित सधनेवाला है?

लिखा है कि 'आप हमें धोखा न दे पायेंगे।' पर तुम्हें धोखा देने की जरूरत भी क्या है? प्रयोजन भी क्या है? पर वे यह कह रहे हैं कि हम धोखे में न आयेंगे। वे असल में यह कह रहे हैं कि हम धोखे में न आएंगे, हम ऐसे ही रहेंगे। हम किसी को बदलने का कोई मौका न देंगे।

मौका मत दें। आपकी मर्जी है। आप अपने से प्रसन्न हों, तो यहां मुझे सुनने आने की भी क्या जरूरत है? आप जैसे हैं भले हैं। आपको यहां परेशान होने की भी क्या जरूरत है! आपको ध्यान में आने की भी क्या जरूरत है! लेकिन अगर आने की कोई जरूरत है, अगर चिकित्सक के पास आप जाते हैं, तो बीमार हैं, इस बात की खबर देते हैं। मैं एक चिकित्सक हूं, इससे ज्यादा नहीं।

अगर आप मेरे पास आते हैं, तो आप बीमार होने की खबर देते हैं और आपकी बीमारी को अगर अलग करने के लिए मैं कोई दवा बताऊं तो आप कहते हैं—'आप हमें धोखा न दे पाओगे।' तो आने की कोई जरूरत नहीं है। आप अपने घर मजे में हैं। किसी दिन मुझे जरूरत होगी, तो मैं आपके घर आ जाऊंगा, लेकिन आप मत आयें। आप अपने को बचायें। आप जितना अपने को बचायेंगे, उतना ही लाभ होगा। क्योंकि उतने ही आप परेशान होंगे, पीड़ित होंगे, पागल होंगे। और जिस दिन बात सीमा के बाहर चली जाये, उस दिन कहीं बिजली के शॉक आपको लगाने पड़ेंगे। मैं कहता हूं—अभी कूद लें, ताकि बिजली के शॉक न लगाने पड़ें; और अभी कूद लें, ताकि आपको पागलखाने में न बिठाना

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पड़े। अपने पागलपन को अपने ही हाथ से बाहर फेंक दें, ताकि किसी और को आपके पागलपन को फेंकने के लिए कोई उपाय और कोई तरकीब न करनी पड़े। लेकिन आप नहीं सोचते। इसे हम कई तरह से समझने की कोशिश करें—

सिर्फ इंगलैंड एक मुल्क है, जहां के स्कूल के बच्चे पत्थर नहीं फेंक रहे हैं, सारी दुनिया के बच्चों द्वारा पत्थर फेंके जा रहे हैं। सिर्फ इंगलैंड अकेला मुल्क है, जहां के बच्चे स्कूल में शिक्षकों को पत्थर नहीं मार रहे हैं। गाली नहीं दे रहे हैं, परेशान नहीं कर रहे हैं। तो सारी दुनिया के विचारशील लोग परेशान हैं कि इंगलैंड में यह क्यों नहीं हो रहा है। सारी दुनिया में बड़े पैमाने पर हो रहा है। तो एक बात खोजी गयी और वह यह कि इंगलैंड के हर स्कूल में बच्चे को कम-से-कम दो घन्टे खेल खेलना पड़ रहा है। वही कारण है और कोई कारण नहीं है।

जो बच्चा दो घन्टे तक हॉकी की चोट मार रहा है, वह पत्थर फेंकने में उत्सुक नहीं रह जाता। उसने फेंकने का काम पूरा कर लिया। जो बच्चा फुटबाल को लात मार रहा है—दो घन्टे तक, उसकी इच्छा नहीं रह जाती अब, किसी को लात मारने की। किसी को लात मारने की वासना निकल गयी। इंगलैंड के मनोवैज्ञानिकों का सुझाव है कि सारी दुनिया में अगर बच्चों के उपद्रव रोकने हैं, तो उनको खेलने की गहन प्रक्रियायें देनी होंगी, जिनमें उनकी हिंसा निकल जाये। और बच्चों में बड़ी हिंसा है, क्योंकि बच्चों में बड़ी ताकत है। हमारे स्कूल में बच्चा क्या कर रहा है? पांच-छह घन्टे आप उसको बिठाये रखते हैं। कोई बच्चा प्रकृति से पांच-छह घन्टे एक क्लास के रूम में बैठने को पैदा नहीं हुआ है। प्रकृति ने कोई इन्तजाम नहीं किया है, कोई बिल्ट-इन व्यवस्था नहीं है भीतर, कि छह घन्टे बच्चे को बिठाया जा सके। छह घन्टे बच्चे को बिठाने का मतलब है कि छह घन्टे जो शक्ति प्रकट होना चाहती थी, वह रुक रही है।

स्कूल से बच्चे जब छूटते हैं,तो जरा उनको देखें। जैसे ही छुट्टी होती है, लगता है—वे नर्क से छूटे—उछाल रहे हैं बस्ते को, फेंक रहे हैं किताबों को और इतने आनन्दित हो रहे हैं कि जैसे जीवन मिल गया।

आपने जरूर उनके साथ कोई अपराध किया है पांच-छह घन्टे। नहीं तो उन्हें इतनी खुशी स्कूल से छूटकर न मिलती। और यह अपराध जारी रहेगा। यह बीस साल की उम्र, पच्चीस साल की उम्र तक जारी रहेगा। धीरे-धीरे वे इसी दबी हुई व्यवस्था के लिए राजी हो जाएंगे। फिर उनका सारा जीवन गड़बड़ हो जायेगा। क्योंकि ऊर्जा जो दब गयी और प्रकट होने का जिसे मार्ग न मिला, वह क्रोध बन जाती है, हिंसा बन जाती है। फिर नये-नये मार्गों से मार्ग खोजती है। फिर वे सब तरह के उपद्रव करेंगे। फिर वे किसी छोटी सी बात का बहाना ले लेंगे और उनकी हिंसा बाहर होने लगेगी।

हम सब हिंसा से भरे हुए लोग हैं। लेकिन अगर समझपूर्वक समझा जाये और जीवन को बदलने की ठीक व्यवस्था का ख्याल रखा जाये, तो हिंसा भी सृजनात्मक हो सकती

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। हिंसा भी क्रिएटिव हो सकती है। और क्रोध से भी फूल खिल सकते हैं, अगर अक्ल हो।

यह जो मैं आपसे कह रहा हूं—ध्यान का प्रयोग, यह आपकी हिंसा, आपके क्रोध, आपकी काम-वासना, आपकी घृणा, इनको सृजनात्मक रूप से रूपान्तरित करने का प्रयोग है। यह क्रिएटिव ट्रान्सफार्मेशन है।

आपका लक्ष्य ध्यान है। अगर आप चीख भी रहे हैं, तो आपका लक्ष्य ध्यान है। आपके चीखने की ऊर्जा भी ध्यान की तरफ प्रवाहित हो रही है। अगर आप अपने क्रोध को भी फेंक रहे हैं, नाराजगी को भी फेंक रहे हैं, रोने और दुख को भी फेंक रहे हैं, तो भी आपका लक्ष्य ध्यान है। यह ऊर्जा ध्यान की तरफ प्रवाहित हो रही है।

अगर आप थोड़े दिन तैयार हो जायें—मुझसे धोखा खाने को—आप अपने से तो धोखा खा ही रहे हैं, बहुत दिन से—तो यह भी प्रयोग कर लेने जैसा है। तीन महीने में आपसे कुछ छीन न लूंगा, क्योंकि आपके पास कुछ है भी नहीं, जो छीना जा सके।

मेरी दृष्टि में तो आपके पास ऐसी कोई मूल्यवान चीज नहीं है, जो छीनी जा सके। आपके पास है, तो उसे सम्हाल कर आप रखें। मेरे-जैसे लोगों के पास न आयें, क्योंकि ऐसे लोग आपको बदलने की कोशिश में ही लगे हुए हैं।

तीन महीने इस प्रयोग को करके देखें। तीन दिन के बाद आपको फर्क दिखाई पड़ने शुरू हो जायेंगे। और ऐसा नहीं कि एक मित्र ने ही पत्र लिखा है, पांच-सात उन मित्रों के भी पत्र हैं, जिनको कल के प्रयोग से पहली दफे ही परिणाम दिखाई पड़ना शुरू हुआ। वे बुद्धिमान लोग हैं। हालांकि इन मित्रों ने लिखा है कि हम बुद्धिमानों को आप धोखा नहीं दे पायेंगे। मगर बुद्धिमान वह है, जो प्रयोग करके कुछ कहता है। बुद्धिहीन वह है, जो बिना प्रयोग किये कुछ कहता है।

बिना प्रयोग किये आपकी बात का कोई मूल्य ही नहीं है।

पांच-सात मित्रों ने लिखा है...। एक मित्र ने लिखा है कि मुझे इतनी शान्ति कभी अनुभव नहीं हुई, लेकिन बीस मिनिट तक मुझसे आवाजें निकलती रहीं, जिनका मुझे ही भरोसा नहीं कि मेरे भीतर कहां से आयीं! क्योंकि इस तरह की आवाजें मैंने कभी नहीं कीं।

आपने न की हों, लेकिन आप करना चाहते हैं। आपके भीतर वे दबी पड़ी हैं और आप कहीं भी कर नहीं सकते थे। कहीं भी करते, तो आप पागल समझे जाते। यहां आप कर रहे थे, तो आपको ख्याल था कि आप ध्यान में जा रहे हैं, तो आपने अपने को खुला छोड़ दिया। इस खुले-भाव से जो भीतर दबा था, वह निकल गया। जैसे मवाद निकल गयी हो घाव से। और भीतर घाव हल्का और भरने के लिए तैयार हो गया हो। उन मित्र ने लिखा है कि ऐसी शान्ति मुझे जीवन में कभी भी नहीं मिली।

एक मित्र ने लिखा है कि आश्चर्यचकित हूं कि इस भांति नाचने-कूदने से आनन्द का भाव कैसे आया?

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रजनीश ध्यान योग

जब आप नाचते-कूदते हैं हृदयपूर्वक—नकली नाचते-कूदते हों, तो कोई बहुत फर्क नहीं होगा, कवायद होगी, थोड़ा व्यायाम हो जायेगा—लेकिन अगर हृदयपूर्वक नाचते हों, तो आप पुनः बच्चे हो गये। आप फिर बचपन में लौट गये। आप फिर छोटे बच्चे की तरह सरल हो गये और बच्चे जिस आनन्द की झलक को देख पाते हैं, उसको आप भी देख पा रहे हैं।

संतों ने कहा है कि बुढ़ापे में जो पुनः बच्चों की भांति हो जायें, वे ही संत हैं। आप छोटे बच्चों की भांति हो गये। इतने लोगों के सामने छोटा बच्चा भी शर्मायेगा नाचने में। और आप नाचे-कूदे, तो आपने भय छोड़ दिया। 'दूसरों के मन्तव्य का भय' छोड़ दिया। दूसरे क्या कहेंगे—यह भय छोड़ दिया।

बच्चों में यह भय नहीं होता। दूसरे क्या कहेंगे—उसे प्रयोजन नहीं है, उसके लिए जो आनन्दपूर्ण होता है, वह करता है। जैसे-जैसे बड़ा होता है, खुद के आनन्द की फिक्र छोड़ देता है, 'दूसरे क्या कहेंगे', इसका चिन्तन करने लगता है। बस, यही बच्चे की विकृति है।

आप फिर बच्चे हो गये और आपने सारी फिक्र छोड़ दी। आप पुनः अकेले हो गये, समाज से मुक्त हो गये। जैसे ही आपने चिन्ता छोड़ी कि कोई क्या कहेगा, उससे यह जो हल्कापन भीतर आया, उस हल्केपन में आनन्द की झलक बिल्कुल आसान है। और बच्चे की तरह जो फिर से हो जाए, वह परमात्मा को यहीं अनुभव करने लगेगा—चारों ओर। लेकिन बुद्धिमान, अतिशय बुद्धिमान...।

मैंने सुना है कि मुल्ला नसरुद्दीन को एक लाटरी मिल गयी। पांच लाख रुपये जीत लिए। सारा गांव चकित था। सारे गांव के लोग इकट्ठे हो गये। और लोग मुल्ला से पूछने लगे कि तुमने यही नम्बर कैसे चुना! गांव का जो बुद्धिमान था, उससे सबने कहा कि हमारी तरफ से तुम्हीं पूछ लो। तो गांव का जो बुद्धिमान आदमी था, उसने सबकी तरफ से मुल्ला से पूछा कि पूरा गांव एक ही जिज्ञासा से भरा है, कि यह उनहत्तर, सिक्सटी नाइन नम्बर तुमने कैसे चुना, किस तरकीब से?

तो मुल्ला ने कहा, "तुम पूछते हो तो मैं तुम्हें बता देता हूं। एक स्वप्न में मुझे यह नम्बर प्रकट हुआ। एक स्वप्न मैंने देखा रात में कि मैं एक नाटक देख रहा हूं और वहां मंच पर सात कतारें नर्तकियों की खड़ी हैं और हर कतार में सात नर्तकियां हैं। वे सब नाच रही हैं। तो सात सतैयां उनहत्तर—ऐसा मैंने सोचा और सुबह मैंने उनहत्तर नम्बर की टिकट खरीद ली।'

पर, उस बुद्धिमान आदमी ने कहा—'अरे, पागल! सात सतैयां उनहत्तर होते ही नहीं; सात सतैयां तो होते हैं उनचास—फॉर्टी नाइन'।

तो मुल्ला नसरुद्दीन ने कहा, 'ओ.के., सो यू बी दि मैथामेटीशियन। तो तुम गणितज्ञ हो जाओ, लेकिन लाटरी मैंने जीती है।

वह जो नाच रहा है, कूद रहा है, वह आपसे कहेगा—सो यू बी दि वाइज़ मैन, यू बी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दि मैथामेटीशियन—वह आपकी फिक्र नहीं करेगा। न मीरा ने आपकी फिक्र की है, न चैतन्य ने आपकी फिक्र की है। ये नाच लिए हैं और वे आपसे कहते हैं, 'आप हो जाओ बुद्धिमान, हमें रहने दो पागल। क्योंकि हमें पागलपन में जो मिल रहा है, वह हमें नहीं दिखता कि तुम्हारी बुद्धिमानी में भी तुम्हें मिल रहा है।'

और एक ही सबूत है बुद्धिमानी का—क्या मिल रहा है?

बुद्धिमान कौन है? बुद्धिमानी का एक ही सबूत है कि क्या मिल रहा है जीवन में—कितना आनन्द, कितना रस, कितना सौन्दर्य, कितना सत्य, कितना परमात्मा। और कोई सबूत बुद्धिमानी का नहीं है।

तो मैं तो आपसे कहूंगा, जिनको बुद्धिमान रहना हो, मजे से बुद्धिमान रहें। लेकिन जिनको जीवन का रस जानना हो, उन्हें सस्ती बुद्धिमानी से बचना जरूरी है।

हां, मैं यह नहीं कहता कि आप मेरी बात मानकर नाचते-कूदते रहें। वह बुद्धिमानी नहीं है। मैं आपसे यह कहता हूं कि मैं जो कह रहा हूं, उसे करके देख लें और लगता हो कि कुछ है, तो आगे बढ़ जायें; और लगता हो कि इसमें कुछ नहीं, तो छोड़ दें। कौन रोकता है आपको छोड़ने से। लेकिन छोड़ने के पहले परख लेना जरूरी है। और किसी भी चीज में 'कुछ नहीं है', ऐसे धारणा बनाने के पहले प्रवेश करना जरूरी है। अनुभव के पहले जो निर्णय लेता है, वह अन्धा है।

एक मित्र ने पूछा है कि आपने बताया कि बेहोशी में किया गया कृत्य पाप है। लेकिन भाव से भी बेहोशी होती है। कृपया समाधान कीजिये।

बेहोशी, बेहोशी में बड़ा फर्क है। एक बेहोशी नींद में होती है, तब आपको कुछ भी पता नहीं होता। एक बेहोशी शराब पीने से भी होती है, तब भी आपको कुछ पता नहीं होता। एक बेहोशी भाव से भी होती है—आप पूरे बेहोश भी होते हैं और आपको पूरा पता भी होता है। जब आप मग्न होकर गीत में नाच रहे होते हैं, तो यह नृत्य भी होता है, इस नृत्य में पूरा डूबा हुआ होना भी होता है और भीतर दीये की तरह चेतना भी जलती है जो जानती है; जो देखती है, जो साक्षी होती है।

अगर आपके भाव में बेहोशी शराब-जैसी आ जाये, तो आप समझना कि चूक गये। तो समझना कि यह भाव भी फिर शराब ही हो गयी।

प्रार्थना में बेहोशी का मतलब इतना है कि आप इतने लीन हो गये हैं कि मैं हूं—इसका कोई पता नहीं है। मैं हूं, इसका कोई शब्द निर्मित नहीं होता। लेकिन जो भी हो रहा है,उसके आप साक्षी हैं—जो साक्षी हैं, उसमें कोई 'मैं' का भाव नहीं है। और वह जो साक्षी है, वह आप नहीं हैं, आप तो लीन हो गये हैं और आपके लीन होने के बाद जो भीतर आपका असली स्वरूप है, वह भर देखता है।

उस दर्शन में, उस द्रष्टा के होने में, जरा भी बेहोशी नहीं। भाव की बेहोशी में आपके जो-जो रोग हैं, वे सो गये होते हैं और आपके भीतर जो शुद्ध चेतन है, वह जाग गया होता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है।

जब चैतन्य नाच रहे हैं सड़कों पर, तो आप यह मत सोचना कि वे बेहोश हैं। हालांकि वे कहते हैं कि मैं बेहोश हूं और हालांकि वे कहते हैं कि हमने शराब पी ली है परमात्मा की। वे सिर्फ इसलिए कहते हैं कि आप इन्हीं प्रतीकों को समझ सकते हैं।

उमर खैयाम ने कहा कि अब हमने ऐसी शराब पी ली है, जिसका नशा कभी न उतरेगा। और अब बार-बार पीने की कोई जरूरत न रहेगी। अब तो पीकर हम सदा के लिए खो गये हैं।

शराब का उपयोग किया है, प्रतीक की तरह; क्योंकि आप एक ही तरह का खोना जानते हैं, जिसमें आपकी सारी चेतना ही शून्य हो जाती है।

भाव में शराब का थोड़ा-सा हिस्सा है। उसमें आपकी सब बीमारियां सो जाती हैं आपका अहंकार सो जाता है, आपका मन सो जाता है, आपके विचार सो जाते हैं। लेकिन आप पूरी तरह से जाग गये होते हैं और भीतर पूरा होश होता है। लेकिन यह तो अनुभव से ही होगा, तो ही ख्याल में आयेगा। यह तो जटिल है। यह तो आपको कैसे ख्याल में आयेगा? भाव में आयेगा? भाव में डूबकर देखें।

लेकिन हम डरते हैं । डर यही होता है कि कही अगर भाव में पूरा डूब गये, तो जो-जो हमने दबा रखा है, अगर वह बाहर निकल पड़ा, तो लोग क्या कहेंगे । डरते हैं हम, क्योंकि हमने बहुत-कुछ छिपा रखा है। और हमने चारों तरफ से अपने को बांध रखा है—नियंत्रण में । तो कहीं नियंत्रण ढीला हो गया और जरा सा भी कहीं छिद्र हो गया और हमने जो रोक रखा है, वह बाहर निकल पड़ा तो! उस भय के कारण हम अपने को कभी छोड़ते नहीं, समर्पण नहीं करते । हम कहीं भी अपने को शिथिल नहीं करते । हम चौबीस घन्टे डरे हुए हैं और अपने को सम्हाले हुए हैं । तब यह जिंदगी नर्क जैसी हो जाती है । इसमें सिवाय सन्ताप के और विष के कुछ भी नहीं बचता। यह रोग-ही-रोग का विस्तार हो जाता है ।

खुलें, फूल की तरह खिल जायें । माना कि बहुत-सी बीमारियां आपके भीतर पड़ी हैं, लेकिन आप उसको जितना सम्हाले रखेंगे, उतनी ही वे आपके भीतर बढ़ती जायेंगी । उनको भी गिर जाने दें, उनको भी परमात्मा के चरणों में समर्पित कर दें और आप जल्दी ही पायेंगे कि बीमारियां हट गयीं और आपके भीतर फूल का खिलना शुरू हो गया । आपके भीतर का कमल खिलने लगा ।

जिस दिन यह भीतर का कमल खिलना शुरू होता है, उसी दिन पता चलता है कि बेहोशी भी है और होश भी है। एक तल पर हम बिल्कुल बेहोश हो गये है; और एक तल पर हम पूरी तरह होशवान हो गये हैं। ये घटनायें एक साथ घटती हैं ।

शराब में हम केवल बेहोश होते हैं, कोई होश नहीं होता । इसलिए कुछ साधकों ने तो इस भाव की जागरूकता को पाने के बाद शराब पीकर भी देखी है कि क्या हमारी इस

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भाव की जागरूकता को शराब डुबा सकती है ।

आपको पता हो या न हो, योग और तंत्र के ऐसे सम्प्रदाय रहे हैं जहां कि शराब भी पिलायी जायेगी । जब भाव की पूरी अवस्था आ जाएगी और साधक कहेगा कि अब मैं बाहर से तो बिल्कुल बेहोश हो जाता हूं, लेकिन मेरा भीतर होश पूरा बना रहता है, तो फिर गुरु उसको शराब भी पिलायेगा और धीरे-धीरे बेहोशी की मादकता की अफीम भी खिलाएगा । मात्रा बढ़ाई जायेगी और उससे कहा जायेगा कि यहां बाहर बेहोशी घेरने लगे, शरीर बेहोश होने लगे, तो भी तू भीतर अपने होश को मत खोना । और यह बात यहां तक प्रयोग की गयी है कि जब सब तरह की शराब और सब तरह के मादक द्रव्य पीकर भी साधक भीतर होश से भरा रहता है, तब फिर सांप से भी कटवाते हैं, उसकी जीभ पर—ताकि जब सांप काट ले, उसका जहर भी पूरे शरीर में फैल जाये, तो भी भीतर का होश जरा भी न डिगे । तभी वे मानते हैं कि अब साधक ने उस होश को पा लिया जिसको मौत भी न हिला सकेगी ।

पर अनुभव के बिना कुछ ख्याल न आ सकेगा । थोड़ा भाव में डूबना सीखें । भाव में जो डूबता है, वह उबर जाता है— और भाव से जो बचता है, वह डूब ही जाता है, नष्ट ही हो जाता है ।

लेकिन कुछ चीजें हैं, जो समझाने से नहीं समझायी जा सकतीं; कोई उपाय नहीं हैं । और जितनी भीतर बात होगी, उतना ही अनुभव पर निर्भर रहना पड़ेगा ।

अगर मेरे पैर में दर्द है, तो आपको मानना पड़ेगा कि दर्द है । और दूसरा क्या उपाय है उसे सिद्ध करने का ! और अगर मैं आपको समझाने जाऊं और आपके पैर में कभी दर्द न हुआ हो, तो बड़ी मुश्किल हो जायेगी । मैं कितना ही कहूं कि पैर में दर्द है, लेकिन आपको अगर दर्द का कोई अनुभव नहीं है, तो शब्द ही सुनाई पड़ेगा, अर्थ कुछ भी समझ में न आयेगा । आपको भी दर्द हो तो ही... । अनुभव को शब्द से हस्तान्तरित करने की कोई भी सुगमता नहीं है ।

बुद्ध के पास कोई आया और उसने कहा कि जो आपको हुआ है, वह थोड़ा मुझे भी समझाएं। तो बुद्ध ने कहा, "समझा मैं न सकूंगा । तुम रुको और वर्षभर जो मैं कहूं, वह करो; सम्भवतः समझ में आ जाये। " क्योंकि जब तक भीतर प्रतीति न हो इस बात की, कि सब बेहोशी हो गई है और फिर भी भीतर कोई जागा है, दीया जल रहा है, तब तक कैसे समझेंगे, तब तक आप बाहर से ही देखेंगे !

आप बाहर से नाचते हुए देखेंगे मीरा को, तो आपको लगेगा कि बेहोश है, होश नहीं है । लगेगा ही । कपड़ा गिर गया, साड़ी का पल्लू गिर गया । अगर होश होता, तो मीरा अपना पल्लू सम्हालती, कपड़ा सम्हालती । होश में नहीं है, बेहोश है । निश्चित ही, शरीर के तल पर बेहोश है । कपड़े की तरफ से होश हट गया है। वहां मीरा अब नहीं है न कपड़े में है न शरीर में है । भीतर कहीं सरक गयी है । लेकिन वहां होश है ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पर यह तो आप भी मीरा हो जायें, तभी ख्याल में आयेगा, अन्यथा कैसे ख्याल में आये। मीरा के भीतर झांकने का कोई भी उपाय नहीं है । कोई खिड़की-दरवाजा नहीं, जिससे हम भीतर झांक सकें। अगर मीरा के भीतर झांकना है, तो अपने भीतर झांकना पड़ेगा, और कोई उपाय नहीं है ।

बुद्ध को समझना हो, तो बुद्ध हुए बिना कोई रास्ता नहीं है । इसलिए शिष्य जब तक गुरु को नहीं समझ पाता...। कैसे समझेगा ? अलग-अलग तल पर खड़े हुए लोग हैं । वे अलग भाषायें बोल रहे हैं । अलग अनुभवों की बातें कर रहे हैं। तब तक मिसअण्डरस्टैंडिंग ज्यादा होगी, नासमझी ज्यादा होगी, समझ कम होगी । अगर सच में ही समझना चाहते हैं, तो प्रयोग की हिम्मत जुटानी चाहिए ।

विज्ञान भी प्रयोग पर निर्भर करता है और धर्म भी । दोनों एक्सपेरिमेंटल हैं । विज्ञान भी कहता है कि जाओ प्रयोगशाला में और प्रयोग करो और जब तुम भी पाओ कि 'ऐसा होता है', तो ही मानना, अन्यथा मत मानना । धर्म भी कहता है कि जाओ प्रयोगशाला में प्रयोग करो—हालांकि प्रयोगशालायें दोनों की अलग हैं । विज्ञान की प्रयोगशाला बाहर है, धर्म की प्रयोगशाला भीतर है। आप ही हो धर्म की प्रयोगशाला।

इसलिए विज्ञान की प्रयोगशाला तो निर्मित करनी पड़ती है और आप अपनी प्रयोगशाला अपने साथ लिए चल रहे हो । नाहक ढो रहे हो वजन । बड़ा अद्‌भुत यंत्र आपको मिला है, उसमें आप प्रयोग कर लो, तो अभी आपको ख्याल में आ जाये कि क्या हो सकता है ।

भाव की वेहोशी गहन होश का नाम है, यह किसी दूसरे तल पर होश है, जागरूकता है ।

५. साधना-शिविर का विदाई-सन्देश

(साधना-शिविर, आनन्द-शिला, त्रिमूर्ति हिल्स, अम्बरनाथ, बम्बई में रात्रि, दिनांक १७ फरवरी १९७३ को भगवान श्री द्वारा दिये गये समापन प्रवचन का अन्तिम हिस्सा)

साधना-शिविर का अन्तिम दिन है, इसलिए जाने के पहले कुछ बातें और भी आपसे कहना चाहूंगा । एक, जो ध्यान के प्रयोग आप यहां कर रहे थे, वे केवल प्रयोग हैं, ताकि ख्याल में आ सके कि क्या करना है । इतना मात्र कर लेने से कुछ हल न हो जायेगा; उसे जारी रखना पड़ेगा।

तो घर लौटकर साधना जारी रखें। अन्यथा मैं देखता हूं कि आप शिविर में कर लेते हैं, शांति मिलती है, सहजता आती है, निर्दोषता की थोड़ी-सी झलक आती है । एक ताजा हवा का झोंका आता है और अच्छा लगता है । फिर वापस घर लौटकर आप पुरानी आदतों में जीने लगते हैं। फिर कभी किसी शिविर में आ जायेंगे, फिर कर लेंगे । ऐसे बार-बार करेंगे और बार-बार खोते रहेंगे। इस प्रकार बहुत गहरे परिणाम न आयेंगे । इसे तो खोदते ही जाना है । यह कुआं इतना गहरा है कि इसे अगर खोदा दो-चार दिन, फिर छोड़ दिया; चार-छह महीने—तो कूड़ा-करकट भरकर जमीन पुरानी हो जायेगी । फिर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सतह वही कि वही हो जाएगी फिर खोद लिया दो-चार हाथ, फिर छोड़ दिया, तो इस तरह कुआं कभी भी न खुदेगा और वह जल जिसकी तलाश है, कभी न मिलेगा । इसे खोदते ही जायें । इसे खोदते ही जाना है और एक ही जगह खोदते रहें । बार-बार अलग जगह खोदेंगे, तो श्रम भी होगा, समय भी नष्ट होगा, शक्ति भी जाएगी, और परिणाम भी न होंगे ।

रूमी ने अपने शिष्यों को एक दफा कहा कि तुम मेरे साथ आओ । तुम कैसे हो, वह मैं तुम्हें बताता हूं । वह अपने शिष्यों को ले गया एक खेत में, वहां आठ बड़े-बड़े गड्ढे खुदे थे। सारा खेत खराब हो गया था। रूमी ने कहा, देखो इन गड्ढों को। यह किसान पागल है, वह कुआं खोदना चाहता है। परन्तु वह चार-आठ हाथ गड्ढा खोदता है, फिर यह सोचकर कि यहां पानी नहीं निकलता, दूसरा खोदता है । चार हाथ, आठ हाथ खोदने पर, यह सोचकर कि पानी नहीं निकलता— तीसरा गड्ढा खोदता है । वह आठ स्थानों पर खोद चुका है । पूरा खेत भी खराब हो गया और कभी कुआं नहीं बना । अगर वह एक ही गड्ढे पर इतनी मेहनत करता—जो इसने आठ गड्ढों पर की है—तो पानी निश्चित मिल गया होता ।

तो एक दफा संकल्प करें और एक ही जगह सतत खोदते चले जायें, तो ही आपको जीवन के जलस्रोत मिलेंगे । यहां जो सीखा है, उसका घर जाकर प्रयोग करें, ताकि जब दूसरी शिविर में आप आयें, तो वहीं से शुरू न करना पड़े जहां से पहले शिविर में शुरू किया था। आप कुछ खोदकर लायें तो फिर हम और गहरी खुदाई कर सकें। और तब हर बार शिविर आपके लिए नये द्वार खोल सकता है। लेकिन आप पुराने द्वार पर घर लौटकर काम करते रहे हों—तभी।

तो पहली बात तो यह स्मरण रखें कि ध्यान एक भीतरी खुदाई है, जिनको सतत जारी रखना जरूरी है।

दूसरी बात ध्यान रखें कि यहां तो आसान है कर लेना। घर पर भय लगेगा। पड़ोस है,आस-पास लोग हैं, परिवार के लोग हैं। आप हंसेंगे, चिल्लायेंगे, रोयेंगे, तो क्या कहेंगे लोग!

एक बात सदा ख्याल रखें कि वैसे भी आपके बाबत लोगों का अच्छा ख्याल नहीं है। इस भ्रांति में रहना मत कि लोग आपके सम्बन्ध में अच्छा सोच रहे हैं। इससे ही तकलीफ शुरू होती है कि कहीं अपनी अच्छी प्रतिमा न गिर जाए। वह कहीं है ही नहीं। आप सोंचें, क्या आपके मन में पड़ोसी की कोई अच्छी प्रतिमा है?....आपके मन में किसकी अच्छी प्रतिमा है? तो किसके मन में आपकी प्रतिमा अच्छी होने वाली है? यह नाहक की भ्रांति है, इसमें पड़ना ही मत।

और अच्छा यही होगा कि घर में लोगों को बता देना कि ऐसा प्रयोग मैं कर रहा हूं, चिंता लेने की जरूरत नहीं है। अगर आसान हो, तो पास-पड़ोस में भी जाकर बता आना कि मैं ऐसा एक प्रयोग कर रहा हूं। थोड़ा आवाज करूं, चिल्लाऊं तो आप बहुत चिन्तित मत

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होना। तो आप हल्के होकर कर सकेंगे प्रयोग। लोग जानते हैं, दो-चार दिन में समझ जाते हैं कि ठीक है। जिन लोगों से आपको डर है—अगर आप प्रयोग करते रहें, उनका भय छोड़कर, तो महीने-दो महीने के भीतर वे आपसे पूछेंगे कि हमें भी सिखा दें; क्योंकि दो महीने में आप में काफ़ी बदलाहट हो जायेगी।

अभी आपकी कोई प्रतिमा नहीं है लोगों के पास, लेकिन अगर आपने ध्यान किया, तो निश्चित आपकी प्रतिमा होगी, क्योंकि आपकी शान्ति की खबर मिलनी शुरू हो जाती है। फूल खिलते हैं, तो छिप नहीं सकते! सूरज निकलता है, तो अन्धे तक को भी उसका उत्ताप पता चलने लगता है—न भी दिखाई पड़े तो भी पक्षियों के गीत कहने लगते हैं कि सुबह हो गयी।

आप ध्यान में गहरे उतरेंगे तो आपकी शान्ति, आपका आनन्द, आपका प्रेम, आपकी करुणा—सब बढ़ेगी। आपका क्रोध, आपकी घृणा, आपकी ईर्ष्या घटेगी। आप अपने पड़ौस में, अपने परिवार में, अपने सम्बन्धियों के बीच नये आदमी बन जायेंगे। मगर अगर अभी से आप डरते हैं कि कहीं कोई यह न समझे कि मैं पागल हूं, कहीं कोई यह न समझ ले कि...कहीं कोई वैसा न समझ ले, इस भ्रान्ति को छोड़ दें। किसी को भी चिन्ता नहीं है बहुत ज्यादा, आपके सम्बन्ध में सोचने की।

कभी आपने ख्याल किया है, सब अपने-अपने सम्बन्ध में सोचते हैं। किसको फुरसत है कि आपके सम्बन्ध में सोचे! आप किसके सम्बन्ध में कितना सोचते हैं? और अगर पड़ौस में कोई चिल्लाने लगे जोरों से, तो एक दफा सोचेंगे कि शायद दिमाग खराब हो गया है। फिर किसे फुरसत है कि इस पर लगे ही रहें? लेकिन अगर यह आदमी चिल्लाने वाला, आपको दूसरे दिन इसकी शक्ल में फर्क दीखने लगे, अगर साल-छह महीने के भीतर यह आदमी शान्ति का एक स्रोत बन जाये तो आप ही इससे पूछेंगे कि वह तरकीब क्या है, चिल्लाने की, जिससे तुम शान्त हो गये हो! तो जल्दी न करना, प्रतीक्षा करना, अपने में परिवर्तन की। तभी आपकी कोई प्रतिमा निर्मित होती है, अभी कोई प्रतिमा नहीं है। अभी सिर्फ आपको ख्याल है।

तीसरी बात ध्यान रखना जरूरी है कि घर पर आप अकेले होंगे, लेकिन अकेले होने की कोई जरूरत नहीं। जिस भांति आप यहां मेरे सामने बैठकर ध्यान कर रहे हैं, अगर इसी भांति आपने ख्याल रख लिया कि मैं सामने बैठा हूं और आप ध्यान कर रहे हैं, तो आप मेरी मौजूदगी उतनी ही पायेंगे, जितनी आप यहां पाते हैं। और तब आप निर्भय प्रयोग कर सकते हैं। और आपकी निर्भयता प्रयोग के लिए बहुत जरूरी है। आप डरें मत कि अकेले हैं, कि कुछ खतरा न हो जाये। कोई खतरा न होगा। आप जाने के पहले सारे खतरे, सारे भय मेरे पास छोड़ जायें।

और आपसे मांगता ही केवल इतना हूं, जाते इन क्षणों में, कि आपका जितना दुख, जितनी चिन्ता, जितनी पीड़ा, जितना सन्ताप है, वह मुझे दे दें, उसको साथ मत ढोयें, उसको

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

साथ रखने की कोई जरूरत नहीं है।

आपसे धन नहीं मांगता; आपसे तन नहीं मांगता, आपसे कुछ और नहीं मांगता हूं; आपके पास जो भी पीड़ा है, जो भी उपद्रव है, जो भी सन्ताप है—वह सब मुझे दे दें। उससे मुझे अड़चन न होगी। आप निर्भार हो जायेंगे, और आप जिस चीज से दुखी हो रहे हैं, जिस शक्ति से दुखी हो रहे हैं—नासमझी के कारण, जिस शक्ति से आप चिंतित हो रहे हैं—ना समझी के कारण, सब नासमझी मुझे दे दें। मैं आपको वही शक्ति वापस लौटा दूंगा। तब वह आनन्द हो जाएगी, वह करुणा हो जाएगी।

आप घर पहुंचते हैं, तो ज्यादा समय न खोयें। यहां जो सिलसिला पैदा हुआ है, यहां जो हवा बनी है और मन में जो रुझान पैदा हुआ है, वह खो जाये इतना समय न गंवायें। घर जाकर तत्क्षण ध्यान में लग जायें।

एक घन्टा रोज ध्यान में दे दें। जिन्दगी के आखिर में आप पायेंगे कि बाकी सब समय व्यर्थ गया, परन्तु यह जो ध्यान में लगाया था समय, वही केवल आपके काम आया—वही बचा है, वही सार्थक हुआ है। और मुझे स्मरण रखें; कोई भय न होगा। और भीतर जब प्रवेश करेंगे, तो कभी लगेगा कि कहीं मौत न हो जाए। जैसे-जैसे ध्यान गहरा होगा, मौत का अनुभव होना शुरू होगा। उससे जरा भी न घबरायें, घबराकर वापस न लौटें। अगर मौत भी भीतर आती हो, तो कहें कि ठीक है, स्वीकार है, मैं बढ़ता हूं। और मैं आपके साथ हूं।

६. स्टाप मेडिटेशन

छोटे-से निर्णय भी बड़े क्रान्तिकारी हैं। किस बात का निर्णय लिया, यह बहुत मूल्य का नहीं है; निर्णय लिया। इस लेने में ही आपके प्राण इकट्ठे हो जाते हैं; एकजुट हो जाते हैं। निर्णय लेते ही आप दूसरे आदमी हो जाते हैं। वह निर्णय बिल्कुल क्षुद्र भी हो सकता है।

जैसे मैं आपसे कहता हूं, रुक जायें। गुरजियेफ इसका बड़ा प्रयोग करता था ध्यान में उसने इसके लिए 'स्टाप मेडिटेशन' ही नाम रखा था। आप राजी हो जाएंगे थोड़े समय में, तो उस प्रयोग को हम पूरा करेंगे। जब मैं आपसे कहता हूं, 'रुक जाएं!' तो मेरे इस रोकने में, अभी मैं आप पर ज्यादा जोर नहीं दे रहा हूं। गुरजियेफ भी कहता था, 'रुक जाएं!' लेकिन रुक जाने का मतलब था—जैसे हैं; एक पैर ऊपर है और एक पैर नीचे है,नाच रहे थे तो वहीं रह जाएं। गर्दन आड़ी है तो वैसी रह जाए। शरीर झुका है तो वैसा रह जाए। फिर जरा भी कोई फर्क नहीं करना है; जो हालत है, वैसी रह जाये। चाहे शरीर धड़ाम से गिर जाए, पर आपको कुछ फर्क नहीं करना है। शरीर गिरे तो गिर जाये। और जैसा गिर जाये, वैसे ही रहने देना है। आपको भीतर से इन्तजाम नहीं करना है कि पैर जरा तिरछा है तो थोड़ा-सा सीधा करके लेट जायें...न। गुरजियेफ इसको 'स्टाप मेडिटेशन' कहता था।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

और उसने हजारों लोगों को इससे गहरे अनुभव करवाये। और यह बड़ा कीमती प्रयोग है; क्योंकि एकदम-से रुक जाना ! और धोखा देने में दूसरे को कोई सवाल नहीं है, आप अपने को दे सकते हैं। आपका एक पैर जरा ऊपर था, आप धीरे-से नीचे रख लें तो कौन देख रहा है ?

बाकी आप खो गये एक मौका। कोई नहीं देख रहा है किसी को; मतलब भी नहीं है। आपका पैर है, कहीं भी रखिये। मगर अपने भीतर एक अवसर खो दिया — जहां आत्मा और शरीर का सम्बन्ध बदल सकता था। जहां आत्मा जीत सकती थी और कह सकती थी कि मैं मालिक हूं अगर आपने धीरे से पैर रख लिया सम्हालकर — और फिर आराम से खड़े हो गये कि अब देखो 'स्टाप' का प्रयोग कर रहे हैं, तो आप किसी और को धोखा नहीं दे रहे हैं; आपके शरीर ने आपको धोखा दे दिया।

छोटे-छोटे निर्णय, बहुत छोटे-छोटे निर्णय भी बड़े परिणामकारी हैं।

७. समयसार

जगत में खोज के दो उपाय हैं — एक निष्क्रिय, एक सक्रिय। सक्रिय में तुम केवल निष्पक्ष-भाव से खड़े होते हो। सक्रिय चेष्टा विचार बन जाती है; निष्क्रिय चेष्टा ध्यान बन जाती है। जब तुम सक्रिय हो कर खोज में लग जाते हो, तो तुम विचारों से भर जाते हो। क्योंकि विचार मन के सक्रिय होने का अंग है। जब मन सक्रिय होता है तो विचार से भर जाता है। मन जब निष्क्रिय होता है, तो कोरा रह जाता है। आकाश में बादल हों तो सक्रिय, आकाश में कोई बादल न हों तो निष्क्रिय; कोई क्रिया नहीं हो रही।

थोड़ा अभ्यास करो। शान्त बैठ के वृक्ष को देखते हो तो देखते ही रहो। सक्रिय मत बनो। इतना भी मत कहो कि यह पीपल का वृक्ष है।

यह भी मत कहो कि यह गुलाब की झाड़ी है। यह भी मत कहो कि गुलाब कितने सुन्दर हैं। यह भी मत कहो कि वहां कितने प्यारे फूल खिले हैं। ऐसा मन में कुछ भी मत कहो; ये सब तुम्हारी मान्यतायें हैं।

गुलाब का फूल तो बस गुलाब का फूल है—न सुन्दर, न असुन्दर। सुबह तो बस सुबह है। सब वक्तव्य तुम्हारे हैं; सुबह तो अवक्तव्य है। उसके बाबत तो कोई वक्तव्य नहीं हो सकता; अनिर्वचनीय है। सब वचन तुम्हारे हैं। तुम अपने को हटा लो। तुम कुछ कहो ही मत; तुम सक्रिय बनो ही मत। तुम सिर्फ सुबह को देखते रह जाओ। उगता है सूरज, उगने दो। वृक्षों में हवा सरसराती है, सरसराने दो—तुम शब्द न दो। तुम शब्द को मत बनाओ। तुम शब्द से रिक्त और शून्य देखते रहो, देखते रहो। धीरे-धीरे-धीरे-धीरे-धीरे अभ्यास घना होगा।

कभी ऐसा क्षण आ जाएगा—एक क्षण को भी—कि तुम सिर्फ देखते रहे और तुम्हारे भीतर डालने को कुछ भी न था। तुमने कुछ भी न डाला अस्तित्व में, तुम सिर्फ खड़े देखते

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रहे—दर्शक, द्रष्टा-मात्र। उसी घड़ी में एक झरोखा खुलता है; पहली दफा अस्तित्व तुम्हारे सामने अपने रूप को प्रकट करता है। पहली बार तुम उसको देखते हो, जो है। क्योंकि पहली बार तुम कुछ जोड़ते नहीं, मिलाते नहीं, तुम कुछ डालते नहीं। तुम भी शुद्ध होते हो उस घड़ी में और अस्तित्व भी शुद्ध होता है। दो शुद्धियां एक-दूसरे का साक्षात्कार करती हैं।

इसे महावीर कहते हैं, 'समयसार'।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

६. ध्यान : रहस्य

आदमी और आदमी के बीच हिसाब ही नहीं है डिस्टेंस का। दूरी भी बहुत दूरी नहीं है। आप एक फीट दूर हैं तो कहते हैं, पास हैं। हजार फीट दूर हैं तो कहते हैं, दूर हैं। बाकी एक फीट और हजार फीट का ही फर्क है। लेकिन आदमी और आदमी के बीच फासला इतना ज्यादा है कि उसके दूरी नहीं कहा जा सकता। पास तो कहा ही नहीं जा सकता, दूर भी नहीं कहा जा सकता। और मजा ऐसा है कि कोई उपाय भी नहीं है कि दूरी खत्म की जाये। और कभी दो आदमियों के बीच दूरी खत्म नहीं हुई—कभी। और न कभी होगी। यानी पूरे मनुष्य जाति के इतिहास में कभी भी दो आदमियों के बीच फासला कम नहीं हुआ।

तुम जो कहते हो न, लैक ऑफ अण्डरस्टैंडिंग, ऐसा नहीं है।जो बड़े अण्डरस्टैंडिंग वाले लोग हैं उनके बीच भी फासला है। फासले का सम्बन्ध तुम्हारी समझ से नहीं है। वह जो आदमी का अस्तित्व, जो वेरी एग्जिस्टेंस है, वह ऐसा है कि उसमें दूरी अनिवार्य है, और उसका कुल मतलब इतना है, जो ख्याल में नहीं पड़ता। वह यह है कि चूंकि एक-एक आदमी एक-एक मिस्ट्री है, इसलिए दो मिस्ट्री के बीच कभी कोई निकटता नहीं हो सकती। दो रहस्य के बीच अनन्त फासला रहेगा ही।

एक आदमी जो हमें दिखता है ऊपर से वह, वह थोड़ा ही है। वह भीतर बड़ा रहस्य है, वह बड़ी मिस्ट्री है। मिस्ट्री वह ऐसी है, इसलिए वह खुद को भी नहीं जान पाता है जो वह स्वयं है। न जानने का कारण यह है कि रहस्य इतना बड़ा है कि वह खुद अपने को नहीं जान पाता तो दूसरा उसको जान कैसे पायेगा। और रहस्य का मतलब यह है, नॉट दैट व्हिच इज नॉट नोन, बट व्हिच कैनं नॉट बी नोन, व्हिच कैन नेवर बी नोन। नॉट बीइंग अन्नोन, बट अन्नोएबल—रहस्य का, मिस्ट्री का जो मतलब है। मिस्ट्री का मतलब यह है, जो नहीं जाना जा सकता, अज्ञेय है वह, अज्ञात नहीं। अज्ञात को जाना जा सकता है। अज्ञात को हम आज नहीं कल जान लेंगे।

तो मनुष्य जो है, वह अन्नोएबल है। और इसलिए दो मनुष्य के बीच फासला अनंत होगा—अनंत। दूरी नहीं कहो उसे, क्योंकि दूरी तो नापी जा सकती है। अमाप होगी, इम्मेजरेबल होगी। और यह कभी कम नहीं होगी। इसलिए ये अपने बड़े मजेदार मामले हैं। इसलिए एक-एक आदमी एक-एक आईलैण्ड है। इसलिए दूसरे आईलैण्ड से कभी नहीं मिलता। बात कहता हुआ निकल जाता है, छूता हुआ निकल जाता है, फिर भी मिलन कभी नहीं होगा।

प्रश्न—आईलैण्ड को हिन्दी में क्या कहते हैं?

द्वीप, जिसके चारों तरफ ज़ल है और द्वीप अकेला खड़ा है, बिल्कुल अकेला है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लोनली। उसका दूसरे से कभी मिलना होता ही नहीं। और यह कभी हुआ नहीं और कभी होगा नहीं। कितना ही तुम जानो किसी को—एक पत्नी के पास तुम पचास वर्ष रहो, फिर भी तुम नहीं जानते हो उसे। तो वह कल सुबह उठकर क्या करेगी, कुछ पक्का नहीं है। बेटे को बाप नहीं जानता, बाप बेटे को नहीं जानता, मित्र को मित्र नहीं जानता। कुछ पक्का ही नहीं है, क्योंकि वह मिस्ट्री इतनी बड़ी है कि उससे कुछ भी निकल सकता है, इसका कोई हिसाब नहीं।

दूरी अनन्त है और सम्भावना कोई नहीं है उसे कम करने की। और इसलिए जो लोग उसे कम करने की कोशिश करते हैं, वे मुसीबत में पड़ जाते हैं। उसे जीयो, उसे कम करो ही नहीं। अगर एक स्त्री से मुझे प्रेम है और मैंने दूरी कम करने की कोशिश की—यह विवाह वगैरह सब दूरी कम करने की कोशिश हैं—और मैंने उसे समझने की कोशिश की और सारा उपद्रव किया, तो मुश्किल खड़ी हो जायेगी। मैं जान लूं कि वह मिस्ट्री है और जीऊं।

तुम मेरे पास रुके हो, मैंने जानने-पहचानने की कोशिश की कि तुम कौन हो, क्या हो और कैसे हो; और ऐसा होना चाहिए, वैसा नहीं होना चाहिए, तो हमारे बीच का फासला—न, तुम जैसे हो, मैं नहीं जानता और फिर भी तुम्हारे साथ जीने को राजी हूं। मित्रता का इतना ही मतलब है। टू लिव विद अन्नोन, फ्रेण्डशिप का इतना ही मतलब है। एक अनजान अपरिचित आदमी से, जिससे कभी कोई परिचय नहीं होने वाला है, हो भी नहीं सकता। एक्वेंटेंस हो सकता है, इसका नाम क्या है, फलां-ढिकां। बाकी यह कौन है, कोई पता नहीं।

दोस्ती का मतलब — अनजान की हैसियत से रहने की तैयारी। हम नहीं पूछते कि कौन हो,क्या हो। यह भी हम नहीं जानते कि रात तुम सब सामान घर का उठाकर ले जाओगे। मगर फिर भी हम राजी हैं। और चूंकि हम अनजान के साथ रहने को राजी हैं, इसलिए शिकायत का कोई सवाल नहीं है। शिकायत उठती ही इसलिए है कि हम इस भ्रांति में पड़ते हैं कि हमने जान लिया। हम कहते हैं इन्दीवर, हमें कभी आशा न थी कि रात सामान लेकर घर से भाग जाएंगे। मैं तो उनको जानता था, इतना अच्छा आदमी और रात को उठाकर सामान ले गये। जो यह शिकायत हो रही है न, वह जानने के भ्रम से पैदा हो रही है। अगर मैं यह जानता था तो गलत जानता था। जान सकते नहीं हम किसी को। इसलिए इतना ही हम कहेंगे कि एक आदमी रहता था यहां रात, कभी हमने उसे जाना नहीं, आज रात वह सामान उठाकर ले गया है। यह हम नहीं जानते हैं कि वह क्यों ले गया है और अब भी हम नहीं जानते हैं कि वह वापस ले आयेगा कि नहीं ले आयेगा, और अब भी हम नहीं जानते कि हमारे हित में ले गया है कि अहित में ले गया है, हम कुछ भी नहीं जानते हैं। वह ले गया है सामान। और इसलिए शिकायत भी नहीं है कोई । और क्रोध भी नहीं है कोई।. आदमी-आदमी के बीच की दूरी कम करने की बहुत कोशिश

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

की गयी है, वह सब असफल होती है और दुख लाती है। बाप समझता है अपने बेटे को कि मैं इसे समझता हूं। भूल यही हो गयी उससे। अब यह झंझट में पड़ेगा, क्योंकि इसमें से अननोन निकलेगा, जो उसने कभी नहीं जाना था और तब वह कहेगा तू तो पैदा ही न होता तो अच्छा था और मां सोचती है, इस बेटे को मैं जानती हूं और उसे पता नहीं कि कल यह बेटा किसी और स्त्री को प्रेम करेगा और मां को लात भी मार देगा। तब वह कहेगी कि यह मेरा जाया कैसा है, यह मेरे पेट से कैसे पैदा हुआ है, मैं इसे जानती थी, यह बदल कैसे गया? इसको किसने बदला? यह कुछ भी किसी ने नहीं बदला है। सिर्फ अननोन को तुमने नोन मान लिया था, वह तुम्हारी भूल थी।

और दो आदमी कभी पास नहीं हो सकते, क्योंकि पास सिर्फ पदार्थ हो सकता है क्योंकि पदार्थ में कोई मिस्ट्री नहीं है, जहां मिस्ट्री है वहां पास होना हो ही नहीं सकता। और उपाय ही नहीं है। इसे जो जान लेता है, जो इसे जान लेता है कि पास होने का कोई उपाय ही नहीं, वह बड़े गहरे अर्थों में पास आ जाता है। इसको मान ही लेता है कि पास होने का कोई उपाय नहीं स्वीकार ही कर लेता है कि अनजाने हो और अनजाने ही तुम रहोगे। न मेरी कोई अपेक्षा है, न मेरा कोई बन्धन है, न मेरा कोई हिसाब है। वह अण्डरस्टैंडिंग का प्राब्लम नहीं है। समझ की बात नहीं है। समझ-नासमझी का कोई सवाल ही नहीं है। बल्कि अक्सर तो यह होता है कि समझदार थोड़े ज्यादा दूर हो जाते हैं, नासमझ थोड़े करीब रहते हैं, क्योंकि समझदारी भी फासला बढ़ाती है। इसलिए बच्चे थोड़े ज्यादा करीब होते हैं और बूढ़े और फासले पर होते हैं, क्योंकि बच्चे नासमझ हैं।

हां, अनजान के साथ रहने की हिम्मत जुटानी पड़ेगी। और जानने का भी ख्याल छोड़ दें। कभी यह भी ख्याल में आ जाता है कि जाना कुछ भी नहीं जा सकता है। जीया ही जा सकता है। जानने का कोई उपाय भी है। तब तो दूरी वहीं खत्म हो जाती है। फिर तो सवाल ही नहीं है।

समझने की भूल में जो पड़ा, वह जीना भी चूक जाता है। इसलिए पण्डित, ज्ञानी, फलां, ढिकां; ये चूक जाते हैं। बल्कि जिसको हम पापी कहते हैं, कई दफा वह भी जी लेता है। और जिसको हम पण्डित कहते हैं, वह जी नहीं पाता है। हम क्या जानते हैं? हमारे जानने के साधन इतने लिमिटेड कहना चाहिए, बल्कि ऐसे परवर्टेड हैं कि कुछ भी नहीं कहा जा सकता। हम जिसको जानना कहते हैं, वह जानना कम है, थोपना ज्यादा है।

एक फकीर हुआ, बायजीद। जिस गांव में वह रहता है, उस गांव का राजा उसको बहुत मानता है। बड़ा आदर देता है। लेकिन वह बायजीद कहता है कि तुम मुझे नाहक आदर वगैरह मत दो, क्योंकि जो लोग भी आदर देते हैं वह फिर किसी दिन अनादर भी देते हैं। तो तुम मुझे बचाओ। और वह इसलिए भी कहता है कि वह राजा निरन्तर किसी और फकीर को, कि मैं पहले उसके पास जाता था, वह ऐसा बेईमान निकल गया, वह फलां आदमी फलां औरत के साथ देखा गया है, वह फलां आदमी यह खा रहा था, वह पी रहा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

था। तो बायजीद कहता है कि तू मुझे आदर मत दे; क्योंकि आज नहीं कल, तू मुझे, मेरे स्वस्थ में भी यही बातें कहेगा। लेकिन वह राजा कहता है कि नहीं, आप की तो बात ही और है। आपका तो कोई सवाल ही नहीं है।

एक दिन वह राजा शिकार में गया हुआ है तो उसने देखा कि बायजीद झील के उस तरफ बैठा है एक औरत के साथ। और वह औरत सुराही में से उसको कुछ ढाल रही है। उस राजा ने कहा, अरे, जिसको हमने इतना आदर दिया, वह भी आखिर यही निकला। तो उससे जरा घोड़ा बढ़ाकर नमस्कार तो कर ही लें, ताकि फकीर को पता चल जाये कि उसको पता चल गया है। घोड़ा बढ़ाकर आया। पास आकर उसने कहा कि नमस्कार। फकीर ने उससे कहा कि उतनी दूर से लौट मत जाना, और पास आना। पर उसने कहा, नहीं, कोई आने की जरूरत नहीं, बात ही खत्म हो गयी। उसने कहा कि नहीं इतना जल्दी खत्म न कर, खत्म करने के पहले और थोड़ा पास आ। वह राजा आया। उसने कहा कि क्या समझ रहा है, क्या हो गया? उसने कहा, यह क्या हो रहा है? यह औरत, यह जंगल, यह अकेला, शराब, यह सुराही। उसने उसका बुरका उघाड़ दिया। वह तो बड़ी मुश्किल में पड़ गया राजा, वह उसकी मां थी। फिर उसने वह सुराही उंडेल दी। उसमें सिवाय पानी के और कुछ भी न था। फिर बायजीद ने कहा, तुम जाओ, लेकिन बात अब खत्म हो गयी। अब मेरे पास कभी मत आना। नहीं, राजा ने कहा, मुझे माफ कर दो। उस फकीर ने कहा, अब तक जितने लोग समझते हैं कि हमने दूसरे को बाहर से देखकर पहचान लिया।

सब पहचान ऐसी है। बाहर से देखकर पहचान, यह सब पहचान ऐसी है कि एक औरत, जंगल, शराब—बाहर की पहचान है? हम हैं कौन? यानी मैं यह पूछता हूं कि मैं हूं कौन कि आपको पहचानूं? और मुझे हक किसने दिया है कि मैं पहचानूं, किसने मुझे हक दिया है? कौन-सी जरूरत आ पड़ी कि मैं आपको पहचानूं?

आप आप हैं, इतना काफी है। और आप जैसे हैं, और आपको परमात्मा रहने का हक दे रहा है, मैं काहे के लिए बाधा बनूं। परमात्मा आपको रहने का पूरा हक दे रहा है, श्वास दे रहा है, पानी दे रहा है, सूरज दे रहा है और बिल्कुल फिक्र नहीं कर रहा है कि एक पापी है और मैं नाहक परेशान हो रहा हूं कि एक पापी जो है, फलां है, ढिकां है। तुम तुम हो, कोई कोई है, वह अपनी तरफ से जी रहा है, हमें हक कहां है कि मैं पता करूं।

कुछ कारण हैं उसके। क्यों हम दूसरे के बाबत ऐसा करते हैं? क्योंकि हम खुद नहीं जी पा रहे हैं। जो अपने जीने में तल्लीन है, वह तुम्हारे जीने में बाधा देने न आयेगा। फुरसत कहां है? यानी मैं खुद प्रेम करूं कि तुम्हारे प्रेम का पता लगाऊं। यह आश्चर्य की बात है कि इन्दीवर किसको प्रेम करते हैं, नहीं करते हैं, यह पता लगाऊं कि मैं प्रेम करूं। असल में मैं प्रेम से चूक गया, तब फिर मैं दूसरों के प्रेमों का पता लगा रहा हूं। वह पर्वर्शन है, मैं चूक गया हूं कहीं जिन्दगी से और जहां-जहां मुझे जिन्दगी दिखायी पड़ती है, वहां

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मैं रोष से भर गया हूं, वहीं मैं क्रोध जाहिर कर रहा हूं, वहीं मैं निन्दा कर रहा हूं। अब मेरा एक ही रस रह गया है कि मैं तो चूक गया और ये दूसरे जो नहीं चूक गये हैं, उनको मैं गालियां दूं, उनकी निन्दा करूं, वही मेरा रस है।

कोई कारण ही नहीं है कि हम इसका पता लगायें कि कौन आदमी—इससे कोई मतलब नहीं है। हमारा जीना, अगर सच में ही आनन्दपूर्ण हो, तो हम बाधा देने नहीं जाते। और जानने की भी क्या जरूरत है, कोई भी जरूरत नहीं है। इसलिए जानने वाले जो हैं वह और दूरी पर हैं।

प्रश्न—अस्पष्ट।

वह तो ठीक है, वह अच्छा लगेगा, क्योंकि नया डायमेंशन है सेंसेशन का। असल में अगर दस घण्टे तुम बिल्कुल पत्थर की तरह भी पड़े रह जाओ, तो उसकी भी पीस तो बहुत गहरी है। हलन-चलन बिल्कुल नहीं थी, इसलिए पत्थर की तरह रह गये। लेकिन धीरे-धीरे जब इसको बार-बार रिपीट करोगे और यह रूटीन हो जायेगी और इसका नया सेंसेशन चला जाएगा तब फिर मुश्किल शुरू हो जायेगी। तब तुम फिर कहोगे कि भई, यह तो रूटीन हो गयी जैसे एक सुन्दर स्त्री से शादी—पहले दिन दिवाने रहो और रात भर जागते रहो और बात करते रहो और महीने भर सोये नहीं। और अब वह आज महीने भर बाद वह स्त्री तुम्हें उठा रही है और तुम कह रहे हो, नहीं, नींद आती है। सेंसेशन गया। महीने भर बाद इसका भी चला जायेगा, छः महीने बाद इसका पता चल जायेगा।

असल में जिस चीज को हम सेंसेशन की तरह लेंगे, वह चीज टिकने वाली नहीं होगी। सेंसेशन रिपीटीटिव होगा, वही अनुभव बार-बार होगा। पहली दफे तो बड़ा अद्भुत लगेगा, दूसरी दफा कम; तीसरी दफा कम। छः महीने बाद तुम कहोगे कि या तो इसकी मात्रा बढ़ाओ, वह भी फिर रूटीन हो जायेगी। तो तुम कहोगे और कोई तरह का ड्रग लाओ, फिर वह भी रूटीन हो जायेगा।

यही फर्क है कि मेडिटेशन का जो अनुभव है, वह कभी रूटीन नहीं हो पाता, वह रोज नया है। क्योंकि वह केमिकल इंड्यूज्ड नहीं है, स्पान्टेनिअस है, इसलिए रोज नया है। अब जैसे कि सूरज निकला, यद्यपि रोज निकलता है, लेकिन फिर भी नया है। तुम एक-सा सूरज कभी रोज न पाओगे। लेकिन तुम्हारा बिजली का बल्ब है। तुम रोज इसको जलाते हो, वह रोज वही का वही है। सूरज भी रोज वही निकल रहा है, लेकिन चूंकि वह स्पॉन्टेनिअस है, इंड्यूज्ड नहीं है। कभी बादल लाल है, कभी पीला है, कभी नीला है, कभी नहीं है। कभी सूरज सुर्ख है, कभी नहीं है। कभी सूरज बड़ा शांत मालूम हो रहा है, कभी बिल्कुल पागल हो गया है। वह स्पान्टेनिअस है। उसका कल का कोई भरोसा नहीं कि कल क्या होगा और जरूरी नहीं कि कल निकले भी, न भी निकले। यह भी कोई जरूरी नहीं है। मगर तुम्हारा बल्ब जो है, वह रोज तुम जला लेते हो, बुझा देते हो। वह इन्ड्यूज्ड है और बंधा हुआ है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तो अनुभव भी दो तरह के हैं—एक तो सहज-स्फूर्त है, एक जो इंड्यूज्ड है। इंड्यूज्ड अनुभव जो है, वह आज नहीं कल बासा हो जायेगा और तब तुम तड़फोगे बुरी तरह से,क्योंकि यह जिन्दगी तुमको अच्छी न लगेगी। वह भी अब अच्छी न लगेगी। अब तुम कहोगे और कुछ चाहिए। यह जो पश्चिम में हिप्पीज और इन सबका आकर्षण एकदम महेश योगी और फलां-ढिकां की तरफ ही होता है, वह उसी के बाद होता है। जब वे उससे ऊब गये, अब वह कहते हैं, अब क्या करें? अब किस योगी के पास जायें, वह उस मंदिर में चले जायें, वह कोई तरकीब बता देगा और छह महीने बाद वे इससे भी ऊब जाते हैं कि अगर नहीं कोई मेडिटेशन की स्थिति बनती। तो मेडिटेशन जो है, वह स्पॉन्टेनिअस है, वह रोज नया है। पक्का भरोसा नहीं कि वह कैसा होगा, इसलिए वह कभी बासा नहीं हो सकता। इतना ही बुनियादी फर्क है।

बुनियादी फर्क यही है। और एक अननोन जर्नी है रोज मेडिटेशन में, अननोन जर्नी हो जाती है रोज। तुम जानते हो एक गोली लेंगे, फिर ऐसा होगा, फिर ऐसा होगा,। अब तुम यह सब जानते हो। यह फिल्म देख चुके हो, फिर दुबारा देखने गये हो। अब तुम्हें मालूम है यह सब गड़बड़ चल रही है, कोई हर्जा नहीं। अभी थोड़ी देर में बैण्ड-बाजा बजेगा और शादी होगी, इसलिए कोई चिन्ता की जरूरत नहीं। सो सकते हो। एक दफे देख लो। इसलिए वह जो टेंशन था, वह सब चला गया।

प्रश्न—यह कॉन्शसनेस की अवेयरनेस होती है मेडिटेशन के अन्दर?

हां हां, बिल्कुल अवेयरनेस होगा।

प्रश्न—और वह फिर याद भी रहता है?

कुछ को याद रह जायेगा, कुछ को नहीं रह जायेगा। उसके कई कारण हैं।

प्रश्न—जिसको याद नहीं रहता है, इसका मतलब है कि उसके कॉन्शसनेस में उसका अवेयरनेस नहीं है?

न, ऐसा नहीं है जरूरी। असल में मेमोरी की फंक्शन अगर बन्द हो गयी हो, तो बराबर कान्शस रहेगा, लेकिन याद नहीं होगा। तो सबकी, मेमोरी की फंक्शन की अलग स्थिति है। जैसे एक आदमी सुबह उठकर कहता है कि मुझे कभी सपने आते ही नहीं। ऐसा आदमी मुश्किल है। सपने सबको आते हैं, सिर्फ उसकी मेमोरी फंक्शन नहीं करती है, इसलिए वह सुबह याद नहीं कर पाता। वह कहता है मुझे आता ही नहीं, मैं कैसे मान सकता हूं।

प्रश्न—सबको आना ही चाहिए सपना?

आता ही है। और थोड़ा बहुत नहीं आता, पूरी रात ही आता है। अब तो चूंकि बाहर से भी जांचने के उपाय हो गये, तब यह डिटेक्ट हुआ कि कुछ लोग जो बोल रहे हैं, झूठ नहीं बोल रहे, वे बिल्कुल ठीक बोलते हैं कि हमको आता ही नहीं। उसका कुल कारण इतना है कि उनकी मेमोरी फंक्शन नहीं करती है। मन में तो रिकार्ड नहीं होता वहां। अब

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मैं यहां बोल रहा हूं, मगर इसका यही सबूत है। और यह बन्द है तो फिर कोई सबूत नहीं है कि मैं बोला। मगर मैं बोल सकता हूं इसके फंक्शन के बिना भी। मेमोरी के बिना भी घटना घट सकती है और ऐसे भी मेमोरी के बिना बहुत घटनायें घट रही हैं जो आपको ख्याल में नहीं हैं। किसी की फंक्शन करती है, किसी की नहीं करती है, किसी की बहुत कम करती है। किसी की बहुत आथेंटिक, एक्टिवली करती है।

मेमोरी फंक्शन अलग-अलग हैं। उस वजह से होता है। कोई इतना डीप चला गया कि वहां तक मेमोरी फंक्शन नहीं करती। अब यह बड़ा मजा है, हो सकता है जो डीप गया है, वह कहे कि मुझे कुछ पता नहीं और जो डीप नहीं गया वह कहे मुझे मालूम है। क्योंकि जहां तक वह गया, वहां तक मेमोरी पकड़ पायी। समझ लें कि मैं यहां बोल रहा हूं। इसके इतने पास हूं कि यह पकड़ रहा है। मैं और दूर चला गया, और दूर चला गया, और दूर चला गया, फिर इसने नहीं पकड़ा। तो मेमोरी का जो यंत्र है, अगर उससे गहराई बहुत ज्यादा चली गयी, तो वह नहीं पकड़ पाती है, उससे ट्रेस नहीं बनता है।

प्रश्न—मेमोरी को फंक्शन करने की...

कोई जरूरत ही नहीं है। उससे कोई मतलब नहीं है और कोई प्रयोजन भी नहीं है। वह तो तुम जैसे-जैसे गहरे जाओगे, जैसे गहरे जाओगे, तुम्हारा सारा व्यक्तित्व रूपांतरित होता जायेगा, वही खबर लायेगा।

प्रश्न—अगर कोई आदमी यह दावा करे कि मुझें कभी सपना आता नहीं तो भी समझा और मान लिया कि इसकी मेमोरी नहीं है। वह कहता है सपना नहीं आता, लेकिन जिस दिन सपना देख लिया...

असल में सपना जो है न, बहुत बड़ा मामला है। सपने बहुत तरह के आते हैं। कोई सपने में अगर तीन हिस्से कर दें तो एक सपना तो वह है जो तुम्हारी रिक्वेस्ट डिजायर से पैदा होता है। जो तुमने करना चाहा था और नहीं कर सके। अधिक संख्या इसी तरह के सपनों की है। दूसरा सपना तुम्हारा इस तरह का होता है, जो तुम्हारे करने चाहने से उतना सम्बन्धित नहीं है, लेकिन तम्हारे कुछ अनलिव्ड मूवमेंट रह गये हैं, जिनको तुम पूरा जी नहीं पाये। जैसे तुम खाना खाने बैठे हो और बीच में ही बुला लिए गये। एक अनुभव हो रहा था, वह टूट गया। तुम सड़क पर जा रहे थे, एक सुन्दर स्त्री तुमने देखी, लेकिन तभी पुलिसवाला दिखायी पड़ गया, तुमने मुंह मोड़ लिए। अनलिव्ड रह गया मूवमेंट। एक सुन्दर स्त्री की हल्की-सी तस्वीर रह गयी, जो मन पूरा का पूरा सैच्युरेट नहीं कर पाया। यह सपने में लौट आयेगी। यानी उसको भर नहीं पाया अपने में। वह पूरी नहीं हो पायी। अटकी रह गयी। जी नहीं पाया उसे पूरा। वह अटकी रह गयी। यह लौट आयेगी। और इस तरह के जो अनलिव्ड हैं, सप्रेस्ड हैं, इनका ज्यादा हिस्सा होता है। लेकिन और भी सपने के तल हैं।

ऐसा सपना हो सकता है कि अगर तुम्हारी चेतना बहुत शांत है रात को, भविष्य की

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कोई झलक पकड़ सकेगी। कोई ऐसी झलक पकड़ सकती है जो कि बहुत महत्त्वपूर्ण है और तुम्हारी चेतना उसे पकड़ ले। ऐसे जैसे कि हम यहां बैठे हैं। मैं इधर देख रहा हूं तो मुझे कुछ पता नहीं चल रहा है, लेकिन मैं उधर देखूं, तो मुझे मील भर का हिस्सा दिखायी पड़ जायेगा। तो मुझे दिखायी पड़ जायेगा कि बैलगाड़ी आ रही है। यानी मन की वह भी क्षमता है। यदि वह बहुत शान्त हो तो भविष्य की झलक पकड़ सकेगा। बिल्कुल पकड़ सकता है।

और अगर वह ठीक-ठीक याद रह जाये, वही सवाल ज्यादा बड़ा है, क्योंकि सपने के साथ कई प्रॉब्लम हैं—एक तो बड़ा प्रॉब्लम यह है कि सपने को तुम जिस सीरीज में देखते हो, याद तुम्हें उल्टी सीरीज में करना पड़ता है। बहुत बड़ा प्रॉब्लम है। सपने को जब तुम देखते हो तो जैसे फिल्म तुम देखते हो, पहले से पीछे की तरफ, लेकिन याददाश्त तुम्हारी जो है न, जब तुम सुबह उठते हो तो जो आखिरी सीन है फिल्म का, वह पहला सीन होता है तुम्हारे लिए और तुम जब याद करते हो तो बैकवर्ड—सब कन्फ्यूज्ड हो जाता है। जैसे कोई किताब उल्टी पढ़े। सपना कन्फ्यूज्ड इसलिए हो जाता है। सपने तो कई को आते हैं, जिसमें भविष्य पकड़ जाये, लेकिन यह कन्फ्यूज्ड हो जाता है, जब वह उल्टा याद करना पड़ता है।

दूसरी, सपने के साथ कठिनाई जो है कि वह बहुत जल्दी इवापरेट होता है। तुम जब सोकर उठे तो पांच मिनट के भीतर जो तुम्हें बिल्कुल साफ था, पन्द्रह मिनट के बाद अधूरा साफ रह जायेगा। घण्टे भर के बाद तुम्हें बिल्कुल ही साफ नहीं रह जायेगा। इतनी जल्दी इवापरेट होता है। उसकी जो मेमोरी शेष है, वह बहुत फीकी है। और जैसे ही तुम जागे कि दुनिया का जो काम है, उसका टेन्शन इतना तेज होता है कि वह सब लोप हो जाता है। लेकिन कठिनाई यह है कि सपना एकदम सिम्बल है। लैंग्वेज नहीं है सपना। सपना जो है पिक्टोरियल है, लिंग्विस्टिक नहीं है। तुम्हें यह जानकर हैरानी होगी कि सपने में लैंग्वेज नहीं होती, पिक्चर्स होते हैं।

पिक्चर्स होने की वजह से, और हम सोचते हैं लैंग्वेज में जागकर, तो मीडियम बदल जाता है पूरा का पूरा। जैसे समझ लें, एक आदमी है जो दिन में सोचता है कि मैं राष्ट्रपति कैसे हो जाऊं, खड़ा कैसे हो जाऊं, सबके ऊपर कैसे चढ़ जाऊं, सबके ऊपर कैसे हो जाऊं। यह शब्दों में सोच रहा है। सपने में शब्द नहीं होते, वह चील हो जायेगा और सबके ऊपर उड़ जायेगा। मगर अब यह सिम्बालिक हो गया मामला। तो चील बन गया, और सबके ऊपर उड़ रहा है। सब बिल्ली वगैरह नीचे रह गयी हैं, वह ऊपर उड़ रहा है। तो जितने एम्बीशस लोग हैं, सब उड़ने का सपना देखते हैं।

जैसे नेहरू हैं या—ये सब उड़ने का सपना देख रहे हैं। उड़ना इनका खास सपना होगा। सब पालिटीशियंस का—ऊपर, ऊपर, ऊपर। लेकिन सोचने में तो है नहीं बात। अच्छा तो सुबह उनकी समझ नहीं आता कि चील बनकर उड़ गये, तो क्या बात है। और

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सिम्बालिक होने से बड़ी कठिनाई है। अब उनका हमें कुछ ख्याल ही नहीं होता है कि यह जो देख रहे हैं, इसका क्या मतलब होगा।

एक आदमी सीढ़ियों पर चढ़ा जा रहा है, कन्दरा में घुसा जा रहा है। एक आदमी पानी में बहा जा रहा है, एक आदमी वृक्ष पर चढ़ रहा है। क्या मतलव है इन सबका? ये सब सिम्बल्स हैं जो कि लाखों स्वप्नों में खोज-बीन करने से ही फिक्स्ड नहीं हो पाते। क्योंकि एक-एक आदमी की प्राइवेट लैंग्वेज है। लैंग्वेज जो है, वह तुम्हारी कामन है। लेकिन सपना जो है, वह बिल्कुल प्राइवेट है। प्राइवेट इतना है कि एक ही सपने को दो आदमी एक साथ नहीं देख सकते। इतना प्राइवेट है। ऐसा रखकर बीच में कि हम सब देख लें कि यह रहा सपना, तो वह कलेक्टिव हो जाये। तो सिम्बल हम इकट्ठा बना लेते हैं। तुमने अपना बनाया है, मैंने अपना बनाया है, इसने अपना बनाया है। इसलिए बड़ी कठिनाई है। और इसलिए तुम्हें याद करने में, इन्टरप्रीट करने में बड़ा मुश्किल होता है। इसलिए पक्का नहीं हो पाता।

और एक तरह के वे सपने हैं, जो कि तुम्हारे पिछले जन्मों से सम्बन्धित होते हैं, वह और मुश्किल मामला है। प्रीवियस बर्थ से बहुत से सपने सम्बन्धित हैं। इसलिए है बहुत उलझाव। इधर मेरा ख्याल है कि सपने पर ही एक पूरी सीरीज रखेंगे तो पूरी बात कर सकेंगे। असल में कोई भी मामला छोटा नहीं है, इसलिए तकलीफ है।

प्रश्न—एक दो मिनट और ले लूं—समझो कि अभी मैं रेसकोर्स के मैदान में नहीं हूं, फिर भी कल मैंने रात सपना देख लिया कि चौथे रेस में सात नम्बर का घोड़ा जीत आया। कल रेस होगी तो चौथी रेस में सात नम्बर का घोड़ा जीत जायेगा तो इस स्वप्न का सत्य होने का सम्बन्ध कैसे होगा?

बहुत कारण हो सकते हैं। कभी तो यह सिर्फ सांयोगिक हो सकता है—कभी। कभी तो बिल्कुल सही हो सकता है— कभी। तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं है रेसकोर्स से, लेकिन तुम्हारे आस-पास, तुम्हारे निकट सम्बन्धियों में, तुम्हारे मित्रों में, परिचितों में किसी इंटिमेट का सम्बन्ध तुमसे है, उसका रेसकोर्स से सम्बन्ध है। और वह पूरे वक्त सोच रहा है, सोच रहा है, सोच रहा है, तो उसका थॉट तुम तक प्रॉजेक्ट हो सकता है। इंटिमेसी के रास्ते हैं अन्दर, तो थॉट प्रॉजेक्ट हो सकता है। तुम पकड़ लो, वह न पकड़ पाये। और उसका कारण है, वह क्यों न पकड़ पाये, क्योंकि वह तो टेंस है और तुम टेंस नहीं हो, तुम तो रिलेक्स्ड हो। लेकिन तुम कनेक्टेड हो उस आदमी से तो पकड़ ले सकते हो। वह सम्भव हो सकता है। मन के तो बहुत उलझाव हैं और मन की बड़ी मिस्ट्रीज़ भी हैं और उसका साइंस भी थोड़ा-थोड़ा बनता है, थोड़ा साइंस भी है।

बम्बई, दिनांक १७ अप्रैल १९७०

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

७. ध्यानः अविधि

मित्र पूछ रहे हैं कि कहा जाता है कि अरविन्द को शून्य का, वैक्यूम का अनुभव हुआ। क्या वह सत्य की खोज थी?

अरविन्द के सम्बन्ध में पूछना ही फिजूल है। जब भी हम दूसरे के सम्बन्ध में पूछते हैं कि उसे जो शून्य हुआ, वह क्या था, तब हम अपने को ज्यादा से ज्यादा शब्दों से ही भर सकेंगे। अरविन्द भी एक शब्द बनेगा और अरविन्द का शून्य भी एक शब्द बनेगा और उन्हें मिला या नहीं मिला, ये भी शब्द बनेंगे। न, दूसरे के सम्बन्ध में हम शब्द से कभी मुक्त ही नहीं हो सकते। दूसरे के सम्बन्ध में शब्द अनिवार्य है। सिर्फ अपने सम्बन्ध में हम शब्द से मुक्त हो सकते हैं। तो फिक्र इसकी न करें कि अरविन्द को क्या हुआ, क्या नहीं हुआ। फिक्र इसकी करें कि आपको क्या हो सकता है। और अगर मैं कहूं कि अरविन्द को हुआ, तो आप किसी दूसरे से पूछेंगे कि मैंने ऐसा अरविन्द के सम्बन्ध में कहा, वह सही है या गलत? किसी से भी पूछेंगे। इसका अन्त कहां होगा? इन्फिनिट रिग्रेस है, जो हम पूछते चले जाते हैं।

मैंने सुना है, एक आदमी एक गांव में जाने को है और उसने पूछा है कि 'अ' नाम का आदमी कहां रहता है? तो किसी ने कहा कि 'ब' नाम के आदमी के पड़ोस में रहता है। उसने कहा, मुश्किल में मत डालो मुझको। यह 'ब' नाम का आदमी कहां रहता है? वह 'स' नाम के आदमी के पड़ोस में रहता है। लेकिन मुझे 'स' आदमी का कोई पता नहीं है।

अरविन्द के सम्बन्ध में पूछेंगे कुछ मुझसे—अरविन्द भी दूसरे, मैं भी दूसरा। दोनों आपके लिए बेकार— अरविन्द भी, मैं भी। दूसरे होने की वजह से बेकार। असली सवाल सत्य की खोज का सदा अपने से है। मैं वैक्यूम में हो पाता हूं या नहीं—यह सवाल महत्त्वपूर्ण है? और इतना जरूर कहूंगा कि जिस दिन आप शून्य में हो पायेंगे, उस दिन आप ही देख पायेंगे कि कौन-कौन शून्य में हो गया। तब आप कभी न पूछेंगे कि कौन हुआ, कौन नहीं हुआ? लेकिन जब तक आप नहीं हुए हैं, कोई दूसरा दावा करे कि हो गया, कोई दूसरे के सम्बन्ध में कहे कि नहीं हो गया, इससे क्या होगा? बातचीत हो जायेगी। इससे कोई अर्थ नहीं है।

बचें, यही तो मैंने कहा, गुरुओं से बचें। अरविन्द को मैं कहूं, हो गया, तो आप कहेंगे, चलो, अरविन्द को गुरु बना लें। अगर कहूं कि नहीं हुआ तो कहेंगे कि चलो मुझको ही बना लें। यह हमारी गुरु की तलाश है। हम पता लगाते हैं, बुद्ध को ज्ञान हुआ? अगर हुआ हो तो चलो उनके पैर पकड़ लें। महावीर तीर्थंकर असली थे कि नकली? चलो उनके पैर पकड़ लें, अगर पक्का हो जाये। लेकिन कैसे पक्का होगा? कौन करेगा पक्का?

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

और जरूरत क्या है पक्का करने की? इसलिए मैं कह यह रहा हूं कि दूसरे से बचना, नहीं तो अरविन्द अथॉर्टी बन जायेंगे, बैठकर उनकी किताबें आप पढ़ेंगे, और क्या करेंगे?

अरविन्द को मानने वाला उनकी किताबें बैठकर पढ़ रहा है; बैठा है, माताजी का आशीर्वाद मिल जायेगा तो सब हो जायेगा। यह सब अन्धों की दुनिया पैदा हो गयी है। गुरु जो हैं, वे अन्धों की दुनिया के राजा हैं। वह अन्धों की दुनिया उनसे पैदा होती है। नहीं, कोई की फिक्र न करें, क्योंकि फिक्र की जरूरत नहीं है। कोई अथॉर्टी बनानी है? कोई आप्त बनाना है? शून्य में जाना है, आप चले जायें? यह बड़े मजे की बात है कि जहां हमें जाना होता है, वहां हम कभी नहीं पूछते यह सवाल।

जैसे मुझे कोई नहीं आकर पूछता कि मजनू का प्रेम सच था? वह अपने प्रेम में चला जाता है। हम पूछते नहीं। फरहाद का प्रेम सच था? कोई नहीं पूछता। वह खुद ही चला जाता है। प्रेम में हम खुद चले जाते हैं, तो हम कभी नहीं पूछते कि किसका सच, किसका झूठ? सत्य में हम स्वयं नहीं जाते, इसलिए हम सदा पूछते रहते हैं, किसका सच, किसका झूठ; किसको मिला, किसको नहीं मिला? एक ही बात ध्यान रखें, जब तक आपको नहीं मिला, तब तक किसी को नहीं मिला। और जिस दिन आपको मिल गया, उस दिन सबको मिल गया। कोई प्रयोजन नहीं। इररिलेवेंट है, अरविन्द या मैं या कोई भी। आपसे कुछ लेना देना नहीं है। ये फिजूल के लोग हैं, इनसे बचना चाहिए। जहां गुरु दिखायी पड़े वहां से एकदम भाग खड़े होना चाहिए। वहां से उस तरफ कभी जाना नहीं चाहिए गुरु की तरफ। क्योंकि वह अनिवार्य रूप से दूसरे में आपको उलझा देता है और दूसरे से बचना सत्य की खोज का अनिवार्य हिस्सा है।

प्रश्न—शून्य में जाने की विधि क्या है?

शून्य में जाने की विधि नहीं हो सकती और विधि से जाइएगा, तो कम से कम विधि तो साथ रह ही जायेगी। शून्य न हो पायेगा, क्योंकि फिर विधि को कैसे छोड़ियेगा। फिर विधि को छोड़ने की विधि पूछियेगा? अब यह विधि पकड़ ली, अब इसको कैसे छोड़ें। ऐसा हो जाता है। कोई कहता है राम-राम-राम जपो। इससे शून्य में चले जाओगे। राम-राम जप पकड़ जाता है। अब वह कहता है, यह राम-राम को कैसे छोड़ें! अब इसकी कोई विधि चाहिए। असल में एक विधि को छुड़ाने के लिए फिर दूसरी, दूसरी को तीसरी। नहीं, इस चक्कर में पड़िये मत। शून्य में जाने की विधि मत बनाइए। फिर आप कहेंगे, लेकिन हम कैसे जायें। शून्य में जाने की विधि न बनायेंगे तो हम तो बिना विधि के कहीं जा ही नहीं सकते। वह तो अच्छा हुआ कि हमको श्वास लेने की, लेते रहते हैं बचपन से, इसलिए विधि नहीं पूछते।

मैंने सुना है एक सेंटीपीड था, सौ पैर वाला एक जानवर था। वह जा रहा था एक रास्ते से। एक मकोड़े ने देखा, वह बहुत हैरान हुआ कि सौ पैर! किस विधि से उठाता होगा, पहले कौन-सा उठाता होगा, दूसरा कैसे उठाता होगा? मर गया, वह बहुत घबड़ाया।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उसने कहा, कितना गणितज्ञ होगा, यह सेंटीपीड। सौ पैरों का हिसाब रखना कि कब कौन-सा उठाना और चलना, हिसाब भी रखना! चार पैर में भी दिक्कत हुई जाती है। उसने कहा, सुन भाई रुक। जरा इतना तो बता जा, किस विधि से चलता है? दो पैर कैसे उठाता है। पहले कौन-सा,दूसरा कब, तीसरा कब? गड़बड़ा नहीं जाता।

उस सेंटीपीड ने कहा, मैंने कभी ख्याल नहीं किया। मैं ख्याल करता हूं। उसने ख्याल किया, वह गिर पड़ा। घबड़ा गया, सौ पैर, कौन सा पैर आगे, पीछे? उसने कहा कि मूर्ख मकोड़े, अब किसी सेंटीपीड से ऐसा सवाल मत पूछना। जानते ही मुसीबत आ गयी। अभी तक चलते चले जाते थे बिना विधि के। शून्य की विधि नहीं है। सिर्फ शब्द की व्यर्थता को समझ लें, विचार की व्यर्थता को समझ लें। उस व्यर्थता का परिणाम सहज रूप से शून्य बनता है।

यहां हम बैठे हैं, मकान में आग लग गयी, और मैं यह कहता हूं, मकान में आग लग गयी और लपटें आपको दिखायी पड़ती हैं, फिर कोई यहां नहीं पूछेगा कि बाहर निकलने की विधि क्या है? आप पायेंगे कि बिना विधि के लोग निकले जा रहे हैं। सब शिष्टाचार को छोड़कर किसी स्त्री को धक्का लग रहा है कि नहीं लग रहा है कि अपनी पत्नी साथ है कि नहीं, धर्मपत्नी , इस वक्त। विधि को सब छोड़कर बिल्कुल बिना विधि के लोग बाहर निकले जा रहे हैं। जहां दरवाजे हैं वहां से। और जहां दरवाजे नहीं हैं वहां छोड़कर सब तरफ से निकले जा रहे हैं। क्या हो गया है? लपट का दिखायी पड़ जाना, निकलने की विधि बन जाती है। शब्द की व्यर्थता दिखायी पड़े, शास्त्र की व्यर्थता दिखायी पड़े, बाहर की व्यर्थता दिखायी पड़े, यह है सवाल असल में। अगर यह एक्चुअली दिखायी पड़ जाये, शब्द, बातचीत सिद्धान्त, शास्त्र, बेकार है, व्यर्थ है। अगर यह दिखाई पड़ जाये।

यह चौबीस घण्टे शब्दों में ही, विचारों में ही जीना व्यर्थ है। यह व्यर्थता जितनी तीव्रता से दिखायी पड़ जाये, आप अचानक पायेंगे कि आप बाहर हो गये। और यह बाहर होना बिना विधि के, बिना मैथड के हो जायेगा। और अगर विधि से बाहर हुए तो आप एक बहुत चक्कर में पड़ेंगे। क्योंकि विधि से कभी भी अन्त नहीं आता है उसका—फिर दूसरी विधि, फिर तीसरी विधि और चलता रहता है। नहीं, विधि से नहीं होगा, शून्य में जाना है तो विधि से नहीं होगा।

इसलिए निगेटिव मैथड कहना चाहिए, जो मैं कर रहा हूं। पत्नी के पास बैठे होंगे समुद्र के तट पर, मित्र के साथ, या प्रेयसी के साथ या अकेले। अगर वहां तट पर बैठकर आपको ऐसा लगता है कि क्या अर्थ है यहां सोचने का? सागर है, आकाश है। कोई नहीं सोचता, न सागर सोचता, न आकाश सोचता है। न वृक्ष सोचते हैं, न हवाएं सोचती हैं, कोई भी नहीं सोचता। मैं भी बिना सोचे ही पड़ा रहूं। बहुत तो सोचता हूं चौबीस घण्टे। सोचने से सिवाय सिर्फ थकाने के कहीं पहुंचता नहीं। पड़ा रहूं। तो आप ठीक कह रहे हैं कि ऊपर से तो मौन हो जाते हैं, लेकिन भीतर चलता रहता है। चलने दें। मैंने कहा,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मूमेंटम है। जैसे एक साईकल को चलाता है एक आदमी और उससे हम कहते हैं, रुक जाओ पैडल रोक देता है। वह कहता है, पैडल तो रुक गया, लेकिन चले चल रहे हैं। तो अभी चक्के चलेंगे न! दो मील से आप चलते आ रहे हैं, तो पैडल रोक देने से भी थोड़ी देर चक्के चलेंगे। लेकिन अब यह मानकर जब विना पैडल चलाये चक्के चल रहे हैं तो फिर पैडल चलाये ही जाओ, फिर पैडल चलाना शुरू कर देते हैं। नहीं, तट पर पड़े हैं, घर पर पड़े हैं, बिस्तर में रात सो गये हैं, अन्धेरा है, सुखद है, रेशम की तरह चारों तरफ से घेरे है,चुप हो जायें। भीतर विचार चलेंगे क्योंकि दिन भर चले हैं तो उनका मूमेंटम है। जिन्दगी भर चले हैं। जो जानते हैं, वे कहेंगे जन्मों से चले हैं, जन्मों-जन्मों से उनका मूमेंटम भारी है। वह चलने दें, लेकिन आप पैडल न मारे। भीतर जो विचार है, उनको आप पैडल भी मारते हैं।

एक विचार आता है, आप तत्काल दूसरे को उस पर ले जाते हैं, तीसरे पर ले जाते हैं, चौथे पर ले जाते हैं। आप कहें, जितना अपने से चलना हो चलो, हम पैडल नहीं मारते हैं। हम जरा चुपचाप पड़े हैं। आप पड़े रहें इसलिए मैंने कहा, कुछ कह नहीं सकता, कब हो जायेगा। किसी दिन आप अचानक पायेंगे कि कोई क्षण है, जब कोई विचार नहीं है, खाली रह गया आकाश। उस खाली आकाश में जब आपको आनन्द की प्रतीति होगी, तो आनन्द की प्रतीति विधि बन जायेगी। फिर आपके लिए। फिर आपका मन खुद ही उस आनन्द की तरफ बहने लगेगा।

मन का नियम यह है कि वह आनन्द की तरफ बहता है। अभी मैं यहां बोलता हूं और कोई पास के बगीचे में सितार बजाने लगे तो आपका मन किस विधि से उसके सितार को सुनने पहुंच जाता है, कभी ख्याल किया है आपने? इधर मैं बोल रहा हूं, खत्म हो गया मेरा बोलना। मैं बोलता रहूंगा, आपका सुनायी पड़ना यहां बन्द हो गया। आप अचानक गये, आप यहां नहीं हैं। सितार बजने लगा है बाहर। वह सितार ने आपके मन को पकड़ लिया है। आपका मन गया बाहर। मन आनन्द की तरफ बहा चला जाता है अपने आप, विना किसी विधि के जैसे नदियां सागर की तरफ बहती हैं विना किसी नक्शे को हाथ में लिए, ऐसे मन आनन्द की तरफ बहता है।

कभी जब अनायास वह क्षण जब आप में घटित हो जायेगा, चलते-चलते, रुकते-रुकते किसी दिन आपको आनन्द की प्रतीति होगी, सत्य की थोड़ी-सी झलक भी मिल जायेगी तो फिर मन लौट-लौटकर वहां जाने लगेगा। अपने आप जब भी आप खाली होंगे, चुप हो जायेंगे—विधि नहीं है।

लेकिन हमारा मन चूंकि बिना विधि के कुछ भी नहीं करता, पूछते हैं विधि, इसलिए हमारा शोषण करने वाले लोग पैदा हो जाते हैं। वे कहते हैं, आओ, हम देते हैं विधि। लो साढ़े तीन रुपये में मन्त्र ले लो। कान फूंक देते हैं, अब और किसी से मत लेना, यह पक्की हमने विधि दे दी। इस पर तुम चलते रहो। सारी दुनिया के आदमी को हर तरह के

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शोषण है। और आध्यात्मिक शोषण सबसे बड़ा शोषण है। गुरु कर रहे हैं उसको सब तरफ। अब इस वक्त पश्चिम में बहुत अशान्ति है तो वह विधि चाहते हैं। इसलिए पूरब के जितने उपद्रवी हैं, वे सब पश्चिम जा रहे हैं। वे वहां लोगों को विधि दे रहे हैं। वे उनको इकट्ठा करके बता रहे हैं कि तुमको मन्त्र दिये दे रहे हैं। यह कंठी लो हाथ में, यह माला जपते रहो। हमारा शोषण हो जाता है, क्योंकि हमें ख्याल नहीं है कि मामला विधि का नहीं है।

अंतिम बात आपसे कह दूं, फिर हम उठें। विधि से कभी भी विधि से, बड़ी चीज नहीं मिल सकती। और परमात्मा इतना बड़ा है कि हमारी कौन-सी विधि से मिल सकेगा। आप दो पैसे से खरीदने जायेंगे तो दो पैसे की चीज मिल सकती हैं। परमात्मा को आप खरीद नहीं सकते हैं, क्योंकि कितने पैसे से आप खरीदेंगे? आपको पहाड़ पर चढ़ना है। तो सीढ़ियां बनायी जा सकती हैं। लेकिन जितनी बड़ी सीढ़ियां होंगी, उतने बड़े पहाड़ पर पहुंचा देंगी। अब परमात्मा के अन्तहीन इस शिखर पर चढ़ने के लिए कैसे सीढ़ियां बनाइयेगा? यहां तो मेथडलेसली....यहां तो बिना विधि के जो कूदने के लिए तैयार हैं, वे ही इस अनन्त में और अनादि में प्रवेश कर पाते हैं। अन्यथा लोग बैठे हुए विधि का हिसाब करते हुए रह जाते हैं।

एक छोटी-सी कहानी से मैं आपको समझाऊं। सुना है मैंने, एक सम्राट का वजीर मर गया। बड़ा था वजीर। उस राज्य का नियम था कि जब भी कोई बड़ा वजीर मर जाये तो सारे राज्य में चुनाव किये जायें, परीक्षायें की जायें, श्रेष्ठतम बुद्धिमान आदमी खोजा जाये। परीक्षायें की गयीं, तीन आदमी खोजे गये। वे राजधानी लाये गये, अन्तिम परीक्षा के लिए। अन्तिम परीक्षा, तीनों रात भर परेशान होने चाहिए थे। लेकिन एक चादर ओढ़कर एकदम सो गया। दूसरे ने कहा, यह आदमी क्या ड्राप कर गया? क्या हुआ? इसको परीक्षा नहीं देनी है? तैयारी नहीं करनी है? और कल परीक्षा क्या होगी, अनजान थी परीक्षा। कुछ खबर नहीं थी। पर गांव भर में खबर थी। हर आदमी कह रहा था कि परीक्षा तय है, तो गांव में गया, तो पता चल गया। पूरे गांव में चर्चा थी कि परीक्षा यह है। राजा ने एक कमरा बनाया है और उसमें एक अद्‌भुत ताला लगाया है और ताला एक मैथमेटिकल पजल है। वह पजल उस पर खुदी हुई है। जो उसको हल कर लेगा, वह ताला खोल लेगा। इन तीनों को कल बन्द किया जायेगा। जो ताला खोलकर बाहर आ जायेगा, वह जीत जायेगा, वह वजीर हो जायेगा।

वे दोनों भागे, न तो वे चोर थे कि ताला खोलना जानते हों, न गणितज्ञ थे कि गणित जानते हों। न पहेलियां हल करने के शौकीन थे, बड़ी मुश्किल में पड़ गये। गांव भर में जो गणित जानता था उसके पास गये, जो ताले खोलता था उसके पास गये। इंजीनियर के पास गये, कई किताबें लाये। रात भर उन्होंने कहा, अब जिन्दगी भर का मामला है, रात सोओ मत। रात भर जागे, सब पढ़ा लिखा। सांझ से भी हालत सुबह तक बुरी हो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गयी। जैसे कि परीक्षार्थियों की हो जाती है। सांझ को दो और दो चार बता सकते थे, सुबह आप उनसे पूछो दो और दो चार, तो उन्हें कुछ सूझता ही न था कि आप पूछ क्या रहे हैं? जवाब तो बहुत दूर है। पहले प्रश्न ही समझ में आना मुश्किल हो गया है। लेकिन वह एक आदमी रात भर सोया रहा। वे दोनों खुश हुए कि अच्छा हुआ, कम से कम एक तो खत्म हुआ? अब दो ही प्रतियोगी बचे। लेकिन जब वे सुबह थके-मांदे थे, तब वह भी उठा गीत गाता हुआ, स्नान किया। उन्होंने तो स्नान भी नहीं किया। उन्होंने कहा, अब आज तो सब छोड़ो। वे दोनों चले, वह भी पीछे गीत गाता चला। दोनों ने सोचा, यह पागल, किसलिए आ रहा है, कुछ तैयारी तो की नहीं। गये तीनों।

सच थी अफवाह। दरवाजे के भीतर सम्राट ने किया और कहा, यह है पहेली का ताला, इसे खोलकर जो बाहर आ जाये, इसकी कोई चाबी नहीं है। यह पहेली जो है, बस यही चाबी है। जो बाहर आ जाये वह जीत गया। अब तुम भीतर जाओ, मैं बाहर जाता हूं। दरवाजा लगाया, राजा बाहर हो गया। वह तीसरा आदमी जो रातभर सोया रहा, फिर एक कोने में आंख बन्द करके बैठ गया। उन्होंने कहा, यह आदमी क्या है? लेकिन उन्होंने कहा, इसकी फिक्र छोड़ो। फ़ुर्सत किसे है इसकी फिक्र की। वे अपनी किताबें छिपा लाये थे अपने कपड़ों के अन्दर। कोई आजकल के विद्यार्थी चोर हैं, ऐसा नहीं, विद्यार्थी सदा से चोर हैं। क्योंकि जहां ज्ञान स्मृति से समझा जाता हो, वहां चोरी अनिवार्य है। चोरी कई तरह की हो सकती है। वे बेचारे ले आये थे छिपाकर, जल्दी हिसाब-किताब लगाने बैठे। लग गये अपनी मुश्किल में, पसीना चुआ जा रहा है, हिसाब कुछ सूझता नहीं है। तभी अचानक राजा भीतर आया और उसने कहा कि बन्द करो हिसाब-किताब। जिसको निकलना था, वह निकल चुका। उन्होंने कहा, कौन निकल चुका। हम दोनों तो यहीं हैं। कहा, वह तीसरा आदमी निकल चुका। देखा कोना खाली है। वह आदमी नदारद है। राजा ने कहा, वह बाहर है। उन दोनों ने कहा कि वह निकला कैसे, क्योंकि हिसाब तो उसने कुछ किया नहीं। राजा ने कहा, हिसाब का सवाल न था, ताला लगा ही नहीं था। दरवाजा अटका था। दरवाजा सिर्फ अटका था।

और बुद्धिमान आदमी का पहला लक्षण यह है कि पहले वह यह देख ले, सवाल भी है या नहीं, और जवाब खोजने में लग जाये, तो मुश्किल में पड़ जाता है। वह निकल गया बाहर। उस आदमी से पूछा कि तुझे क्या हुआ? उसने कहा, रात को जिस परीक्षा का अपने को पता ही नहीं, उसकी तैयारी करनी खतरनाक है, क्योंकि कहीं तैयारी से न मालूम क्या-क्या हो जाये, तो उसके लिए तो अनप्रिपेयर होना ही अच्छा है, प्रिपेयर होना खतरनाक है, जिसका अपने को कुछ पता ही नहीं। तो मैं अनप्रिपेयर्ड आया, रात भर मैंने कहा कि बिल्कुल अनप्रिपेयर्ड हो जाओ। जो पहले की तैयारी है, वह भी भूल जाओ। ताकि सुबह कम से कम खाली, साफ-सुथरा तो खड़ा हो जाऊं कि क्या है।

जब इस कमरे में आकर बैठा तो मैंने कहा कि ताले तो अपने-बाप-दादों ने कभी नहीं

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

खोले। अगर वे खोल ही लेते तो राजा हो जाते, उनका बेटा वजीर क्यों होता। अपना तो काम नहीं है यह, लेकिन अब आंख बन्द करके बैठ जायें। सूझ जाये तो खोला जाये। आंख बन्द करके बैठा, तब मुझे ख्याल आया कि पहले यह तो देख लें कि ताला लगा भी है कि नहीं। मैं गया और ताला खोलकर बाहर निकल गया। ताला तो लगा नहीं था, दरवाजा अटका था।

परमात्मा का दरवाजा भी लगा हुआ दरवाजा नहीं है कि यहां कोई विधि की और चावी की जरूरत हो, बिल्कुल अटका है मगर आप अपनी किताब खोले बैठे हैं कि किस विधि से निकलें! और उधर परमात्मा उस तरफ प्रतीक्षा कर रहा है कि छोड़ो किताब आ जाओ, बिना विधि के चलेगा।

जिन्दगी में जो भी महत्वपूर्ण है वह सब बिना विधि के ही होता है। न प्रेम विधि से होता है, न सत्य विधि से होता है, न काव्य विधि से होता है, न संगीत विधि से होता है। जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है, विधि के बाहर है। और जीवन में जो भी क्षुद्र है, विधि के भीतर है। इसलिए विधि से पाना हो, तो क्षुद्र मिलेगा, और बिना विधि के कूदने की क्षमता हो, तो विराट मिल सकता है।

बम्बई, दिनांक २४ मई १९७०

शीघ्र प्रकाशित होने वाली ओशो की महत्त्वपूर्ण पुस्तकें

प्रेम रंग-रस ओढ़ चदरिया
का सौवे दिन रैन
राम दुवारे जो मरे
अरी, मैं तो नाम के रंग छकी
झरत दसहुं, दिस मोती
मन मधुकर खेलत वसंत
अजहूं चेत गंवार
अवसर बीता जाए
सन्तो मगन भया मन मेरा
समाधि की सुराही
ज्योति से ज्योति जले
समाधि के नृत्य गीत
अथातो भक्ति जिज्ञासा
भक्तिः परम क्रान्ति
भक्तिः ध्यान की मधुशाला
भक्तिः विराट से मैत्री

डायमण्ड पाकेट बुक्स प्रा. लि: X-30 ओखला, फेज-II नई दिल्ली-110020

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

OSHO BOOKS
PUBLISHED BY
DIAMOND POCKET BOOKS

Bauls : The Dancing Mystics	15.00
Bauls : The Seekers of the Path	15.00
Bauls : The Mystics of Celebration	15.00
Bauls : The. Singing Mystics	15.00
Eternal Celebration	
The Greatest Gamble	15.00
Here & Now	15.00
Towards the Unknown	15.00
A Song Without Words	15.00
Inner Harmony	15.00
Sing, Dance, Rejoice	15.00
Secret of Disciplehood	15.00
Freedom from the Mind	15.00
Life A Song, A Dance	15.00
Laughter is my Message	
Meeting the Ultimate	15.00
A Taste of the Divine	15.00
One Earth One Humanity	15.00
The Master is a Mirror	15.00
Rising in Love	15.00
The Forgotten Language of the Heart	15.00
The Alchemy of Enlightenment	15.00
From Ignorance to Innocence	15.00
The Mystery Beyond Mind	12.00
The Centre of the Cyclone	12.00
Be Oceanic	15.00
Ecstasy : The Languge of Existence	15.00
Fly Without Wings	15.00
Vedanta : An Art of Dying	15.00
Vedanta : The First Star in The Evening	15.00
Vedanta : The Supreme Knowledge	15.00
Vedanta : The Ultimate Truth	15.00
On War & Peace	15.00
Meditation The Ultimate Adventure	15.00
Love and Meditation	15.00
Be Silent & know	15.00
Turning in	15.00
Tantra Vision : The Secret of The Inner Experience	15.00
Tantra Vision : An invitation of Silence	15.00
Tantra Vision : Beyond The Barriers of Wisdom	15.00
Tantra Vision : The Door to Nirvana	15.00

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुस्तक समीक्षा

एक ओंकार सतनाम

एक ओंकार सतनाम, नानक वाणी पर ओशो की यह प्रवचनमाला एक अनूठी पुस्तक है। ओशो ने गुरु नानक देव जी के उपदेशों को, जो आज के हिंसा के माहौल में भुला दिये गए हैं, उन्हें पुनर्जीवित करके हमारे देश और समूची मानवता के सामने रखा है।

गुरु नानक के ये उपदेश केवल पूजा पाठ तथा अन्य धार्मिक अनुष्ठानों के लिए ही नही हैं। ये तो जीवन को रूपांतरित करके ध्यान, प्रेम, अहिंसा और शांति के पथ पर चलने के लिए हैं।

आज पंजाब ही नहीं, भारत और पूरा विश्व ही गुरु नानक की शिक्षा को भुला बैठा है। जगह-जगह पर होने वाले साम्प्रदायिक दंगों, जगह-जगह भडक उठने वाली हिंसा राजनैतिक शक्तियों का आपस में टकराव जिसके परिणाम स्वरूप होने वाला नरसंहार इस बात की ओर स्पष्ट संकेत करता है कि आज के मानव के लिए गुरु नानक की अहिंसा, सद्भावना और प्रेम की शिक्षा कितनी आवश्यक है।

ओशो ने जिस सरल और सुबोध भाषा में गुरु नानक की वाणी जपुजी साहब की इतनी सटीक व्याख्या प्रस्तुत करके आज की पीडित मानवता को सुख, शांति, अहिंसा, प्रेम और आपसी भाई चारे की नयी राह दिखाई है।

एक ओंकार सतनाम, लेखक-ओशो, प्रकाशक-डायमंड पाकेट बुक्स (प्रा.) लि. नयी दिल्ली, पृष्ठ 439, मूल्य 80 रुपये।

■ सोमदत्त शर्मा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुस्तक समीक्षा

मैं मृत्यु सिखाता हूं

केवल जीवन की पूजा करने वाले, सुख सुविधाओं की कामना करने वाले मृत्यु को जीवन का दुश्मन समझकर उसके विरोध मे बोलते हैं और यथा संभव मौत को अपने से दूर रखने की कोशिश करते हैं। लेकिन ओशो कहते हैं- "मै मृत्यु सिखाता हूं, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि मै जीवन का विरोधी हूं।" ओशो के लिए जीवन और मृत्यु एक ही सिक्के के दो पहलू है, एक ही तराजू के दो पलड़े हैं। मृत्यु के भय से त्रस्त लोगों के भाग भागकर जीवन के पलड़े में ही घुसने और उसी में सवार रहने की कोशिश करना अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया है, जिसमे जीवन का पलडा भारी हो गया और सन्तुलन बिगड़ गया।

मृत्यु से बचने के लिए मनुष्य ने क्या-क्या अपराध नही कियें। स्वंय को जीवित रखने के लिए ही तानाशाहों ने हजारो लाखों लोगों को मौत के घाट उतार दिया, लाखों को अमानवीय यातनाएं दीं, लेकिन अपने आपको मौत से वे फिर भी न बचा सकें।

मृत्यु के यदि इसी रहस्य को मनुष्य समझ ले तो जीवन आसान सहज हो जाए। जीवन के मोह से यदि चिपकना कम हो जाए तो अपराध भी कम हों। यदि आप मृत्यु का रहस्य जान लें तो आप भी उसी अवस्था में होंगे जहां सिद्ध लोग होते हैं। इसलिए जब ओशो कहते हैं कि मै मृत्यु सिखाता हू तो मै समझता हू कि यही सच्चा जीवन-दर्शन है। यदि जीवन को सहज, आनंद, मुक्ति और प्रेम के साथ जीना है तो उसके लिए मृत्यु के रहस्य को जानना आवश्यक है। यह पुस्तक आपको जीवन और मृत्युं का रहस्य सिखाने के लिए ओशों की एक अनुपम रचना है

मैं मृत्यु सिखाता हूं। लेखक-ओशो। प्रकाशक-डायमंड पाकेट बुक्स (प्रा.)लि. नयी दिल्ली, पृष्ठ 343, मूल्य 60/-

■ सोमदत्त शर्मा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

डायमंड पाकेट बुक्स में ओशो का अलौकिक साहित्य

संभोग से समाधि की ओर-1
संभोग से समाधि की ओर-2
संभोग से समाधि की ओर-3
संभोग से समाधि की ओर-4
रजनीश ध्यान योग
दुख के पार, जीवन-अमृत
मौलिक क्रान्ति
मौन संगीत
सत्य की पहली किरण
सुमिरन मेरा हरि करैं
उड़ियो पंख पसार, पाथेय
शून्य का दर्शन
अमृत की दिशा
सम्भावनाओं की आहट
सहज जीवन के स्वर
सहज जीवन के सूत्र
जीवित मन्दिर
जीवन क्रान्ति
चेति सकै तो चेति
मिट्टी के दीये
साधना सूत्र-1,
हेरत हेरत हे सखी
साधना सूत्र-2
आत्मा का कमल
साधना सूत्र-3, हृदय संगीत
आत्मपूजा उपनिषद
मुक्ति बोध
ध्यान और प्रेम
ध्यान की कला
हसिबा खेलिबा धरिबा ध्यानम
कहा कहूँ उस देस की
राम खुमारी
अभिनव धर्म
करुणा और क्रान्ति
एक ओंकार सतनाम
मैं मृत्यु सिखाता हूँ
शून्य समाधि
सम्बोधि के क्षण
बहुतेरे हैं घाट
मैं धार्मिकता सिखाता हूँ
धर्म नहीं
नये समाज की खोज
एक एक कदम
प्रार्थना के बीज
आकाश भर आनन्द
साधना के आयाम
सहजयोग : अभी और यहीं

सहज योग : प्रार्थना और आनन्द
सहजयोग : महाक्रान्ति
योग-सूत्र : अहंकार और समर्पण
योग-सूत्र : बुद्धों का मनोविज्ञान
योग-सूत्र : नींद, स्वप्न और बोध
योग सूत्र : समाधि के दो रूप
योग-सूत्र : एक वैज्ञानिक दृष्टि
योग-सूत्र : आंतरिक अनुष्ठान
योग-सूत्र : प्रज्ञा और समाधि
योग-सूत्र : सद्‌गुरु को समर्पण
ध्यान सूत्र : अन्तिम यात्रा
ध्यान सूत्र : एक अपूर्व अभियान
साधना पथ
प्रभु की पगडडियाँ
शिक्षा : नये प्रयोग
शिक्षा और विद्रोह
शिक्षा और जागरण
शिक्षा में क्रान्ति
भारत के जलते प्रश्न
धर्म और राजनीति
स्वर्णिम भारत
प्रेम है द्वार सत्य का
दिया बले अगम का
शून्यता है महामुक्ति
मुक्त गगन के पंछी
जीवन संगीत
सतगुर मिले ते उबरे
सबद भया उजियाला
हंसे खेले न करे मन भंग
सहजै रहिबा
उपनिषद-शून्य संवाद
एकमात्र उपाय : जागो
क्रान्ति सूत्र : साक्षी भाव
इक साधे सब सधै
भारत एक अनूठी संपदा
गीता : विज्ञान, कला, अध्यात्म
गीता : समस्त योगों का सार
गीता : मनोविज्ञान का
परम शास्त्र
गीता : कृष्णा का योग विज्ञान
भक्ति : परम प्रेम रूपा
भक्ति : विराट का अनुभव
भक्ति : शून्य की झील में
प्रेम का कमल
भक्ति : निराकार से एकाकार
भक्तिः जीवन रूपांतरण की कला
अस्वीकृति में उठा हाथ

नयी क्रान्ति की रुपरेखा
विचार क्रान्ति
गांधी पर पुनर्विचार
दिया अमृत पाया जहर
कुंडलिनी और तंत्र
कुंडलिनी जागरण और शक्तिपात
कुंडलिनी और सात शरीर
कुंडलिनी यात्रा
साक्षी कृष्ण और रासलीला
कृष्णाः साधना रहित सिद्धि
कृष्ण और हंसता हुआ धर्म
कृष्ण गुरु भी सखा भी
कृष्ण : जिज्ञासा खोज
उपलब्धि
ऐसी भक्ति करै रैदासा
दरिया झूठ सो झूठ है
जात हमारी ब्रहम है
सुखिया सब संसार
दुखिया दास कबीर
जित देखूं तित तूं
जोतहि जोत समानी
बोले शेख फरीद
सत भाषै रैदास
क्या मेरा क्या तेरा
मन लागा यार फकीरी में
शिव साधना
शिव दर्शन
निरगुन का बिसराम
लिखा लिखी की है नहीं
गुरु गोविन्द दोउ खड़े
हीरा पायो गांठ गठियायो
मेरे तो गिरधर गोपाल
राम नाम रस पीजै
राम नाम निज औषधि
दादू सहजै देखिए
नहीं जोग नहीं जाप
तेरा साईं तुज्झ में
आपुई गई हिराय
अस्वीकृति में उठा हाथ
नयी क्रान्ति
गांधी पर पुनर्विचार
हरि ॐ तत्सत्
ॐ शान्ति शान्ति शान्ति
ॐ मणि पद्म हुम
मनुष्य का स्वर्णिम भविष्य
आशो गाथा
ओशो के संग कुछ अनमोल क्षण

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

A.H.W.
Sameer Series

ओशो रजनीश

हम जी रहे हैं, हमारे चारों ओर फैला विराट अस्तित्व जी रहा है, लेकिन कभी इस चमत्कार के प्रति हमारे मन में कुतूहल नहीं उठता! कभी-कभी कोई बिरला व्यक्ति इस जगत के प्रति विस्मय भाव से भर उठता है। इसका रहस्य खोलने की जिज्ञासा उसके प्राणों को आग की तरह पकड़ लेती है। और वह अपने को लुटा देता है इस खोज पर।

रहस्य खुलता तो नहीं बल्कि और घना होता जाता है। और खोजते-खोजते अंततः खोजने वाला इस रहस्य में इस कदर समा जाता है कि खुद रहस्य बन जाता है।

और वह चलता-फिरता रहस्य जब भरे बाजार में आकर सोये हुए लोगों को जगाने लगता है तो नींद से अलसायी आंखें खोलकर वे नाराजगी से देखने की कोशिश करते हैं: कौन है यह? इसे क्या हक है हमें जगाने का? दिखता तो हमारे जैसा है, फिर भी बड़ा भिन्न है। लेकिन जहां तर्क हथियार डाल देता है, बुद्धि का सूरज डूब जाता है और मन की चिता जलती है, उस पार जाकर ओशो रजनीश जैसे सिद्धों की सृष्टि शुरू होती है। इसलिये अगर सच में ही ओशो रजनीश का परिचय पाना हो तो तत्काल अपने को पहचानने की यात्रा पर निकल पड़ना।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal